UNIVERSAL LIBRARY
OU_180697
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/S53An Accession No. G.H.203

Author शर्मा श्रीराम- 'राम'।

Title अन्तर्ज्वाला ।। 1936

This book should be returned on or before the date last marked below.

तरुण-साहित्य-मन्दिर की पहिली भेंट

# अन्तर्ज्वाला

लेखकः—

श्रीराम शर्म्मा "राम"

प्रकाशकः—

तरुण-साहित्य-मन्दिर, दिल्ली।

प्रथमवार : : १६३६

प्रकाशक—

तरुण-साहित्य-मन्दिर,

पनिहारी गली, तेलो-

वाड़ा, दिल्ली ।

* मूल्य सवा रुपया। *

मुद्रक—

अर्जुन प्रेस,

नया बाजार, दिल्ली ।

## यही क्यों ?—

लोग चाहेंगे कि मैं बताऊं। पर मैंने तो जो कुछ देखा और विचारा पाठक के सामने रख दिया है। पाठक का काम है कि वह इसमें अपनी दिल आजमाई करे। जंचे तो ठीक, अन्यथा लौट कर लेखक के मुंह पर दे मारे।

और

यह उपन्यास नहीं है। कह लें, वेश्या-जीवन की कुछ झांकियां हैं, बहुत दबी हुई, संकुचित-सी, क्योंकि हिन्दी में ज्यादा कहने की औकात कहां! यहां व्यभिचार और घासलेटी-साहित्य के फैलने का डर है। मैं तो हूं ही नया खिलाड़ी। पाठक को मेरी चीज पसन्द आयी तो फिर और…

अक्टूबर
१६३६

श्रीराम शर्म्मा "राम"

## —: उन्हीं चरणों में :—

जिनके हृदय आज बाजार के कोठों पर बैठ कर टूक टूक हो गये हैं।

# पहिला-परिच्छेद
## प्रथम खण्ड

हिमालय की पहाड़ियों की छोटी-छोटी खोहों में बसे जन-समाज का आधार-क्षेत्र प्रकृति ने इतना संकीर्ण और परतन्त्र बना दिया है कि अगर पत्थरों के दिल में आया तो उन दैव-इच्छा पर निर्भर रहने वालों को अनाज के कुछ दाने उगल दिये, अन्यथा कभी वह भी बन्द। और शायद उस हट्टे-कट्टे शरीर-धारी मनुष्य समाज में इतनी शक्ति भी नहीं कि अपने पुरुषार्थमय जीवन को पेश करके भी, दो रोटियां प्राप्त करने के साधन जुटा पावें! *

समय के उलट-फेर में गर्मी के बाद बरसात आयी। काले-काले बादल ऊँचे पर्वतों की गोद से निकल कर, जब इन लोगों की झोंपड़ियों के ऊपर आने प्रारम्भ हुए, तो पहाड़ी-स्त्रियों ने टोली-की-टोली में अपने घरों के आस-पास प्राकृतिक बने पथरीले पानी के कुन्डों को साफ करने का कार्य प्रारम्भ किया। यह इसलिये कि उनमें पानी भरेगा, और उनके पीने के काम आयेगा। कोई, अपने गोबर के पाथे कन्डों को छबड़ों में भरकर घरों में भरने लगीं, और बहुत-सी अपने मकानों की छत के दराजों को इसलिए ढूँढ कर बन्द करने लगीं कि बरसात का पानी न चुए।

रात के आठ का समय था। बादल एक-दूसरे से गुथ कर,

---

* नायक जाति। किताब में आगे भी इसी जाति की लड़कियों का सम्बन्ध कथित विषय से होगा, पाठक ध्यान रखें।

पहाड़ों के संघर्ष की तरह गरज रहे थे। बार-बार बादलों की ओट से निकल कर बिजली चमक रही थी और क्षण-भर में ही अदृश होजाती थी। उस नभस्थ पर खेलती हुई बिजली, इन सकाम और पानी से भरे बादलों की छाती पर इस प्रकार कूद कर खिलौड़ियां करने लगी, जैसे यौवन से भरी और इठलाती हुई कामिनी अपने अंग को तोड़ कर भैरव-राग अलापने के लिये तैयार हो गई हो।

अपने घरों में बैठी हुई युवा, और बूढ़ी स्त्रियां, बिजली की चमक पाते-ही सामने विशालकाय पहाड़ों के रूप को देखतीं, तो सर्वदा से पहाड़ों की गोद में पलते आये, और ऐसे भयानक नग्न-खंड पर अब तक बसते आये भी, इस गर्जन के साथ, बिजली के उघड़ते-ही, उनके दिल सन्न से रह जाते थे।

इसी समय एक छोटे-से ग्राम में आठ-दस आदमी एक छप्पड़ के नीचे बैठ कर बातें करते हुये हुक्का पी रहे थे।

एक आधी उम्र के आदमी ने बातों के प्रसंग को बदलते हुये कहा— "क्या तुम्हारी इच्छा है चाचा, अपनी बहन-बेटियों को बेचकर ही, हम इस साल की कंगाली को पूरा करें?"

अपने नम्बर पर हुक्के की नली को पकड़ते हुये, उस चाचा ने दोनों घोटों पर ठोडी रखे ही, सामने के अन्धकार में छिपे शून्य मैदान को देखा। वह जैसे-ही कुछ कहने के लिये तैयार हुआ कि जोर से बिजली कड़की। बिजली के लाल और भयानक रूप को देख कर, रामदीन चाचा और नम्र स्वर में बोला—"भैया नरायण, तुम इस मरते बूढ़े को क्यों नरक में घसीट रहे हो? आज हूँ, कल नहीं! क्या तुम समझते हो, मैं अब बाल पकाकर तुम्हें यह सीख दूँगा कि तुम अपनी लालियों (लड़कियों को) शहर में बजारू औरत का पेशा कमाने भेजो!"—गहरे हो आये काले बादलों की ओर देख कर वह फिर कहने लगा—"हां, अब इस मैदान की ज़मीन में इतनी शक्ति नहीं रही है कि यह तुम्हें दाना दे दे। हमने इसी से एक फसल में कई सालों के लिये दाना लिया था। पर अब यह रूठ गई है!"

—वह कहने लगा—"यह हमारा कितना बड़ा गाँव था। लेकिन भूख से तड़प कर सब स्वाहा हो गया!"—कहते हुये रामदीन की आंखें सुर्ख़ और अश्रुमय हो गईं।—फिर बोला—"नरायण, तुम्हीं तो मेरी कट्टो को जला कर आये थे। क्या भूल जाऊँ उसकी चिल्लाहट को! वह रोटी के टुकड़े बिना तड़प कर मर गई। आज भी हमारी औरतें घरों में बैठीं रो रही हैं। मैं फिर भी कहता हूँ, नरायण, या तो इनके खाने का प्रबन्ध करो, नहीं तो······"

बीच-ही में, रामदीन के पास बैठा सत्तू चौधरी बोला—"चाचा, तुम कहो, या नहीं, हमारे बच्चों की भूख कह रही है, अगर कुछ दिन के लिये लड़कियां चली जायँ तो डर नहीं है। वे फिर अच्छे दिन आने पर आजायँगीं।"

इस बात को सुन कर, जो व्यक्ति इन लोगों से अच्छे कपड़े पहने हुए, सत्तू चौधरी के पास बैठा सिगरेट पी रहा था, कहने लगा—"यही सोचकर, और गांव वालों ने अपनी लड़कियाँ भेजी हैं। तुम्हारी लड़कियों के लिए इस तरह का कोई बन्धन नहीं होगा कि जो सताई जाँय, या जबरदस्ती रखी जायँ।"—सिगरेट में दम भर कर, वह धुआं छोड़ता हुआ फिर बोला—"मैं भी तो वही हूँ, जो तुम हो। लेकिन चौधरी, समय सब-कुछ कराता है। अगर हम लोगों की हालत इस तरह न खराब होती, तो क्या अपनी लड़कियों को बाजार में बैठाना पसन्द करते! किन्तु ऐसे काल में, एक लड़की भेज कर, चार सौ रुपये मिलना कुछ कम रक़म नहीं है। यह चीज चाहे अच्छी न हो, पर भूखा भी नहीं रहा जाता, चौधरी!"

सत्तू चौधरी ने पूछा—"बोलो, क्या कहते हो रामदीन चाचा? अगर तुम तैयार हो, तो मैं अपनी बड़ी लड़की को भेज दूँगा।"

रामदीन ने उत्तर दिया—"चौधरी, मैं कुछ नहीं कहता। इन लड़कों से पूछ लो।"—कह कर वह वहां से उठा। उसके उठते ही सब अपने-अपने घरों की तरफ चल दिये।

सुबह के पांच बजे। अभी बादल उसी तरह पानी से लदा खड़ा

था। इसी समय नरायण अपनी बहन के पास आकर बोला—"मैं एक महीने में ही आऊँगा। घबड़ाना मत।"

इस बात को सुनने के साथ-ही, बहन ने अपनी आंख के पलक को भरी आंख पर डाल दिया। पानी की मोटी-सी बूंद उसकी चोली को छूती हुई, पत्थर पर गिर कर फैल गई।

और इसी समय, सत्तू चौधरी अपनी लड़की के साथ एक और विधवा-स्त्री की लड़की को लेकर नरायण के पास आकर बोला—"वह आदमी कहाँ है?"

नरायण ने उत्तर दिया—"अभी आता है। वह गंगा की लड़की को ला रहा है।"

इतने में वह व्यक्ति गंगा की लड़की को लेकर आया। उसने आते ही, अपनी जेब से नोटों की गड्डी निकाली और चार सौ, चार सौ को तीन जगह करके एक चार सौ नरायण को दिये, बाकी आठ सौ सत्तू चौधरी को देकर बोला—"खुश हो न? मैं फिर आऊँगा। अगर और लड़की मिले तो"—तभी वह चौधरी के कान के पास मुंह ले जाकर बोला—"मैं तुम्हें दलाली भी दूंगा, चौधरी!"

चौधरी ने कहा—"अच्छी बात है।"

स्टेशन पर आकर जब वह गाड़ी में सवार हुआ, तो चौधरी द्वारा लायी हुई, विधवा की लड़की के पास बैठक वह छूटते मन से बोला—"इसके दो हजार से क्या कम उठेंगे?" और जैसे ही, गाड़ी चली, वह उसे कनखियों से देखकर कहने लगा—"चीज़ है!—जो देखेगा, बे-भाव खरीदने के लिए तैयार होगा।"

जब गाड़ी स्टेशन को पार करके जंगल में पहुंची, तो डिब्बे में आदमियों की कमी के कारण उसने ओट लेते हुए लड़की के घुटनों को छूकर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

लड़की ने दबे और संकुचित भाव में उत्तर दिया—"रूपकौर।"

"रूपकौर?—खूब!"—वह अपने-आप बोला—"अर्थात् रूप का टुकड़ा!"—लड़की से कहा—"रूपकौर, तुम बड़ी रूपवती हो।"

लड़की और अधिक सिकुड़ने के साथ, इस बात को दबा कर सकुच गई। इतने में एक स्टेशन आया। काफी सूरज चढ़ गया था। जिस समय एक मिठाई वाला आवाज देता हुआ उस डिब्बे के सामने आया तो उसने दो रुपये की मिठाई और पूरियां लेकर आधी-आधी सबको दे दीं।

किन्तु ये लड़कियां, जो अपने घरवालों के कहने पर, इस अज्ञात व्यक्ति के साथ भागती हुई रेल में अज्ञेय-पथ की ओर जा रही थीं कभी कनखियों से उस पास बैठे आदमी को देखतीं, कभी डिब्बे के बाहर खुले मैदान को।

और ये चारों, जो न कुछ जानकर भी, इतना जान चुकी हैं, कि हमें घरवालों ने इसके हाथ बेच दिया है। जो हमसे वेश्या का पेशा करायेगा। जिस तरह भूखी बन्दरिया कहीं से रोटी का टुकड़ा पाकर अपने किसी पिछले दिन के सताये जाने की याद के साथ, क्रूर और जवानी में भरे हुए बन्दर के दूर बैठे रहने पर भी, उसकी घुड़की को देखकर डर रही हो, अथवा, वह उसी भय के साथ, अपनी रोटी को जल्दी २ मुंह के अन्दर रखने को चेष्टा कर रही हो, परंतु जैसे वह फिर बन्दर द्वारा पकड़ ली गई हो। और उसी कातर और दीन-स्वर में चीख उठी हो।—ठीक इसी दशा के अनुरूप इन लड़कियों की स्थिति थी कदाचित रेल पटरी से गिर जाती, या किसी लम्बी नदी के पुल पर चलती हुई पुल के टूटते ही पानी में गिर पड़ती, तो ये लड़कियां डूब-उतरा कर भी, इस आदमी से दूर भागने या मर जाने की चेष्टा करतीं। पर जैसे बन्दरिया बन्दर के पंजे से निकलने के लिए पास खड़े आदमी से कोई सिफारिश नहीं कर सकती, इसी तरह डिब्बे में बैठे हुए अन्य मुसाफिरों की तरफ इन लड़कियों में देखने की भी शक्ति नहीं थी। वह आदमी, जो उनका भाग्य-विधाता बनकर उनके बीच में आ बैठा था—कभी सिगरेट से धुआं निकालता, और कभी पास बैठी किसी लड़की के पहाड़ी-लाली को लिए मुंह पर झुक जाने की इच्छा करता।

रात भर यह लड़कियां कुछ सोयीं, कुछ जागीं। पांच बजते ही, वह व्यक्ति खड़ा होता हुआ बोला—"चलो, नीचे उतरो—स्टेशन आ गया।"

# दूसरा अध्याय

पञ्चमजार्ज का राज्य-भिषेक होने का समय था। जिस तरह अमीर और राजाओं का सम्राट के सामने प्रस्तुत होकर अभिवादन करना आवश्यक और राज्य-नियम के अन्तर्गत था—उसी तरह, दैहिक और नैतिक जीवन को बेचने वाली ये नारियाँ भी, विशेष रूप से झुण्ड-के-झुण्ड में नगर के प्रत्येक स्थान में आ बसीं।

यह भी अत्युक्ति नहीं कि जिस जगह राज्य-प्रबन्ध में अतिथि ठहराये गये, वहां की भीड़ में एक ऐसा समुदाय भी प्रत्येक तम्बू के अन्दर झांकता फिर रहा था कि जो इन नारियों के मोल-तोल की जिम्मेदारी को लेकर, ग्राहकों की टोह में था।

दरबार लगते-लगते बाजार और गलियों में, जो विशेषरूप से मोटरें, बग्घियां और किराये के तांगों का जमघट दीख पड़ता, वह इस बात को स्पष्ट कर रहा था कि बादशाह की इस ताजपोशी के समय, भले ही, और व्यवसायियों को अधिक लाभ न हो; पर ये शहर में जगह-जगह से आयी नारियां, दिन और रात के चौबीसों घण्टों में इतना भी अवकाश नहीं ले पातीं कि वह जरा अकेले में बैठ कर आराम की सांस ले लें।

इतिहास का कहना है कि रानी मल्का के समय से पूर्व, नगर में कुछ नारियों को छोड़कर आज की तरह, नारियां नहीं बसी थीं। हाँ, कुछ भटियारिनें थीं। जो मुसाफिरों को ठहरा कर उसके मनोविनोद के सामान एकत्र करती थीं।

वैसे ब्रिटिश-राज्य के जमते-ही, इन नारियों का प्रादुर्भाव अधिक रूप में हुआ और आज एक सदी बाद, पञ्चम-जार्ज के सिर पर, ताज रखने की घड़ी आते-आते, ये नारियां भी न जाने देश के किस-किस कोने से निकल कर, अपने रूप की पिटारी को बाजार के बीच में खोलने के लिये तैयार हुईं।

नगर में प्रसिद्धि-प्राप्त दुअन्नी, जो आज पूरी मालकिन बन कर

अपने व्यवसाय को चला रही है, जब कभी वह खुश होती है, तो अपने ग्राहकों को सुनाती है, हम पहले बहुत मालदार थीं। ग़दर में सबसे अधिक हम ही लूटी गयीं। उसका यह कहना असत्य भी नहीं था। उसकी सुन्दर मा शहर में एक ही थी। उसका रूप एक ही था। दुअन्नी इस बात को बड़े तपाक से कहती—"मेरी मा, मेवाड़ के किसी खंड में पैदा हुई थी। वह अपने माता-पिता द्वारा घृणा के साथ, रात की अन्धियारी में कूड़ी पर फेंक दी गई थी, क्योंकि वह लड़की थी। भला, पिता किसे अपना दामाद बनाता! और उस कूड़ी पर फेंकी गई मेरी मा को किसी राहगीर ने लाकर इस शहर की भटियारिन के हाथ पांच रुपये में बेच दिया।

दुअन्नी अपनी मा की इस उत्पत्ति कथा को न केवल लोगों को सुनाती, अपितु, यह कथा उसने अनेक बार अपनी लड़कियों से भी कही।

पर दुअन्नी की मा ने जो सम्पत्ति अपने जीवन में एकत्र की, गदर की चञ्चल और खून जैसी लाल घड़ी में, वह उसकी अच्छी तरह हिफाजत न कर सकी। और जब वह धनहीन होकर, जीवन के समूचे और अनजाने दिनों पर विचार करने बैठी तो यह दुअन्नी लड़की उसके सामने थी। जहां उसके मनस्वी-संस्कारों के साथ इस पेशे के प्रति घृणा थी—संसार की ओर शून्य और पथरायी आंखों से देख कर, दुअन्नी के बड़े होते ही, उसे नाच-गाने की विद्या का अभ्यास कराना शुरू किया।

अभी दरबार होने से दो मास पूर्व दो आदमी दुअन्नी के कोठे पर आये। उसकी मां अब नेत्रहीन, रक्तहीन और आत्म-हीन होकर, जीवन की अन्तिम घड़ी की टोह में चारपायी पर पड़ चुकी थी।

जो आदमी दुअन्नी के कोठे पर आये, उनमें एक मुसलमान था और एक हिन्दू। किन्तु पोशाक दोनों की एक थी। एक-ही बात। और दोनों का एक ही तर्ज। केवल नाम में भेद था।

दुअन्नी ने दोनों को कमरे में बिठा कर पान लगाने शुरू किये। तब पान लगाते हुए, दुअन्नी ने पूछा—"आपका दौलतखाना कहां है?"

मुसलमान व्यक्ति ने उत्तर दिया— "मैं यहीं का हूं। आप पहाड़ के रहने वाले हैं।" फिर पूछने लगा।—"आपके मिजाज तो अच्छे हैं, बाई जी ?"

"आपकी मेहरबानी है।"—कहते, दुअन्नी ने दो पान के बीड़े तश्तरी में रखकर उनके सामने पेश किये।

पान खाकर मुसलमान ने पूछा— "दरबार हो रहा है, बाई जी। सुनते हैं, बड़ी रौनक होगी।—कहिये, आपने कोई तैयारी नहीं की ?"

दुअन्नी बात के अभिप्राय को न समझ कर भी, उत्तर देने लगी—"क्या तैयारी की जाय, जिसे गाना सुनना होगा, आयेगा ही।"

उसने फिर पूछा—"तो क्या अकेले ही कमाना सोचा है ? आपके पड़ोस की बिब्बो और चवन्नी ने तो आठ-दस लड़कियां रखने का विचार किया है।"

दुअन्नी ने इस बात को सुनते-ही, आश्चर्य और घृणा-व्यंजक भाव प्रकट किया। माथे में सलवट डाल कर बोली-"ठीक है ! किन्तु मैं क्या करूँगी। जिन्हें यह रोजगार शोभा देता है, वह करें।"

मुसलमान शान्त नहीं हो गया। वह फिर कहने लगा— "बाईजी, हरेक आदमी अपनी धन-दौलत में तरक्की चाहता है। आप भी क्यों न ऐसा कीजिये ? दरबार का मौका है। यह समय आपको जिन्दगी भर के लिये कमाई पैदा कर देगा। कम-से-कम आपके यहां भी तो आठ लड़कियां हों ?"

दुअन्नी ने कहा—"नहीं, नहीं, मुझे लड़कियां नहीं चाहियें। यह सौदा औरों को ही मुबारिक रहे। और..."

"कमाई बुरी चीज नहीं है, बाईजी !" वह बीच ही में बोला— "जब समय आयेगा और आपके कोठे के आस-पास लोगों की भीड़ होगी, तब आपको हाथ बांधे बैठे क्या भला लगेगा ?"

इस कमाई की मीठी मुसकान को पीकर दुअन्नी ने मानो उसे थूकने की झूठी चेष्टा की। बोली—"जिन्दगी, दरबार के ऊपर नहीं है। पैदा करने वाला काट-ही देगा।"—साथ-ही, उसी क्षण, दुअन्नी

ने उस दृश्य की भी कल्पना कर डाली, जो दरबार जैसे समय पर प्रत्यक्ष हो उठेगा।

आगन्तुक जैसे दुअन्नी का रुख पा रहा था। वह फिर बोला—"हम आपसे ज्यादा नहीं कहेंगे, बाईजी! यदि आपको पसन्द हो तो कीजिये। अपने पड़ौसियों की तरह लड़कियां रखने की इच्छा हो, तो यह मेरे दोस्त पहाड़ के रहने वाले हैं, जिनके हाथ में यह काम है। आप ही ने कई कोठों को, किसी को चार, किसी को आठ, और किसी को पन्द्रह-बीस तक लड़कियां देने का वादा किया है।"—उसी क्षण उसने अपनी जेबसे कुछ फोटो निकाल कर दिखाते हुए कहा—"अभी इतनी और खास लड़कियां बची हैं ये सब नाच-गाने वाली शरीफ लड़कियों के फोटो हैं। हमें आपका भी ध्यान था। इसीलिये एक कोठे पर, इन लड़कियों की मांग होने पर भी, हम इन्हें वहां नहीं दे सके हैं। ये समझदार लड़कियां है।"—कहते हुए उसने वे फोटो दुअन्नी के सामने रख दिये।

दुअन्नी ने देखा, फोटो से किसी की उम्र पन्द्रह साल की, किसी की बीस, और किसी की तेरह या चोदह साल। इस तरह सब फोटो देख कर उसने कहा—"ठीक है।"—क्षणेक रुक कर फिर बोली—"साहब, मेरी तो तबियत नहीं करती, कि इन लड़कियों को अपने यहां रखकर, गाना गवाऊँ। और अपना घर भरूँ!"

दूसरा व्यक्ति जो अब तक शान्त बैठा था, दुअन्नी के रुकते ही बोला—"यह सौदा आपके घाटे का नहीं है, बाईजी! दरबार के बाद आप हमें इनाम दीजियेगा। देखिये तो, आपके घर में कितनी दौलत आ पड़ेगी।"

तभी मुसलमान ने कहा—"बाईजी, लड़कियों को रखना, या न रखना, आपकी मर्जी पर है। किन्तु यह सुभीता है, बाई जी, अपनी पसन्द की लड़की ले सकोगी। रखनी जरूर-ही होंगी। फिर न जाने कैसी मिलें।"—तब वह चलने के लिये खड़ा होता हुआ बोला—"अब इजाजत दीजिये। आप सोच लें। मैं फिर आपकी खिदमत में हाजिर होऊँगा।"

इसके बाद दोनों व्यक्ति चले गये। उसी समय जब दुअन्नी छज्जे

पर आयी, तो पास की उसकी पड़ौसिन ने पूछा— "कितनी लड़कियां लीं, दुअन्नी ?"

दुअन्नी ने चौंक कर पूछा—"तूने कैसे जाना ?"

उसने कहा—"वाह ! अभी तो उतर कर आदमी गये हैं। ये मेरे यहां भी आये थे। मेरी अम्मा ने भी चार लड़कियां ली हैं, दुअन्नी।"

दुअन्नी ने अपने आवेग को रोक कर पूछा—"कितने में ?"

"दो हजार में।"

"दो हजार में !—चार लड़कियां !" और फिर जरा रुक कर धीरे-से बोली— "चार लड़कियों का मोल दो हजार !"...

तभी वहां से हट कर दुअन्नी ने अपनी मा के पास आकर कहा—"अम्मा, दरबार होने के समय हरेक के कोठे पर लड़कियां बढ़ रही हैं। मैं भी दो-चार रख लूँ ?"

मा ने कहा—"तू जान बेटी।" और वह दुअन्नी की मा जरा रुक कर सांस लेती हुई फिर बोली—"लड़कियाँ रखकर क्या करेगी, पाप की कमाई टिका नहीं करती बेटी !"

किन्तु दुअन्नी को मा की बात से सन्तोष नहीं हुआ। दूसरे दिन वही दोनों व्यक्ति फिर दुअन्नी के पास आये। उनमें से एक ने आते ही पूछा—"क्या तय किया, बाईजी ?"

दुअन्नीने अनमने और अविश्वास लिये स्वरमें कहा—"देखूँ वे फोटो।"

फोटो सामने रख दिये गये। दुअन्नी उन्हें इस प्रकार देखने लगी, जैसे वह कोई पासा हाथ में लेकर सट्टा या जुआ खेलने के लिए तैयार हो रही हो। उनमें से दो फोटो निकाल कर बोली—"इनका क्या दाम होगा ?"

"तीन हजार !"

"तीन हजार ?—नहीं भई, एक हजार दे सकती हूँ।"

"भला कहीं इतना फर्क होता है, दुअन्नी बाई !" मुसलमान कहने लगा—"लेने-देने की बात करो। जरा लड़कियों की उम्र और शक्ल-सूरत भी तो देखो।"

"बस, एक हजार दे सकती हूं।"

"अच्छा खैर, ढाई हजार देना।"

लेकिन दुअन्नी कच्ची कौड़ी से नहीं खेली थी। बोली—"आपके मिठाई और पान के पैसे और दे सकती हूं। भाव में इस रकम से ज्यादा नहीं।"

"तुम्हारी मर्जी, बाईजी! दो हजार तो मिल रहे हैं। इन लड़कियों के तो बहुत ग्राहक।"

"सोच लो। अगर मंजूर हो, तो लड़कियाँ ले आना, मैं रुपये दे दूंगी।"

"जी नहीं। इतने पर नहीं हो सकता।" दूसरे व्यक्ति ने कहा।

मुसलमान कहने लगा—"चलो जी।"—कह कर वह खड़ा हो गया।— तभी दुअन्नी से बोला—"बाई जी, और सोच लो। हम तो तुम्हें माल दे हो जायेंगे, पर तुम भी याद करोगी। लेने-देने की बात में इतनी कन्जूसी नहीं किया करते।"

दुअन्नी ने कहा—"यह सौदा मैं अपनी तरफ से कर रही हूं। मेरी मा की तो मर्जी भी नहीं। बस सो रुपये और दे सकती हूं।"

मुसलमान चलने का उपक्रम करता हुआ बोला—"अच्छा, मैं आखिरी फैसला करूं, देखो मान लेना बाई।"— कह कर उसने दुअन्नी के कान में कहा-"डेढ़ हजार।"

दुअन्नी बोली—"नहीं, नहीं!"

इस पर वह चलता हुआ बोला—"तुम्हें माल ही नहीं लेना बाई।"

जब दोनों जाने की तरफ चले, पीछे से दुअन्नी ने कहा—"अच्छा हजार, दो सौ।"

यह सुनकर वह मुड़ पड़े और उनमें से एक बोला—"अच्छा बाई, सो और बढ़ा, सौदा तुम्हारे नाम होता है।"

दुअन्नी ने कहा—"गलत है! मुझे नहीं चाहिए।"

तभी क्षण भर दोनों ने परस्पर बातें कीं। मुसलमान बोला—"अच्छा बाई, यह दोनों लड़कियां तुम्हारे नाम हुईं। लो, यह दोनों के फोटो।"

दुअन्नी ने पूछा—"लड़कियां कब आयेंगी ?"

दूसरे ने कहा—"तीन चार दिन में।"

बादशाह की ताजपोशी होने से कई दिन पूर्व ही से शहर की अभूतपूर्व सजावट के साथ, बाजारों में इतनी भीड़ रहने लगी कि आदमी का निकलना भी दुसाध्य हो गया। इसी भीड़ में जहां दो-चार बाबू लोग किसी कोठे की ओर देख कर, आपस में कुछ बातें करते कि उसी समय कोई-न-कोई आदमी उनके सामने आकर पूछने लगता—"गाना सुनियेगा, बाबू ?"

मानो वे बाबू इस बाजार में इसी उद्देश्य से आये हों। वे तुरन्त कहते—"हां, हां, चलो।"

लेकिन अगर गायिका उन्हें सुन्दर दीख पड़ती तो वह वहां पर बैठते। यदि वह पसन्द न करते, तो कुछ देर बैठकर चल देते। किन्तु उन्हें लाने वाला आदमी जब चलता, तो बैठी हुई उस जगह की बुढ़िया मालकिन से कहता—"पैसे याद रखना। चार के दो।"—अर्थात् चार आदमियों की दो रुपये दलाली।

बुढ़िया कहती—"हां, हां, तुम फिक्र मत करो।"

इस प्रकार ये दलाल सी० आई० डी० के सिपाही की तरह राह चलते प्रत्येक बाबू को नीचे से ऊपर तक देखकर उनके पीछे लगते। और मौका पाते-ही वह उनके सामने होते।

लेकिन बहुधा वे पिट भी जाते। पर ऐसे समय, ये अपने को किसी के हाथों पिटता देख कर, उसी तरह शान्त होकर एक ओर को खिसक जाते, जिस प्रकार चोर, चोरी पकड़ने पर शर्माता हुआ भाग जाना चाहता हो।

ऐसे व्यक्ति किसी ऊँची दुकान की दलाली नहीं कर पाते। अमीर और राजाओं तक जाने वाले, वे बड़े कोठों के दलाल हैं। उन्हें अपने कार्य की सफलता के लिये, राजा साहब के प्राइवेट सेक्रेटरी को खुश करना पड़ता। यहां हजारों की बातें थीं।

इस प्रकार दरबार की रौनक देखने के लिये, देश का कोना-कोना

आ इकट्ठा हुआ। रेल की स्पेशल ट्रेनों में देश के रईस, नवाब और जमींदार बैठ कर आ रहे थे—उन्हीं में इन नारियों का समुदाय भी प्रत्येक डिब्बे में बैठा हुआ, इस प्रकार इस नगर की ओर आ रहा था, मानो इन्हें भी किसी पर्व का अनुष्ठान करना अनिवार्य हो गया था।

## तीसरा परिच्छेद

पूर्व-परिचित व्यक्ति, जब लड़कियों को लेकर, स्टेशन से शहर में आया, तो वह बस्ती के भिचे और तंग खण्ड में आकर, एक मकान के सामने गाड़ी से नीचे उतरा। जब वह लड़कियों सहित मकान के अन्दर गया, तो पहिले ही, सामने एक बुढ़िया पड़ी। बुढ़िया इस आदमी को देख कर जल्दी से उठती हुई बोली—"आ गये बाबू, बहू ऊपर हैं।"

किन्तु उसने बुढ़िया की बात को अनसुनी करके, हुक्म के स्वर में कहा— "इन लड़कियों को ऊपर ले जाओ।" कहते वह स्वयं नीचे कुर्सी पर बैठ गया।

उसके आने की सूचना पाकर, एक अठारह बीस साल की स्त्री ने सीढियों पर से ही उतरते हुए कहा—"आगये आप? खुदा हाफिज!"

उस व्यक्ति ने पूछा—"लडकियां पसन्द हैं?—चार-चार सौ की हैं।"

"लड़कियां अच्छी हैं।"—स्त्री ने कहा—"एक तो बहुत ही पसन्द है।—सब की एक कीमत?"

"एक!"—उसने कहा—"इनको स्नान कराओ। जंगली हैं। गुलाबी साड़ियां पहिना कर तैयार करो। मैं फोटोग्राफर को लाता हूँ।" कहते वह कुर्सी से खड़ा हुआ।

"इतनी जल्दी?"—एकाएक स्त्री ने कहा—"जरा आराम तो करो।"

"आराम का नहीं, यह कमाई का समय है। आराम करने के लिये तो जिन्दगी पड़ी है।" कहता हुआ वह दरवाजे की ओर बढ़ चला।

डेढ़ घंटे के बाद जब वह लौटा, तो उसके साथ फोटोग्राफर था। चार लड़कियों के अलग अलग प्लेट पर फोटो लिये गये। हरेक के बदन पर बढ़िया गुलाबी साड़ी। मुंह पर हल्की-सी लाली लिया पाउडर।

होठों पर इस प्रकार का लाल रंग कि जानो ये लड़कियां अभी-अभी पान खाकर बैठी हों।

इन कामों से छुट्टी पाकर, वह ऊपर कमरे में गया स्नान और भोजन करके नयी पोशाक बदली। जब फिर बाजार को चला, तो चारों फोटो उसने अपने कोट के भीतर की जेब में रख लिए।

बाजार में चलते-चलते वह एक गली से मुड़ कर, दो तीन गलियों को पार करके एक ऐसे मकान में घुसा, जिसका दरवाजा तो बहुत भद्दा था, लेकिन अन्दर आठ-दस कमरे इस तरह सज रहे थे, जैसे वह किसी रईस की आरामगाह हो। भीतर जाकर वह जैसे ही आगे बढ़ा, एक कमरे में दो-तीन लड़कियों के पास बैठी बुढ़िया ने उसे देख कर कहा—"ओ', आप हैं!—आज किधर से रास्ता भूल पड़े, सोहन बाबू।" कहते हुए वह इस प्रकार उसे दूसरे कमरे की ओर ले गयी, निश्चय ही, वह उसका खास आत्मीय हो।

सोहन ने पूछा—"कहो बाई, काम-काज का क्या हाल है?"

"कुछ अच्छा नहीं।"—वह उत्तर देकर बोली—"तुम सुनाओ, अब कोई अच्छी लड़की नहीं दिलाओगे?"

"क्यों नहीं?"—सोहन ने कहा— "भला, हमारा और काम ही क्या है? कितनी लड़कियां चाहिएं?"

"एक, या दो।—मगर हों सुन्दर।"

सोहन ने जेब से दो फोटो निकाले। उन्हें बाई के सामने रख कर बोला—"यह देखो, ताजी और सुन्दर चीज।"

ध्यान से फोटो देख कर बुढ़िया ने पूछा—"फोटो से तो रंग-ढंग अच्छे हैं। एक के क्या दाम होंगे?"

"लेने-देने के, या मोल-तोल के?"

"नहीं एक।"

"एक हजार।"

"एक हजार नहीं। ठीक कहो, हमारा-तुम्हारा पुराना मामला है।" साथ-ही तभी बाई ने आवाज दी—"अरी, एक लड़की इधर आना।"

आवाज सुनते ही एक लड़की बुढ़िया के सामने आकर खड़ी हुई।

बुढ़िया ताली फेंक कर बोली— "जरा गिलास और बोतल तो निकाल। आज यह बहुत दिन में आये हैं। एक लड़की से कह दे पान लगा ले।"— फिर सोहन से बोली—"ठीक कहो, सोहन बाबू!"

"ठीक?"—वह सोचने का उपक्रम करके बोला—"आठ सौ से कम नहीं।"—जब उसके सामने गिलास में शराब उडेल कर रखी गई, तो एक साथ समूचे गिलास को पीकर कहने लगा—"तुम समझती हो, मैं ज्यादा मुनाफा खा रहा हूं। सात-सात सौ में खरीदी हैं। वहां से यहां तक लाने का खर्चा, आदि बातों को मिला कर, मुझे मुश्किल से पचास बचते हैं।"

"सच कहते हो?"

"अरे, सच!—अगर झूठ का सौदा करना होता, तो तुम्हारे पास आने की क्या जरूरत थी? मेरे तो बंधे ग्राहक हैं। इन्हीं से साल-भर में कुछ कमा लिया, या खो दिया।"

कुछ सोचकर बुढ़िया बोली–"अच्छा तो इन दो लड़कियों का सौदा मंजूर। मगर रुपये अभी आधे मिलेंगे।"

"आधे नहीं। मुझे जरूरत है, पूरे ही दो।"

"पन्द्रह दिन बाद।"

सोहन स्वीकृति में मौन रहा। बुढ़िया ने दूसरे कमरे से आकर कहा—"आठ सो यह लो।"

वह नोटों को लेता हुआ बोला—"लड़कियां शाम को आजायेंगी।" और जेब में नोटों को रखता हुआ कहने लगा—"लड़कियां नयी हैं। पहले प्यार से काम लेना।"

बुढ़िया जरा हँस कर बोली–"हां, हां, कोई शिकायत नहीं होगी।"

जब सोहन चलने लगा, तो वह कहने लगी—"कभी-कभी चक्कर लगाया करो ना?"

सोहन जैसे-ही कमरे से बाहर निकला कि एक लड़की उसके सामने पड़ी। उसे देखकर पूछने लगा—"कहो, निरी, अच्छी हो ना?"

लड़की जो सोहन को देख कर-ही उससे मिलने की प्रतीक्षा में खड़ी थी, बात के उत्तर में बोली—"जी, हां, मेहरबानी है।" साथ ही उसने पूछा—"आप हमारे गांव गये थे?"

सोहन ने तुरन्त कहा—"हां, गया था। सब अच्छी तरह हैं। तुम्हारी राजी-खुशी मैंने कह दी थी।" यह कहते हुए वह आगे चला।

लेकिन यह सोहन की गलत बात थी। न तो वह उस लड़की के गांव ही गया था और न किसी की बातचीत ही की। लेकिन इन लड़कियों के व्यवसाय का पृष्ठपोषक यह सोहन, जैसे इन लड़कियों से इस प्रकार की बातें करना अनिवार्य समझता था। राह में चलता हुआ वह अपने-आप बोला—"इस निरी की एक मास में ही मुंह की लाली उड़ गई!"...

वहां से चल कर, सोहन घर पहुंचा। किन्तु आध घन्टे के बाद ही दो लड़कियों को लेकर, वह एक कोठे की ओर चला। जहां इन दो लड़कियों को बेच कर, सोहन ने इतना धन कमा लिया कि जो ऐसे फिजूल खर्ची के लिए, कई मास तक पर्याप्त था। रूपकौर नामक अकेली लड़की को ही, उसने पांच हजार में, और दूसरी को तीन हजार में बेचा। खरीदारिन बाजार की प्रसिद्धि प्राप्त चवन्नी बाई थी।

जब सोहन दोनों लड़कियों को चवन्नी के हाथों देकर नीचे आया तो पुलिस के हेड कान्सटेबिल ने सामने पड़ते-ही सोहन को ललकार कर कहा—"खबरदार सोहन! तुम भागने नहीं पाओगे। थाने में चलो, दरोगा जी बुला रहे हैं।"—तभी वह पास आकर बोला—"बदमाश, औरतों को बेचकर अपनी जेब भरता है!"—कहते उसने सोहन का हाथ पकड़ लिया।

मानो, सोहन-जैसे चतुर, और अपने व्यवसाय में निपुण व्यक्ति के लिए, ऐसी बातें सुनना, और पुलिस वालों की आंखें देखना कोई विशेष बात नहीं थी। वह मुसकरा कर बोला—"दिवानजी, इतने तेज क्यों?—मैं साथ चलता हूं। लेकिन एक बात सुनो।"

सिपाही ने आंखें घुमाकर पूछा—"क्या कहते हो?"

"यहाँ नहीं, जरा ओट में चलो।"—वह पास की गली की ओर इशारा करके बोला—"आओ, गली में खड़े होंगे।"

गली में जाकर, उसने जेब से बीस रुपये के नोट निकाल कर कहा—"यह भेंट लो। कहीं इस तरह शोर मचाया करते हैं! तुम्हारा हक तो मैं पहले-ही जेब में रखता हूं।"

अपने पूरे महीने का वेतन देखकर सिपाही ने पूछा—"और दरोगा जी को? वह तुम पर बहुत नाराज हैं, सोहन! तुम एक महीने से उनसे नहीं मिले हो।"

"दरोगा जी से कहना, मैं एक घन्टे में हाजिर होता हूं।" सोहन उत्तर देकर बोला—"तुम तो खुश हो न? अब इस तरह कभी न बोलना।"

"अच्छा, आज आना जरूर!"—मानो उसका मान और प्रभुत्व सोहन के बीस रुपये ने छीन लिया था।

पटरी-पटरी घर की ओर जाते सोहन ने कहा—"खूब! जरा-सा टुकड़ा डालने पर पूंछ हिलाने लगे! न जाने भूकना किधर चला जाता है!"

किन्तु जब सोहन थाने में पहुंचा, तो दरोगा के सामने, सलाम करके इस प्रकार खड़ा हुआ कि जैसे वह अपने गहरे दीन-भाव को प्रकट करना चाहता हो। पास खड़े सिपाही के हाथ में मिठाई की टोकरी देकर बोला—"इसे दरोगाजी के घर दे आओ।"

सिपाही के जाते-ही जेब से पांच सौ रुपये के नोट निकाल कर मेज पर रखता हुआ बोला—"बड़ा सख्त हुक्मनामा भेजा, दरोगाजी!"

मानो दरोगा अपनी बात को जबरदस्ती पकड़े हुए था। रुपयों को देख कर बोला—"मैं तुम्हारी जितनी वकत करता हूं सोहन, तुम उतने ही सिर पर चढ़ते हो!"—सामने पड़े रजिस्टर की ओर इशारा करके कहने लगा—"तुमने इस महीने में कितनी लड़कियां बाजारमें बैठाई हैं, याद है? मेरी रिपोर्ट तो सौ-ही बताती है, पर दरअसल तुमने क्या डेढ़-दो-सौ से कम बैठाई होंगी!—बदमाश! और फिर

कहते हो, दरोगा नाराज होता है ! बच्चू अगर मेरी जगह दूसरा होता, तुम्हें जन्म भर के लिये जेलखाने भिजवा देता ।"

सोहन ने जवाब दिया—'तो दरोगाजी, हमें भी तो आपसे कोई शिकायत नहीं है । रहा लड़कियों का मामला, मैं अकेला तो करता नहीं, इस पेशे के तो और भी आदमी हैं । मुश्किल से दो महीने में पचास लड़कियां ला पाया हूं । सच कहता हूं दरोगाजी, मैं तो इस पेशे को करके बदनाम हूं । मुफ्त का झंझट है । इधर आपकी घुड़कियां और उधर कुछ मिलता नहीं । लेकिन आपकी खिदमत करने के लिये तो मैं हमेशा हाजिर हूं ।"

दरोगा ने रुपयों की तरफ इशारा करके पूछा—"यह कितने हैं ?"

"पाच सौ ।"

"सिर्फ पांच सौ ! इन्हें उठा लो, मैं अपनी कार्रवाही करूँगा ।"

सोहन जेब में पड़े हाथ को निकाल कर दो सौ और रख कर बोला—"दरोगाजी, आपको अख्तियार है, कुछ करिये ! मैं हाजिर हूँ । जी चाहे अभी हवालात में बन्द कर दीजिये । लेकिन जब आपका पूरा हक मिलता है, फिर भी इतनी नाराजगी ? यह सात सौ जेब में रखिये ।"

इस पर दरोगा मौन रहा । सोहन बोला—"अच्छा, इजाजत दीजिये, मैं दो रात से सोया नहीं हूं ।"

इस बार दरोगा रुपयों की बात भूल गया । तभी बोला—"इतनी जल्दी सोहन ?" उसने रुपयों को जेब में रख कर पूछा—"जाओगे ?—अच्छा जाओ !" दरोगा अपनी बात को रोक गया था । किन्तु, उस कामी और लालची पुरुष में जो भाव उदय हुआ, सोहन से छिपा नहीं रह गया था ।

साथ ही, वह सोहन, जो महीने का अन्त आते-आते, कई हजार की रकम को पानी की तरह बहा कर, इस पेशे के प्रति संलग्न था, क्या जाने, उसके हृदय में दया और ममता नाम का भी कोई जीव था, या नहीं !

## उन्नीस

# चौथा परिच्छेद

अब दरबार के कई साल बाद की बात आती है ।

एक रात को नौ बजे दुअन्नी के कोठे पर चार बाबू आये । इनमें एक सरदारजी, जवान, खूबसूरत एक अँग्रेज इन्जीनियर के असिस्टेन्ट । दूसरे विलायत से लौटे एक कालेज के प्रोफेसर । तीसरे एक अमीर खानदान के शौकीन मिजाज बाबू और चौथे ऐसे मालूम होते जैसे उन्हें वेश्या-गृह में आने का पहला ही मौका मिला हो । बड़े संकुचित भाव से वह कमरे में आकर मसनद के सहारे बैठ गये । पिछले साथी को छोड़कर बाकी तीन नवयुवकों की बातों से स्पष्ट लगा, वह दुअन्नी के नये ग्राहक नहीं थे । पर युवक इन्जीनियर ने कमरे की सजावट को इस रूप में देखना शुरू किया, जैसे वह उनमें किसी नवीन आकर्षण का अनुभव कर रहा हो ।

इन्जीनियर अपने दो साथियों से परिचित था, तीसरे से नहीं । अपने खुले स्वभाव से उसने इतनी जल्दी काम लिया कि बैठने के दो मिनट बाद ही प्रोफेसर से पूछ बैठा—"मि० सुरेशचन्द्र, अपने मित्र का परिचय तो दीजिये ?"—उसका यह लक्ष्य चौथे व्यक्ति के लिए था ।

प्रोफेसर बोला—"आप मेरे पुराने कालेज के सहपाठी हैं । वैसे बड़े ही भावुक और सुधारवादी विचार वाले—पूरे सोशलिस्ट । नाम है बाबू नरेन्द्रनाथ एम-ए० ।"

इन्जीनियर उस युवक की ओर मुँह करके बोला—"आपके दर्शन हुए, धन्यभाग ।"

तभी नरेन्द्र ने प्रोफेसर को लक्ष्य करके कहा—"मगर यह इकतर्फा डिग्री क्यों, प्रोफेसर ?"

प्रोफेसर ने मुसकरा कर कहा—"भई, आपका क्या परिचय लोगे ? खुद ही जान लोगे । आप इन्जीनियर हैं । नाम है सरदार खड्गसिंह । आपका योरोप भ्रमण बड़ा-ही मनोरंजक है । वैसे तो तुमने देख ही लिया कैसे हैं, खुले दिल वाले इन्जीनियर साहब !"

तभी दुअन्नी ने पर्दे से निकलते ही कहा—"ओ', आप लोग हैं !"

मानो वह बड़े अज्ञात भाव से इन युवकों को बता देना चाहती हो, हमें तुम्हारे आने का पता-ही न था।

सरदार की ओर लक्ष करके दुअन्नी ने पूछा—"क्या खिदमत की जाय, सरदारजी ?"—कहते उसने नौकर को आवाज दी.।

आवाज सुनते ही एक चालीस वर्ष का बूढ़ा उसके सामने आकर खड़ा हुआ। दुअन्नी ने कहा—"लड़कियों से कहो यहां कमरे में आयें, आज ये बाबू लोग आये हैं, जाने कितने दिन बाद !"

दुअन्नी की यह बात सुनते ही जो नरेन्द्र अलमारी के ऊपर टंगी हुई एक रंगीन तस्वीर देख रहा था, अब दुअन्नी की ओर देखने लगा।

इतने में चार लड़कियां कमरे में आयीं। चारों ने माथे तक उँगली ले जाकर बाबुओं को नमस्ते किया।

इसी बीच सरदार ने दुअन्नी को कुछ इशारा किया। उसी तरह दुअन्नी ने नौकर को। और कुछ क्षण बाद ही नौकर ह्वाइटहार्स की दो बोतलें, चार गिलास लेकर कमरे में आया।

दुअन्नी ने आज्ञा दी—"मोती, मेहमानों की खातिर करो।"

जब मोती गिलास में शराब उडेल कर सरदार की ओर बढ़ी तो वह बोला– "पहले उधर से दो, मोती बाई !"

दूसरे किनारे पर नरेन्द्र बैठा था वह मोती को अपनी ओर बढते देख जल्दी में बोला—"मैं शराब नहीं पिया करता बाई !"

जाने मोती ने जिद क्यों नहीं की। पर, जैसे सरदार को शराब पिलाये बगैर चैन नहीं होगा। वह तभी बोला— "थोड़ी तो ?"

नरेन्द्र ने कहा—" सरदारजी, मुझे इससे घृणा नहीं है। किन्तु मैंने कभी पी ही नहीं।"

इस पर सरदार ने आगे नहीं कहा। मोती ने फिर प्रोफेसर के सामने गिलास किया। फिर तीसरे रईसज़ादे श्यामबाबू के सामने।

किन्तु इन तीनों के सामने नरेन्द्र शराब न पीकर भी, शान्त नहीं था। वह कभी लड़कियों को देखता, कभी अपने मित्रों के हाथ

में शराब के गिलासों को। इतने में उसने देखा, जब मोती सरदार के सामने शराब लेकर प्रस्तुत हुई, तो सरदार ने बड़ी निपुणता के साथ, कभी मोती के हाथ में ली शराब को देखा, कभी उस नारी की साफ और मधुर आंखों को। जब सरदार ने गिलास लेने के लिए हाथ बढ़ाया, तो उसने चतुरता के साथ मोती के हाथ में पांच का नोट दिया, जो प्रत्युत्तर में उसकी ओर देख कर केवल मुसकरा भर दी। क्षण भर के लिए नरेन्द्र को लगा, जैसे वह सृष्टि का कोई नया और अनूठा विधान आज जीवन में पहिले-पहल देख पाया हो। जिसमें एक चिहुँक के सिवा उसे और कुछ नहीं मिल रहा था।

सरदार ने पूछा—"बाईजी, उस्ताद कहां हैं?"

मोती ने उत्तर दिया—"दूसरे कमरे में बैठे पिनक में झूम रहे हैं।"

"बुलाओ ना—कुछ सुनाओ। और द्वार बन्द कर दो, जिससे हमीं-हम रहें।"

थोड़ी देर में उस्तादजी आदाबअर्ज करते हुए कमरे में घुसे। पीछे ही तबलची बालों में उंगलियां देकर उन्हें पीछे को करता हुआ आया।

सरदार बोला—"मोतीबाई, इस तरह नहीं, आज घुँघरुओं में नाच क्यों न हो?"

"जो इरशाद!"—दो लड़कियों ने अपने पैरों में घुँघरू बांधे। गाना नाच के साथ शुरू हुआ। पहले बीस मिनट तक मोती ने अपना नाच दिखाया, उसके बाद पन्ना ने। नरेन्द्र को छोड कर तीनों युवक, जो मानो इस राह के एक निपुण पथिक बन चुके हों, कभी वाह-वाह करते, कभी जोर से हंसते। नरेन्द्र तकिये के सहारे बांये हाथ की कोहनी टेके अब नाच के बाद गाना सुन रहा था।

लेकिन जब मोती ने अपनी दो चीज गाकर, तीसरा गाना गाया, तो वह नरेन्द्र को इतना प्यारा लगा कि जेब से दस रुपये का नोट निकाल कर मोती की ओर बढ़ा दिया। अभी तक दस रुपये एक साथ किसी ने नहीं दिये थे। या यों कहें, सभी यह सोच रहे थे कि

हम हँस रहे हैं, बोल रहे हैं, लेकिन यह महाशय चुप हैं! किन्तु इस प्रकार दस रुपये का नोट देना और गाने की दाद देना, औरों को इतना भला लगा हो, सो बात नहीं, लेकिन सरदार को बहुत अच्छा लगा। नशे में झूमता हुआ बोला—"हां, खूब!—जरा फिर से तो गाओ बाई!"

मोती ने मिसरे को फिर शुरू किया—

"भारत में फिर से आजा, बन्शी बजाने वाले,
गिरवर उठाने वाले, गौएं चराने वाले।"

मोती ने मिसरे को ऐसे तर्ज से गाया था कि जो नरेन्द्र को बहुत सुन्दर लगा। तभी इस युवक को स्पष्ट लगा, यह नारी है—युवा और सुन्दर!—वह क्षण भर के लिये दीवार पर टंगे कृष्ण-चित्र को देख कर यह देखने लगा मानो यह एक युवा नारी आह्वान कर रही हो—"भारत में फिर से आजा, बन्शी बजाने वाले!......"

कुछ देर के बाद गाना समाप्त हुआ। समय भी बारह से ऊपर हो चला था। एक भावुक कवि की तरह, जब नरेन्द्र मोती की ओर देखने लगा, तो उसे जिज्ञासा आई, इस लड़की में कोई और भी पदार्थ है क्या? और वह जो, अभी क्षण भर पहले एक दूसरे लोक में घूम गया था उसका अर्थ क्या है?—औचित्य क्या है? किन्तु जब मोती ने उसकी ओर दूजी निगाह से देखा, तो उसकी सब भावनाएँ बिखर गई। वह तुरन्त दृष्टि फेर कर, अपने मित्रों को देखने लगा। पर, जैसे ही, फिर उसने मोती देखी, तो वह उसकी आंखों को अपने में देखने की शक्ति ही न पाया। एक आकुल बच्चे की तरह, वह ऊपर की छत देखने लगा।

पर ऊपर देखने पर भी, नरेन्द्र ने यह देख लिया, मोती उसे देख कर मुसकरा दी है। उसकी आंखें फिर सामने आयीं। और कुछ देर के लिये, उसने मोती की आंखों को देखा। जाने, मोती क्या कह रही थी— वह मूढ़ बच्चे की तरह, केवल निर्निमेष-दृष्टि से देख-भर रहा।

इतने में नोकर ने तश्तरी में पान लाकर रखे। सब को पान दे चुकने पर, जब मोती नरेन्द्र के सामने पान की तश्तरी लेकर झुकी,

तो नरेन्द्र बोला—"मैं तो पान भी नहीं खाया करता बाईजी !"

मोती ने कहा—"पान तो खाइये ही। इसमें तो कोई हर्ज नहीं है ?'

उसने तश्तरी से सुपारी की डलियां और इलाइची लेकर कहा—'बस, धन्यवाद !"

मोती ने इस पर कुछ नहीं कहा। किन्तु जिस समय वह नरेन्द्र को पान देने के लिए झुक रही थी, किसी और ने तो अनुभव नहीं किया, किन्तु पास बैठे प्रोफेसर ने आज पहले-पहल इस बात को देखा कि मोती कितनी नम्र होकर अपने आगन्तुक के सामने झुक रही है !

साथ-ही, चतुर सरदार, जो नशे में झूम कर भी, बेहोश नहीं हो गया था, वह बहुत देर से मोती की आंख देख रहा था। अपने सामने, मोती को नये व्यक्ति के प्रति इस तरह सम्मानप्रद आग्रह करते देख, जरूर वह खुल कर नहीं बोला, लेकिन एकदम उसके अन्तल में जो द्वेष का धीमा-सा राग उठा, उन मनोगत भावों को, चतुर मोती के लिये समझना मुश्किल नहीं था।

जब उसने सरदार को इस रूप में देखा, तो प्रत्युत्तर में, वह सरदार की ओर देख कर खुली घृणा के साथ मुसकरा दी। क्षण-भर के लिये वह उसे इस तरह देखने लगी, जैसे अभी-अभी वह आंखों द्वारा, झुलसी आत्मा का भैरव-राग सरदार की ओर देखकर सुना देना चाहती हो, और कहती हो—"इसे समझो पुरुष !" किन्तु सरदार ने खाक न समझा ! वह अपने उसी मदहोश रूप में, केवल यह जान पाया, अवश्य, मोती ने इस समय उसके प्रति किसी उद्दण्डता का रूप धारण किया है।

उसमें उठा द्वेष, और स्पर्धा का रूप, जब मोती को देखने पर, क्रोध और अहंकार के रूप में आया, तो इस शराब पिये सरदार में भावना उठी, उसे इसका प्रतिकार करना चाहिये !

प्रोफेसर ने सरदार की यह दशा देख ली, तुरन्त बोला—"उठो सरदार, देखो, कितना समय हो गया है !"

सरदार चौंक पड़ा। वह मोती को घूरता हुआ बोला—"चलोगे ?—अच्छा चलो।" कह कर वह खड़ा हो गया।

प्रोफेसर ने शराब के पैसे चुकाये। नीचे आकर जब सब अलग-अलग चलने के लिए पृथक हुए तो नरेन्द्र ने सरदार से हाथ मिलाया। तभी हाथ मिलाते हुए सरदार बोला—"क्षमा करना मित्र, मैं लड़की के पीछे तुमसे द्वेष कर बैठा था! पर अब कुछ नहीं है।"

सरदार की इस बात ने तीनों को हँसा दिया। आश्चर्य से नरेन्द्र ने पूछा—"अब तो आपका दिल साफ है ना?"

वह नरेन्द्र के हाथ को हिलाता हुआ बोला—"हां, खूब अच्छी तरह।—वह भाव ऊपर-ही छोड़ आया हूं, नरेन्द्रबाबू।"

तभी सबने एक, दूसरे से विदा ली।

आगे कुछ दूर जाकर, नरेन्द्र चौराहे पर ठिठका। कुछ देर पूर्व का उठा हुआ भूचाल अभी उसके हृदय से मिट नहीं गया था। रुकते-ही, उसे सरदार की बात याद हो आयी। फिर मोती की आंखें। साथ-ही, अपने में उठी सद्भावनाओं का द्वन्द! वहां से चल कर, वह दूसरी नारियों के बाजार में आया। जिसे उसने कभी नहीं देखा था। क्योंकि वह सभ्य जो था। जिस पर समाज का निर्देश कि अपने मार्ग से पृथक चलना पाप है!—भला, यह जीवन के नये अवसान में आया हुआ युवक इस पाप-पथ पर कैसे बढ़ चलता!

इस बाजार में आकर देखा, यहां रुपयों की बात नहीं है। केवल पैसों और आनों का सौदा है। किन्तु वह इस प्रकार बाजार में मूढ़ की तरह खड़ा हुआ, जानो वह अज्ञान हो— निरा अज्ञान हो! न वह पैसे देखने आया हो, न रूप देखने। वह देख लेना चाहता हो, यह नारियों का बाजार है— भला कैसा बाजार है यह! क्योंकि, वह सभ्य समाज का प्रतिनिधि है—एम०-ए० है। बुद्धिमान है। तब क्यों, यह शहर का खंड उसकी आंखों से ओझल बना रहा। अभीतक समाज ने क्यों उससे छिपाए रखा। और उस ने ही अब तक जानने की क्यों न चेष्टा की!

नरेन्द्र एक कोठरी के सामने खड़ा था। वह देखने लगा, कोठरी में आठ-दस आदमी बैठे हुए नशे में कुछ बोल रहे हैं। इस दृश्य को

देखने के साथ, उसे और उत्कण्ठा आई। आगे बढ़ कर देखने लगा, उन्हीं आदमियों के पास दो स्त्रियां थीं। जो स्वयं शराब पी रही थीं, और उन आठों को भी पिला रही थीं। यह देखते-ही, नरेन्द्र के हृदय में तूफान उठ आया। उनकी उघड़ी स्थिति को देख कर, यह शिक्षित और सबोध-युवक, जब एकाग्र-दृष्टि से उन्हें देखने लगा, तो अनायास बोला—"हा, ईश! इनकी यह दशा!···उन आठों व्यक्तियों के फटे कपड़ों और बिगड़ी चेष्टा को देखकर, उसमें जोर की भावना उठी कि वह कोठरी में जाये, और उन आठों से कहे, क्यों भाइयो, तुम इस दशा में! वह उनके पैर पकड़ ले। आओ, चलो, तुम यहां किस नर्क-द्वार में आ पड़े हो। फिर वह इन दोनों औरतों की ओर झुके। वह उनके पैरों को छू कर बोले—"मेरी भोली माताओं, तुम स्वयं अपने पुत्रों को नर्क में धकेल रही हो! ना, मा!—इनकी दशा पर रहम करो। तुम इनकी मा हो। इन्हें उबार दो। देखो, यह कैसी विक्षिप्तावस्था आ पड़े हैं!...

इस गहरी अनुभूति के साथ, उसमें प्रेरणा आयी, जाओ इनके चरणों में लोट जाओ। ये तुम्हारे देश की विभूति हैं। तुम्हें इनको नव-संस्कार देना होगा।

इतने में एक स्त्री ने पीछे से आकर एकाएक नरेन्द्र का हाथ पकड़ लिया। वह चौंक कर बोला—"क्यों?—क्या बात है?"

स्त्री को बात पसन्द नहीं आई। हाथ छोड़ कर बोली--"चलते हो?"

"कहां को?"

स्त्री हँस पड़ी। वह आगे बढ़ती हुई बोली—"नामर्द कहीं का!"...

मानो मुँह पर चपत पड़ गया हो। वह पहले की सब बातें भूल गया। स्त्री के अन्तिम बोल को सुन कर, उसे घृणा आ गयी। जो अनुभूति उसमें अभी उग आई थी, जाने क्षण भर में कहां लोप हो गई!

अब उसमें इस प्रकार खड़े होने की भी शक्ति नहीं थी। वह बे-जान हो गया। उसे जान पड़ा, वह कुछ नहीं है। कोरा नामर्द है। रो आने की भावना के साथ, उसमें इच्छा आई, इस जाती हुई स्त्री को रोके। उसके पैरों में गिर कर कहे—"मा, क्या सच मैं नामर्द हूं!

उसकी आंखों के सामने अन्धेरा आ गया। वह प्रत्यक्ष देखने लगा, वह समुद्र के शून्य तल में फेंक दिया गया है। उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है।

तभी वह वहां से हटा। इस प्रकार व्यग्र और आतुर होकर घर की ओर चला, मानो, जो उसमें एक दुर्भावना उठी है, उसे जल्दी ही भुला देना होगा। जब फिर पहले बाजार में आया, तो उसने देखा, मोती मुंह में सिगरट लगाये छुज्जे पर अकेली खड़ी है।

इस समय बाजार में सन्नाटा था। जिस समय नरेन्द्र ठीक छुज्जे के सामने आया, तो चेष्टा करने पर भी वह उस ओर देखे बिना न रहा। देखते ही दोनों ने एक, दूसरे को देखा। मोती ने तुरन्त आवाज दी, "बाबू ! बाबू !"

नरेन्द्र ने छुज्जे के नीचे आकर कहा—"अब देर हो रही है बाई !"

मोती उसी व्यग्रता में बोली—"बस, एक मिनट के लिये।"

तब नरेन्द्र ऊपर पहुँचा। मोती सामने आकर बोली—"क्यों बैठोगे नहीं ?"

"ना, अब नहीं !"

"तो......कल तो आप आयेंगे ना ?"

"अभी तो यह रात भी नहीं बीती, बाई, कल की क्या बात !"

इस पर मोती जरा पास होकर बोली—"नहीं, बाबू,कल जरूर आओ।" कहते उसने दस रुपये का नोट आगे बढ़ाते हुए कहा—"तो यह अपनी अमानत लीजिये।" कल आयेंगे ही, तभी क्यों न लूँ। आज ही आये और यह रुपये, ना ऐसी भी क्या बात !"

नरेन्द्र बोला—"ऐसा क्यों, मोती बाई ?"

जाने क्यों, अब मोती ने बड़े क्षीण और कातर स्वर में कहा—"हां, आप सोचते होंगे, मैं बाजार की लड़की—इन रुपयों की भूखी लड़की—जाने क्यों आपके दस रुपये लौटा रही हूं।" तभी उसने झटके से ऊपर को मुंह उठा कर नरेन्द्र की आखें देखते हुए कहा—"मैं बाजार की निपुण और लोगों की जेबों से पैसा निकालने वाली लड़की, सच आज

जैसे यह भी नहीं जान पाती, मैं क्यों इन रुपयों को लौटा रही हूं।—जाने क्यों लौटा रही हूं !"......

नरेन्द्र मोती की ओर बड़ी भावपूर्ण निगाह से देखता हुआ बोला—"मोतीबाई, मैं जीवन में पहिली बार तुम्हारे यहां पहुँचा हूं पैसा क्या और रूप क्या ! मैं आदमी में उसकी आदमियत देखता हूं। अभी तुम्हारे पड़ोस के बाजार से होकर आया हूं। वहां मैं अपने को नामर्द सुन कर आया हूं, मोती बाई ! पर मैं इस बात पर नहीं हूं। मैं तो सोचता हूं, मैं इस शहर में पैदा हुआ, बड़ा हुआ और यह चीख, यह आदमी और औरत का मोल-तोल मैंने आज ही क्यों देखा। मुझे यह आज से बहुत पहिले देख लेना चाहिये था, मोती बाई ! और आज, तुमने जो मुझे आदर दिया है, मैं इसे भी कभी नहीं भूल पाऊँगा, बाई।"

मोती ने कहा—"कल आइयेगा न !"

नरेन्द्र जीने की तरफ को बढ़ता हुआ बोला—"अच्छा जरूर, मोतीबाई !" कहते वह जीने की राह सड़क पर आ रहा।

# पांचवा-परिच्छेद

दुअन्नी के पड़ोस में, दूसरे दिन चवन्नी के यहां, उसकी छोटी लड़की की नथनी उतरने का उत्सव मनाया गया। जिस समय बाजार की लड़कियां टोली-की-टोली में चवन्नी के कोठी की ओर चलीं; राहगीर इस प्रकार ठिठक कर देखते, मानो कोई अद्भुत वस्तु देख पाये हों। लड़कियों की कमर पर लटकीं बालों की लटें, सुन्दर वेष-भूषा और उनकी बातों का हँसता हुआ आकर्षण, जैसे बरबस राहगीरों को अपनी ओर प्रेरित कर रहा था।

चवन्नी के कोठे पर गा-बजा कर सब लड़कियां खाने के लिये बैठीं। इसी बीच में, इस हर्ष के समय, चवन्नी की बड़ी लड़की बिंदो मजाक पर आयी। उसने बातों के प्रसंग में, अपने पास बैठी एक लड़की को झिंझोड़ कर पूछा—"क्यों बसन्ती, आजकल तेरा वह आदमी कहां है ?—बड़ा मुंह लगा प्रेमी !" तभी उसने हाथ के इशारे से कहा—"एक

बात तो बता बसन्ती, देख, सच बतइयो, जब वह तुझे भगा कर ले गया, तो तैने उससे यह नहीं पूछा था कहां ले चलेगा ?"—वह हँस कर फिर अपने-आप बोली—"हूं, ऐसा ही होता है इन प्रेमियों का प्रेम !"...कहते उसने अपने पास बैठी एक सहेली की ओर देख कर कहा—"क्यों ठीक न, हंसा ?"

उसी के पास बैठी हंसा ने पापड़ को तोड़ते हुए कहा—"तू ही जान !— मैं ऐसी बातों में नहीं पड़ा करती !"

"सच !"—वहीं पर बैठी हुई हीरा नाम की लड़की तपाक से कह उठी—"क्यों बात बनाती हो, हंसा ! हजारों चूहे खाय बिलैया हज को !—क्यों ?"

यह सुनते-ही सब-की-सब लड़कियां एक बारगी हंस पड़ीं।

बिद्दो ने फिर कहा—"अच्छा जी सुनो, हम में मोती बहिन ज्यादा पढ़ी-लिखी और समझदार हैं, तो मोती बहिन तुम-ही बताओ, यह आदमी क्या प्रेम करते हैं ? क्यों, तुमने किसी को प्रेम किया या नहीं ?"

जाने क्यों, मोती ने इस बात में कोई भी प्रेरणा नहीं पायी। पर उद्धत हो आयी बिद्दो को वह कुछ जवाब देती कि उसी समय चवन्नी आ निकली। आते-आते उसने बिद्दो की अन्तिम बात सुन ली थी। पास आकर बोली—"क्या कह रही है बिद्दो, अरी पगली, अगर हम प्रेम करें तो खायें क्या ? जिस तरह स्त्रियों को केवल पुरुष के दिल में बैठ जाना चाहिये, ये आदमी भी, तुमसे प्रेम नहीं करते !" जाने चवन्नी के दिल में क्या बात आई, बड़ी करुण और अधीर बन कर फिर कहने लगी—"मनुष्य केवल रूप का प्रेमी होता है, दिल का नहीं। वह सुन्दर नारी को देख कर ही झुकना पसन्द करता है, बिद्दो ! तुम जो इस प्रकार रूप काढ़ कर बाजार के कोठों पर बैठती हो, यही इसका प्रमाण है। अगर तुम में मनुष्य को अपनी ओर झुकाने की क्षमता नहीं होगी, फिर तुम्हारा कोई मूल्य नहीं होगा। पुरुष का प्रेम हम नारियों के लिये एक जाल है, बिद्दो ! किन्तु प्रेम तो हमारी ओर से चलता है, जो उसकी वासना में मिल कर, उसे बाधित करता है, वह

हमें देखे और हरषे !"···क्षणिक रुक कर वह फिर कहने लगी—"इस पुरुष का वास्तविक रूप, हम नारियों को जब दिखाई देता है बिद्दो, जब अपने शरीर के समूचे लावण्य को बहा कर, हम हड्डियों की शेष पिंजर रह जाती हैं। और पुरुष घृणा और तिरस्कार के साथ, हम पर थूक देना चाहता है। हां, वही पुरुष, जो एक दिन प्यार और मोह के तिलस्मी भाव दर्शाता है, हमारी ढलती देह के साथ ही, उसके मन का काला रूप दिखायी देता है। तुम-सब अभी अनुभव रहित हो, बेटी ! इस प्रेम नाम की वस्तु को भूल जाओ। याद रखो, तुम्हें बाजार में बैठ कर पैसे कमाने हैं—इन्हीं पुरुषों से कमाने हैं। तुम्हारी जरा ढील पाते ही, यह पुरुष जाति, तुम्हें न दीन का रख सकती है, न दोज़ख का !"

लड़कियां अब खाना खा चुकी थीं। चवन्नी के जाते ही, अपने चेहरों पर गम्भीरता लिए, सब एक-दूसरी की ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगीं। दूसरी ओर भड़ुवे तालियां बजा कर कुछ पा लेने के लिये शोर-शराबा मचा रहे थे। एक लड़की ने बसन्ती को लक्ष करके कहा—"सुना, क्या प्रेम-प्रेम चिल्ला रही हो। आदमियों से पैसे ऐंठे जाओ, इन्हीं दिनों की कमाई बुढ़ापे में काम आयेगी !"—तभी वह मुसकरा कर कहने लगी—"प्रेम की दोहाई पर किसी के साथ भागना आजकल के जमाने में जेबा नहीं देता !"

तभी बिद्दो ने दूसरी लड़की से पूछा—"अच्छा तू तो बता, आजकल तेरे वह बाबू साहब कहां हैं। सुना था, वह एक हजार रुपया देकर तुझसे विवाह कर रहे थे ?"

इस लड़की का नाम श्यामा था। बड़ी हंसोड़, चञ्चल स्वभाव वाली लड़की। बोली—"हां, कर तो रहे थे।—या यों कहो, रख रहे थे।" माथे में सलवट डालती हुई कहने लगी—"उनकी न पूछो। जब आये, तो ऐसे लगे, मानो सर्वस्व निछावर करने के लिये कटिबद्ध हो गये हों।—उफ, बड़ा बातूनी !"—वह झटके के साथ बोली—"उसके कहने पर मैं चल नहीं दी, यही अच्छा हुआ बिद्दो ! अम्मा तो अब तक मेरी उस बेवकूफी के गीत गाती हैं।"

"तो यह कहो, उनसे पटी नहीं ?"—बिद्दो ने पूछा ।

"न, ऐसे पटने से बाज आई ।"-- कहती हुई श्यामा जाने के लिये, चवन्नी से विदा लेने चली ।

सब लड़कियां जो अब जाने के लिये तैयार थीं, उनका एकत्र समूह छज्जे पर आ खड़ा हुआ । इन लड़कियों को देखने के लिये, बाजार की पटरी पर लोग इस प्रकार खड़े हुए, जैसे वह किसी नवीन दृश्य को देखने के लिये रुकने में वाध्य हो गये हों । कुछ लड़कियों का ध्यान इन आदमियों की ओर गया । श्यामा बोली--"देख हीरा, जरा देख तो, इन आदमियों की आंखें !...और जरा उन बाबू साहब को तो देख, किस तरह पतलून में हाथ डाले, मुँह में सिगरट दिये अकड़े खड़े हैं ।"— वह रुक कर कह उठी—"हमें जता रहे हैं, हम भी कुछ हैं । यह दिखा रहे हैं, हमें भी देखो !"

बात सुन कर हीरा हँस दी । श्यामा के कन्धे पर पीछे हाथ रखे बसन्ती ने कहा—"कह तो एक पूरी डाल दूँ ।"

हंसा बोली—"गिद्ध हैं !...देखती नहीं, कैसी पैनी आंखें चल रही हैं !"

इतने में उसी बाबू के पास, एक और बाबू आ खड़े हुए । वह उनके परिचित निकले । जब उन्होंने छज्जे पर ध्यान किया, तो झट एक बार छज्जे पर देख कर, उन्होंने अपने कोट पर नजर डाली । तभी उन्हें अपने कोट का उल्टा कालर नजर आया, जो फौरन सीधा किया गया।

हंसा इस विचित्र दृश्य को देख कर हंस पड़ी । किन्तु कितना आश्चर्य, इन सब के पास खड़ी हुई मोती, कुछ और देख रही थी । उसका लक्ष्य, पटरी के एक आदमी पर था, जो ऐसे देख रहा था, जिसकी निगाह में न कोई कल्पना थी, न सर्वथा शून्यता । मोती उसके दरिद्र-वेष को देख कर इतनी तन्मय हो गई कि लड़कियों ने कई बार जोर से ठहाके मारे, और व्यंग कसे, पर मोती ने कुछ भी नहीं सुना ।

पर आदमी, सूखी, निरुद्देश्य, और निरभिमान-दृष्टि से इन लड़कियों को देख रहा था। मोती को यह स्पष्ट लगा, जैसे वह इन और आदमियों की तरह कुछ पा नहीं लेना चाहता था। उसके पास कोई इच्छा ही नहीं थी। सिर्फ कौतूहल था, और थी यह जानने की इच्छा—यह सब है क्या !...

कुछ देर ठहर कर वह आदमी चल दिया। जब वह चौराहे से ओझल हुआ, मोती ने एक लम्बी सांस छोड़ दी। तभी वह एक बार आसमान की ओर देख कर, झटके के साथ पास खड़ी हीरा से बोली—"हीरा चलो, पन्ना और चमेली कहां हैं, सब से कहो चलें।" और स्वयं चवन्नी के पास जाकर बोली— "अच्छा, अब जायँ अम्मा !"

चवन्नी ने मोती की ओर सस्नेह आंखों से देख कर कहा—"जाओगी बेटी, अच्छा, जाओ।"

तब मोती लड़कियों को फिर बुलाने छज्जे की तरफ गई तभी उसने देखा नीचे नयी खरीदी हुई मोटर आकर खड़ी हुई है। उसकी ओर देख कर श्यामा ने व्यंग में कहा—"यही हैं, जिन्होंने आज मंगो की नथली उतार कर, उसके साथ सोहागरात मनाने का सौदा किया है !..."

तभी हीरा ने आश्चर्य से पूछा— "यह !—क्यों पचास से तो ऊपर होगा ना ?"

यह सुन कर पीछे से बसन्ती बोली— "पचास का हो, या बीस का, रुपये देखने हैं या उम्र !" पास खड़ी चमेली ईर्षा भरी भाषा में बोली—"मंगो तो इसकी गोद में खेल सकती है,—क्यों हीरा ?"

हीरा शान्त होकर उसे देखती रही। लेकिन इस तनिक देर में जो मोती के हृदय में एक आंधी उठ खड़ी हुई थी, वह उसे अब फिर उभरती देख, चिढ़े स्वर में बोली—"हीरा चलती है, या नहीं, मैं जाती हूं !"

हीरा ने कहा—"चलो।"

जब वह जीने से उतरने लगीं तो वही बाबू सामने पड़े। वह मोती को आगे देख कर बोले—"ओ', कहो मोतीबाई मिज़ाज़ तो अच्छे हैं, ना ?"

मोती ने सरल ढंग से कहा—"जी हां, आपकी कृपा है।"

जब वह जीने से पार हुई, तो अपने-आप धीमे स्वर से बोली—"दोज़खी कुत्ते, बुड्ढा होने पर भी तेरी प्यास नहीं बुझी ! आज नन्हीं-सी लड़की से सोहाग मनायेगा !···देखो तो कैसा बन-ठन कर आया है, जानो, ब्याह करने चला हो !"···

मोती कुछ दूर-ही चल पाई थी कि श्यामा ने पीछे से आवाज दी—"मोती, इतना क्यों भागती हो !"

उसने मुड़ कर देखा, हंसा, बसन्ती और श्यामा तीनों लड़कियां उसकी ओर आने लगीं। जब वे सब पास आयीं, तो श्यामा ने कहा—"क्यों मोती, इस तरह मुंह छिपा कर भागीं।"

मोती तनिक मुसकरा कर बोली— "मैं समझती थी, तुम अभी ठहरोगी। आओ, आज हमारे घर चलो।"

"तेरे घर ?—बसन्ती ने पूछा—खिलायेगी क्या ?"

इस पर हीरा ने कहा—"अरी, अभी तेरा पेट नहीं भरा ?"

"पेट भरने वाली चीज नहीं है हीरा !" जाने कैसे आतुरमन से बसंती ने कहा।

इतने में मोती का घर आया। मोती के कहने पर श्यामा के पीछे सब लड़कियां जीने में चढ़ लीं।

ऊपर पहुँच कर दुअजी सब लड़कियों को देख कर बोली—"अरी, तुम तो कभी आतीं ही नहीं।—बड़ी लड़की हो गई हो, क्यों ?"

श्यामा ने कहा—"यह बात नहीं अम्माजी ! छूट हो तब तो। अम्मा, इस पैसे का लालच बड़ा बुरा होता है !"

दुअजी ने यह बात स्वीकार की। जब सब बैठ कर बातें करने लगीं, तो बसन्ती का ध्यान सामने आले में लगी कृष्ण की तस्वीर पर गया। वह खड़ी होकर उसे इस प्रकार देखने लगी, मानो उसमें से

कुछ खोज रही हो। उसे इस प्रकार देखते हीरा बोली—"क्यों बसन्ती, हमारे कृष्ण को चुरा कर ले जायगी! देखियो, यह बड़ा छलिया है।"

बसन्ती मुसकराती हुई फिर अपनी जगह आ बैठी। तभी सड़क पर शोर सुन पड़ा। हीरा तपाक से बोली—"चलो री, जलूस आ रहा है।" कहते वह छज्जे की ओर गई। भारतमाता और बन्दे-मातरम के नारों की गूँज उनके सामने आ गई थी। बैन्ड में बजती हुई मार्च की तुमुल-ध्वनि आकाश तक गूँज उठी थी। बाजे के पीछे दो कतारों में लगभग चार सौ स्त्रियां थी। वह सब बन्देमातरम का गाना गाती हुईं आगे बढ़ रही थीं। एक अद्भुत दृश्य था, जो बरबस लड़कियों के प्राणों को हिलाये दे रहा था।

जब सब लड़कियां फिर कमरे में आयीं, तो श्यामा एकबारगी इतनी उल्लसित हो उठी कि अपने आप नाच कर गा उठी—

जय, जय, प्यारा भारत देश!
जय, जय शुभ्र हिमाचल शृंगा, भानु-प्रताप चमत्कृत अंगा,
तेज-पुन्ज-वर-वेष! जय, जय, प्यारा भारत देश!

तभी लड़की हीरा ने पूछा—"यह गाना कहां से उड़ाया, श्यामा?"

श्यामा ने कहा—"यह भी कोई बात! अरी पगली, हम वेश्या हैं तो क्या गाने पर अधिकार के साथ, इस देश पर भी हमारा अधिकार नहीं है? मैं तो देश के लिये मरना चाहती हूं, हीरा!" कहते वह चलने के लिये तैयार हुई।

तभी मोती बोली—"क्यों अभी से?"—कहते उसने ध्यान से श्यामा की आंखों को देखा। जाने उसने गलत समझा, या ठीक, वह देखने लगी, श्यामा की आंखें कुछ भीगी-सी हो आयीं? पास होकर बोली—"श्यामा, आओ, हम-तुम कमरे में चलें।"—अपने कमरे में ले जाकर वह पलङ्ग पर बैठते ही बोली—"सच कहियो बहिन, तुम उस वक्त क्या सोच रही थीं?"

श्यामा ने मोती के इस प्रश्न को सुन कर तनिक देर उसकी ओर देखा। फिर गम्भीर और अनजाने भाव में बोली—"क्या सोचती

मोती !" तभी क्षणेक रुक कर कहने लगी--"मोती, क्या हम वेश्याओं का जीवन भी किसी काम योग्य है ! तूने नहीं देखा, ये सब हमारी-सी तो बहिनें थीं ! भला इनका कितना शुद्ध और पवित्र जीवन है। गृहस्थ की रक्षा करती हैं, बच्चों को पालती-पोसती हैं, और अब, जब देश पर मुसीबत आयी है, किस तरह टोली-की-टोली में बाहर निकल पड़ी हैं। तूने देखा, वह कैसी भली लग रही थी, जिसकी गोद में बच्चा था, फूल-सा, लाल-लाल !"·········

"तो फिर क्या करें ?" तभी मोती ने झटके से पूछा।

श्यामा बोली—"बहिन करने को तो बहुत काम हैं। हम तो जैसे इस जीवन की आदी हो गई हैं कि आदमी आया, उसे फाँसा, और अपने टके सीधे किये। लेकिन, चल हम दूसरी राह पर भी सकती हैं, मोती !"

मोती ने कहा—"यही मैं सोचती हूं श्यामा ! किन्तु जैसे आदमी को फँसाने के अतिरिक्त हमें और कुछ सूझता ही नहीं है। और जैसे इन आदमियों की विलास-युक्त-प्रवृत्ति भी हमें चूसने के लिये उत्पन्न हुई है, श्यामा !"···कमरे की कड़ियों को देखकर वह फिर बोली—"और हमें भी अपने इस विलास से लदे जीवन को इन पर डाल देना-ही अनिवार्य हो गया है। शराबी की तरह, पुरुष की प्रतिक्षा करना-ही मानो हमारा एकान्त-संकल्प बन गया है, श्यामा !"······

इतने में हीरा कमरे में आयी। उसके पीछे बसन्ती और चमेली भी। मोती को कुछ और कहने की प्रेरणा आयी। वह कहने लगी—"यह पुरुष, जो अपने स्वार्थ के तल पर खड़ा होकर हम नारियों को केवल वासना की जीती मांद का रूप देता है, तूने देखा, यह अपने को मांजता किस प्रकार है ! बहिन, हम और कुछ नहीं हैं, हम वेश्या हैं, और ऐसी वेश्या हैं, जो पुरुष के धरोहर-संस्कार को पीने के लिये, इसी पुरुष-समाज द्वारा इस राह पर छोड़ दी गई हैं !" कहते मोती रो पड़ी। वह फिर बोली—"हमें जीते-जी, पुरुष के वासना-कुण्ड में जलना होगा, श्यामा !"···

बसन्ती ने कहा—"हम सब-कुछ जान कर भी, इस पेशे से इतनी हिल गई हैं कि जो आज न हम छोड़ सकती हैं, और ना ही, कोई इसके लिए तैयार है।"

श्यामा इस बात का समर्थन करती हुई बोली—"और क्या ! इस काम को जघन्य समझकर भी, हम छोड़ने का नाम नहीं लेतीं मोती !"

हीरा अपनी किसी बात को लिए खड़ी थी। छूटते बोली—"श्यामा बहिन, यह बात नहीं ! तुम इस बात को क्यों भूलती हो, हमारे सामने इतनी मजबूरियां इकट्ठी हैं कि इस धन्धे के अतिरिक्त और कोई रास्ता ही नहीं है। तुम कहती हो, हम-सब विलास की अभ्यस्त हो गई हैं, लेकिन वास्तव में यह बात नहीं। मैं कहती हूँ, अगर आज मुझे जिन्दगी बिताने का दूसरा रास्ता दीख पड़े, तुरन्त इस काम को छोड़ दूं। जिस तरह दुनिया हमारे पेशे से ग्लानि करती है, क्या हमें कभी इस बात पर पश्चात्ताप नहीं होता ? पर हम इसे निकृष्ट और पतित समझ कर भी, छोड़ने को तैयार नहीं हैं ! और तुम देखती नहीं बहिन, इस बाजार में कुछ दिन पहले जो वेश्याओं के घर थे, आज जितने कमरे हैं, सभी वेश्यालय बने हैं। ये क्या आस्मान से टूट आईं ? नहीं, श्यामा ! उनकी भूख और दरिद्रता ने उन्हें इस राह पर पटक दिया है !..."

विषय जैसे बहुत लम्बा और तर्कमय हो चला था। मोती विरक्त भाव से बोली—"छोड़ो जी, अब तो जो कुछ होना है, करना ही होगा ! जलूस अच्छा था ?"

हीरा बोली—"कई स्त्रियां हमारी तरफ देखकर आपस में कुछ कह रही थीं। शायद कह रही होंगी—ये हैं बाजार की लड़कियां !"

इस पर बसन्ती ने कहा—"झूठ ही क्या है ! क्या उनके हृदय में हमारे प्रति अच्छी भावनायें होंगी ! वे पवित्र और शुद्ध भारतीय नारियां हैं, हीरा !"

मोती ने पूछा—"और जो आदमी खड़े देख रहे थे, उन्हें क्या कहोगी बसन्ती ?"...

बसन्ती ने उत्तर दिया--"उन्हें ?--फिर वही बात उठती है। कुछ भी हो, मैं इस जिन्दगी में पुरुष-समाज को क्षमा नहीं कर सकती। पर सभी राक्षस नहीं हैं, यह भूल भी नहीं बैठी हूँ।"

मोती ने हल्की हँसी-से कहा--"तो तुझे पुरुषों से क्यों इतनी चिढ़ है। पगली, स्त्रियां क्या पाप नहीं फैलातीं ?"

वह बोली--"परन्तु पुरुषों की तरह नहीं। हां, हम-सी नारियों को कह लो।"

श्यामा उठती हुई बोली--"अब जाने दो मोती, सन्ध्या आ गई।"

मोती ने कहा--"आया करो ना ?"

"अच्छा-अच्छा।" कहकर सब नीचे उतरीं।

मोती अकेले कमरे में बैठ कर, इस प्रकार कुछ सोचने लगी, जैसे वह किसी गहरी वेदना को सुलझाने के लिये उस एकान्त में बैठ गई हो।

बहुत देर तक वह उसी प्रकार मौन बनी रही। मोती आंख बन्द किये पलंग पर पड़ी थी, जिसके सामने जाने कितने चित्र आये और गये। तभी उसने एकाएक आंख खोल कर कहा--"केवल एक बात, गाओ, और पुरुष के हाथ अपने को समर्पण कर दो!" इसी समय मोती को अनायास एक दिन की बात आयी। एक बाबू थे, मोती क्षण भर में अपने को उसके हाथ में सौंप देगी। तभी उसने बाबू से सुना--"तुम बड़ी भोली हो मोती! युवा और सुन्दर! क्यों मोती, भला तुम्हारी उम्र क्या होगी?--यही पन्द्रह-सोलह वर्ष की?"

मोती ने जिज्ञासु ढंग से उत्तर दिया--"जी हां, केवल सोलह की!"

बाबू ने फिर पूछा--तुम मेरे साथ ब्याह क्यों नहीं कर लेती मोती?--मोती कलकत्ते चलोगी?"

मोती ने कहा--"कह नहीं सकती, पराधीन हूँ।"

किन्तु इन्हीं बातों को मोती ने अपनी तीन साथिनों से भी सुना था। वह याद करके कहने लगी, पगली चमेली ने तो इन बातों पर विश्वास कर लिया था।

तुरन्त मोती ने झटके से करवट ली। उसी दशा में वह फिर कहने

लगी—"यहां कामी और विलासी व्यक्ति को छोड़ कर और कौन आने लगा मोती! पुरुष यहां आकर कम ढोंग नहीं रचता है। उस दिन भोली पन्ना से एक ने कहा तो था—"पन्ना, मैं तेरे साथ विवाह करूंगा!" जब पन्ना ने पूछा—"आप करते क्या हैं?"—तो उसने झट उत्तर दिया—"मेरी कपड़े की कोठी है।" और जब पन्ना ने यह पूछा—"बाबू जी, तुम मुझे ले जाओगे, तो तुम्हारी स्त्री घृणा नहीं करेगी?"

"तुम बड़ी भोली हो पन्ना। उसने उत्तर देकर झट कहा—"मैं विवाहित होता, तो तुमसे क्यों इस प्रकार की बात करता। मेरे किसी वस्तु की कमी नहीं है। मोटरें हैं, बग्घियां हैं, एक दर्जन नौकर हैं—तुम तो पटरानी बनोगी पन्ना! और फिर?...हां, वह विलासी व्यक्ति भोली लड़की को ठगने आया था। ये पुरुष हैं!—काम और विलास के साक्षात् पुतले!"...

सचमुच उस समय मोती रुआंसी हो चली थी। उसने जैसे-ही आंखों में उभर आये आंसुओं को धोती के पल्ले से पोंछा कि लड़की हीरा ने उसके पलंग के पास आकर कहा—"वह रात के बाबू आये हैं मोती, तुमको पूछ रहे हैं।"

मोती जाने किस अज्ञात भाव से हीरा की ओर देख कर बोली—"मैं अभी आयी हीरा, उन्हें कमरे में बैठाल। जाने उस समय उसके अन्तल में क्या आ गयाथा!

## छठवां-परिच्छेद

सदा की भांति महीने की तीस तारीख की शाम को मिल के मजदूर वेतन पाते-ही, टोली-की-टोली में उन वेश्याओं में आये, जो शायद मनुष्य-समाज द्वारा निम्न श्रेणी में विभक्त कर दी गई थीं। आज प्रत्येक के चेहरे पर उल्लास था। बात-की-बात में भट्टी का छोटा-सा दरवाजा मजदूरों से इस प्रकार घिर गया, मानो आज शराबखाने में कोई पर्व मनाया जा रहा हो। ये मजदूर जो मुश्किल से बीस, पच्चीस या तीस रुपये पाकर ऐसे दीख पड़े, जानो उन्हें अभी-अभी कारूं का खजाना मिल गया हो। साथ-ही अपने महीने के परिश्रम का पैसा

पाकर, वह अब उसे इस बेरहमी और खुले दिल से खर्च करने के लिये तैयार हुये कि वे शराबखाने से निकल कर, दो-दो और चार-चार की टोलियों में नारियों की कोठरियों के सामने आये।

जिस प्रकार ये मजदूर, इस दिन के मनाने की प्रतीक्षा में, अटूट मेहनत के साथ सफल हुये, बाजार की कोठरियों की नारियां भी, उस रात के समय, गुलाबी, कस्तूरी, तथा बसन्ती रंग की धोतियां, अथवा जापानी रेशम की साड़ी पहन कर इस प्रकार बैठी दीख पड़ीं कि जानो उन्हें अपने मजदूर प्रेमियों की प्रतीक्षा में आज सजना अनिवार्य हो गया था।

उसी समय शराब की भट्टी से चार आदमी बार निकले। किसी के हाथ में कुल्हड़, और किसी के हाथ में शराब की भरी बोतल। वह सीधे दो-तीन कोठरियों को छोड़ कर, एक कोठरी के सामने जाकर खड़े हुये। मूढ़े पर बैठी एक पच्चीस वर्षीय नारी से एक ने पूछा—"मेहरो कहां है, गंगो ?"

गंगो ने उत्तर दिया—"मेहरो अभी आती है।"—तभी फिर बोली—"खड़े क्यों हो, अन्दर चले आओ।" कहते उसने एक आदमी की बगल से इस प्रकार बोतल निकाल ली कि जिस पर न तो उस आदमी ने ही कुछ ऐतराज किया, और न, गङ्गो ने जरा भी शिष्टता का भला व्यवहार। ऊपर आकर वह सब उस जरा-सी कोठरी में आकर बैठ गये, जहां सूरज की धूप न मिलने से सील की इतनी दुर्गन्ध उठ रही थी, जैसे किसी सड़े पानी में नमक मिला दिया गया हो।

इसी समय दूसरी ओर से उन्हें मेहरो की एक आदमी से पैसों के लिये झगड़ने की आवाज सुनायी दी। तभी उनमें से एक आदमी बोला—"अरी, क्यों झगड़ रही है मेहरो। परदे से बाहर आ, हम तुझे पैसे देंगे।" कहते, उसने अपनी जेब में हाथ डाल कर उस रकम को निकाल कर गिना, जो अभी वह कुछ समय पूर्व मिल से वेतन के रूप में लाया था। निकाल कर देखा तो पूरे आठ रुपये साढ़े ग्यारह

आने हुये। उसने हिसाब लगाया, वह भट्टी में तीन रुपये दे आया है। इतने में शराब की सनक में सभी को अपने पैसे गिनने की जरूरत महसूस हुई। एक एक कर सबने अपनी जेब के पैसे गिने। मगर दस रुपये से अधिक किसी के पास नहीं निकले। किसी के पास कुछ आने कम, और किसी के पास दो या ढाई रुपये ।

इसी बीच मेहरो उनके पास आई। आते ही, वह एक आदमी को इस प्रकार देखने लगी, जैसे आज वह बहुत दिन में उसके हाथ लगा हो। तभी उसका सिर हिलाती हुई बोली—"क्यों, इतनी पीली ··· शराबी !" कहते दूसरे के हाथ से बोतल लेकर, उसने झट मुंह से लगायी। कुछ पी, कुछ बखेरी, बाकी अपनी साथिन की ओर करके बोली—"ले तू भी पी, गङ्गो।"

गङ्गो ने तुरन्त मूढ़े से उठ कर बात-की-बात में बोतल खाली कर दी। तभी मेहरो शराब पीकर, एक आदमी की बाँह पर बैठने की चेष्टा करने लगी। जब वह बोझ से नशे में पीछे को गिरा तो मेहरो खिलखिला कर हँस पड़ी। लेकिन उसके दूसरे साथी ने उसे बैठा कर सीधा किया। जब उसने किंचित होश में आकर अपनी आंखें खोलीं, तो मेहरो बोली—"अब होश आया या नहीं !"

उस व्यक्ति ने नशे की लहर में थिरकते हुये कहा—"क्या···मैं··· बेहोश···हूं।"

तभी मेहरो ने फिर हुक्म के स्वर में कहा—"तो जाकर नमकीन लाओ।"

यह बात दूसरे आदमियों को पसन्द आई। उनमें से एक ने कहा—"रामदीन जरा जाना तो।" कह कर उसने चार आने पैसे रामदीन के हाथ पर रखे।

कोठरी से उतर कर रामदीन ने पास ही बैठे तेल में बनते खोंमचे वाले से सेव और दाल ली। जब वापिस आया तो उसने देखा केवल एक को छोड़ कर बाकी वहीं बैठे लुढ़क गये हैं। वह मेहरो और गङ्गो को नमकीन देकर अपने साथी के साथ स्वयं भी खाने लगा।

किन्तु इसी समय मेहरो को एक बात का ध्यान आया। वह तुरन्त रामदीन की ओर बढ़कर बोली—"पैसे लाओ रामदीन !"

रामदीन ने कहा—"हां, हां, उस दिन के पैसे ना?—किन्तु आज तो अपने हाथ से एक प्याला पिला दे मेहरो !"···

मेहरो इस समय खड़ी-खड़ी ऊब गई थी। वह पास ही के पर्दे को उठा कर बिछी खाट पर जा बैठी। उस खाट पर, जिस पर हजार जगह फटी और सिली हुई दरी। उसी पर मैली बिछी हुई चादर। इस रूप में उस खाट से इतनी दुर्गन्ध उठ रही थी कि जैसे विश्व की समूची नारकीय-गन्ध उस कोठरी में पड़ी खाट पर आ गई हो।

कोठरी का परिचय पाना आवश्यक है। उस कोठरी में थोड़ी-सी बाहर बैठने की जगह। वहीं रोटियां बनाने के मैले ऐलमोनियम और मिट्टी के कुछ बर्तन पड़े थे। पास ही दोनों दीवारों के सहारे में दरवाजे से आड़ ली हुई पर्दे के भीतर कथित चारपाई थी। एक कोने में कुछ गूदड़ पड़े थे। आले में एक छोटा-सा पैसे वाला शीशा रखा था। वहीं सुर्मेदानी के अतिरिक्त दो-तीन धूप बत्तियां भी पड़ी थीं। उसी के पास मिट्टी का दिया अपनी ऊची लौ छोड़ता हुआ कड़ियों में धुँए को इस प्रकार जमा रहा था कि मच्छड़ या छिपकली द्वारा जब उस जगह जरा भी ठेस पहुँचती, स्याही का गुच्छा-का-गुच्छा कुछ खाट पर और कुछ नीचे गिर पड़ना आसान था। पर बहुधा दिया आले में जरा पीछे को रखा होता। जिसकी दीवार पर फैली कलौंस, और आले में जमी स्याही की कालिमा पोंछ डालने पर भी ऐसी गहरी हो गई थी कि जो शायद कलई की गहरी कूची देने पर भी अपनी कालिमा नहीं छोड़ देती। इसके अतिरिक्त कोठरी की दीवारों पर जमी हुई सील की फुई, उसमें से आती हुई हवा के स्पर्श से उठती दुर्गन्ध—यह सब, कोठरी के चित्र के साथ इस प्रकार सम्बद्ध सामग्री जुट गई थी कि जो मानवी-क्रीड़ा का नग्न रूप बन कर वीभत्सता के साथ चीख रही थी।

मेहरो के खाट पर पहुंचने के बाद-ही, रामदीन उसके पास पहुंचा। बोतल और कुल्लहड़ उसके हाथ में थे। मेहरो को ललचाई

आंखों से देखकर बोला—"सच, आज अपने हाथ से पिलादे मेहरो !" कहते वह इस प्रकार कुल्हड़ और बोतल मेहरो के आगे करने के साथ स्वयं भी आगे को झुक गया, मानो वह सब-कुछ उस नारी रूप में मेहरो के आगे समर्पित कर देना चाहता था ।

किन्तु जब वह खाट पर बैठा और जेब से सब पैसे निकाले, तो वह स्वयं ही चारपाई से नीचे गिर पड़ा । मेहरो ने पैसों को उठा कर गिना तो ठीक पौने पांच रुपये हुए । उसके मन में आया, आज के वह दो रुपये से क्या कम लेगी । फिर भी, रामदीन जैसे से वह तीन रुपये से कम नहीं ले सकती । दो पहले एक दिन के उधारे, जबकि रामदीन के साथ उसने शराब पी और नमकीन खाया था । उनका भी आज ही देने का वायदा था । इस तरह जितने पैसे उसे लेने चाहिये थे लिये, और रामदीन के पैरों में पैर मार कर बोली—"ओ, शराबी उठ, चल बाहर जा !"

लेकिन रामदीन को होश नहीं था । वह उसी प्रकार पड़ा रहा ।

तभी मेहरो ने बाहर जाकर देखा, गंगो शराब में झूम रही थी । इतनी तो उसे मिली नहीं, जो बेहोश कर दे, लेकिन इस समय वह पूरे होश में भी नहीं थी । मेहरो बोली—"मैं यहां बैठती हूं गंगो, जा तू जरा आराम कर ले ।"

परन्तु गंगो को अभी मुश्किल से दो मिनट ही खाट पर पड़े हुए थे कि रामदीन का साथी गौरी उसके पास आया । इस समय वह किंचित होश में था । पास आते-ही बोला--"मुझे खाट पर नहीं बैठने दोगी गंगो ?"

गंगो ने पड़े ही उसे बैठने के लिये जगह कर दी । पर जैसे गौरी के पास कोई उद्देश्य था । वह गंगो को ललचाई आंखों से देखकर बोला—"गंगो !"···कहते वह रुक गया ।

लेकिन गंगो तुरन्त उसकी जेब में हाथ डाल कर बोली—"पहले टके दिखाओ कितने हैं ।" गौरी जेब सम्भालने ही लगा था कि उसने गौरी की सब रकम निकाल कर देखी तो पूरे पौने सात रुपये । तभी गौरी से पूछा—"मुझे इनमें से क्या देगा गौरी ?"—साथ ही, कहते उसने अपने को गौरी के हाथों में सौंप दिया ।

गौरी नशे था—पूरा नशे में! उसने गंगो की बात पर खाक भी ध्यान नहीं दिया। वह गंगो को इस प्रकार अपने में लेने के लिये अधीर हो उठा; जैसे अमर-अविनाशी के चरणों में झुकता हुआ कोई भक्त, जीवन के समूचे विहाग को चढ़ा देने के लिये तैयार हो गया हो। और जब गंगो ने फिर टकों की बात उठाई, तो वह बोला—"क्यों मरती है गंगो, तेरे ही लिये कमाता हूं। जो चाहे जितने ले ले। ले शराब पी, और पिला।" कहते हुए उसने बोतल गंगो के हाथ में दे दी।

जानो गंगो, उससे ऐसा ही सुनना चाहती थी। तभी बोली—"गौरी, आह! तुम कैसे निठुर हो। सुन्दर हो, जवान हो, पर मुझसे दूर रहा करते हो।"

लेकिन, गंगो के सामने कोई स्थिति नहीं आयी। उसने गौरी को दो-तीन कुल्लहड़ शराब के पिलाये, और जब वह गिरने को हुआ, तो उसे उठाया और बाहर बैठा दिया। तब स्वयं चारपाई पर आकर इस प्रकार लेट रही, जानो अभी उसने कुछ विचारा ही नहीं था। और एक आदमी के साथ—शराबी और स्त्री-लोलुप आदमी के साथ—जो उसने निपुण व्यवसाय का जाल रचा, उसे फांसा और अपना काम साधा, वह सब ओर से छूट कर केवल विरक्त-सी परदे के बाहर बैठे गौरी की नशीली सांसों की आवाज सुनने लगी।

बहुत देर के बाद गौरी को होश आया। वह उठा। कोठरी से नीचे उतरते ही फिर उसकी आंखों के आगे अन्धेरा आने लगा। उसे जान पड़ा, जैसे छोटे-छोटे जाले आंखों के सामने पुर रहे हों। वह सब भूल कर फिर मेहरो की तरफ बढ़ा। बोला—"मे···ह···रो!"—कहते वह पास ही की नाली के सिरे पर बैठ गया। और जैसे शराब के कड़वे और खरखरे जायके को उसने नाली के पानी में देख पाया हो। वह वहीं नाली के किनारे पर बैठकर कुछ देर बाद ही उसमें गिर पड़ा।

उसकी इस विक्षिप्त अवस्था पर मेहरो ने कोई समवेदना प्रकट नहीं की। वह सूखी हंस कर बोली—"मर जले!"······

इतने में गंगो बाहर आ गई। जब इन पड़े शराबियों को छोड़कर

और कोई ग्राहक नहीं आया, तो मेहरो ने गंगो से कहा—"आज का बाजार मन्दा रहा। जाने·· ···" मेहरो की बात रुक गई। तभी उसके सामने एक बुढ़िया के साथ अल्लादिया नाम का व्यक्ति आकर खड़ा हुआ।

बुढ़िया ने आते ही गरूर और रोब भरे स्वर में कहा-"ला, पैसे दे।"

यह सुन कर मेहरो बोली—"अम्मा, आज तो दो-तीन आदमी ही आये।"

यह बात बुढ़िया को बुरी लगी। छूटते बोली—"मैं क्या जानूँ, सीधे-से पैसे लाओ।—कल के और आज के।"

मेहरो ने फिर कहा—"जरा देर ठहर जाओ ना, इतने और जगह से ले लो। एक आदमी के आने का वायदा है।"

अल्लादिया बोला—"तेरे नौकर नहीं हैं, मेहरो।" हाथ में लिये डन्डे को चौखट में मार कर कहने लगा—"जल्दी पैसे लाओ।"

मेहरो ने एक रुपया निकाल कर उसकी तरफ बढ़ाया। बोली—"पहलवान, तुम तो इतने नाराज़ होते हो। पैसे आवें, तो तुम्हें देते क्या बुरा लगता है।"

लेकिन अल्लादिया को रुपया दिखाना भी मानो भारी अपराध हुआ। वह गुस्से का रूप बना कर बोला—"इससे काम नहीं चलेगा। पांच देने पड़ेंगे।"

मेहरो अल्लादिया के इस रूप को देखकर कुछ कांप गई। वह कुछ कहती कि बुढ़िया जरा आगे बढ़ कर बोली— "क्यों पिटने पर कमर बांधी है, मेहरो। आज यह पैसे लिये बगैर नहीं छोड़ेगा।"

इस पर मेहरो ने एक रुपया और निकाला। तब बोली—"पहलवान, अगर पीटना-ही है तो पीट लो। मेरे पास इससे अधिक नहीं है।"

बुढ़िया ने पूछा—"सच कहती है?"

मेहरो ने रुआसे भाव से कहा—"अम्मा, क्या तुमसे झूठ बोलूँगी।"

यह सुन कर बुढ़िया ने अल्लादिया से आगे चलने को कहा। जब वह दूसरी कोठरी के सामने गया, तो दो मिनट बाद ही मेहरो ने अपनी जगह से झांक कर देखा, अल्लादिया ने मारवाड़िन के डन्डा मारते हुये कहा—"अभी पैसे निकाल, औरत की बच्ची !"...

तो मेहरो ने गङ्गो से कहा—"ओह ! बड़ा जल्लाद आदमी है !—यह बुढ़िया भी तो जाने कब मरेगी। हम कमाते हैं, और ये घुड़की की मार के साथ मुफ्त में वसूल करते हैं।" कह कर मेहरो भीतर खाट पर जा पड़ी।

पड़ते-ही, अल्लादिया और बुढ़िया का चित्र इस प्रकार उसकी आंखों के सामने आ गया कि मेहरो उनके कृत्यों को स्मरण करने के साथ, अपने किन्हीं पिछले दिनों को बलात् याद करने लगी।

जो अभी, वह आदमी को फँसाने की चेष्टा में संलग्न थी, अब इस प्रकार रुआसी हो आयी कि जैसे बच्चा अपनी किसी प्यारी वस्तु को छिना कर फूट कर रो देना चाहता हो। इतने में मेहरो को पर्दे के बाहर परिचित स्वर सुन पड़ा। वहीं से बोली—"कौन हजारी ?"

हजारी पर्दे को उठाकर पास आता हुआ बोला—"मेहरो !"

मेहरो हजारी को पाकर, एकाएक उसका हाथ पकड़ कर बोली—"हजारी !"......उसने हजारी की गोद में अपना सिर रख दिया। फिर कहने लगी—"तुम कैसे अभागे हो हजारी !...तुम मुझसे व्याह क्यों नहीं करते ...!"

हजारी छत की कड़ियों को देख कर जैसे अन्तरिक्ष में से कुछ खोज लेना चाहता था। सरल और सूखे गले से बोला—"ईश्वर चाहेंगे तो हो जायेगा मेहरो।" जरा रुक कर वह फिर पूछने लगा—"आज तू रोयी क्यों मेहरो ?"

मेहरो ने उसे छोड़ते हुए कहा—"अपने भाग्य को रोती हूं, हजारी !"

और हजारी ने सीधे हाथ की हथेली पर माथे को टेक कर कुछ सोचने के भाव में इस बात का मानो समर्थन कर दिया। कुछ देर बैठकर वह उठता हुआ बोला—"अच्छा मैं जाता हूं।"

मेहरो ने चौंककर कहा—"कल दिन में आना हजारी। मुझे एक काम है।"

हजारी स्वीकृति में गर्दन हिला कर, कोठरी से नीचे आता हुआ गली की भीड़ में मिल गया।

# सातवां-परिच्छेद

दोपहर के समय, एक आदमी सिर पर छबड़ी रखे, एक कोठरी के सामने आया। वह जिस जगह खड़ा था, वहां पर आस-पास की पन्द्रह बीस कोठरियों की स्त्रियां आसानी से उसे देख सकती थीं। पर, उसका ध्यान केवल अपने मुंह के सामने वाली कोठरी में बैठी स्त्री पर था। उसी कोठरी की मालकिन ने हाथ के इशारे से उसे पास बुलाया। वह जैसे इसी प्रतीक्षा में खड़ा था। तुरन्त कोठरी के पास होकर इस तरह आ खड़ा हुआ, मानो प्रत्यक्ष रूप से उसका दीन चू पड़ना चाहता हो। आते ही निश्छल होकर बोला—"दो आने पैसे हैं!"...

स्त्री होठों से हंसती हुई बोली— "सिर्फ दो आने!"...

"...हां, आज दो ही आने कमा पाया हूँ।"

उस स्त्री का नाम मेनो मशहूर था। वैसे मारवाड़िन थी। पूछने लगी— "सच कहते हो?"

यह सुन कर उसने धोती के पल्ले से एक इकन्नी और चार पैसे निकाल कर दिखाते हुए कहा—"ये दूंगा!...और जो हों, वह सब तुम्हारे!"...

कहने के साथ ही, वह कोठरी से और सटा। साथ ही, वह मेनो रूप में साक्षात-नारी-देह को इस प्रकार देखने लगा, हां, वह अपनी उस धरातल पर आई कपैली और तीक्ष्ण वासना को उस नारी पर छोड़-ही देना चाहता हो! तभी मेनो ने उसके दो आने देखे, और उस पुरुष रूप में उसकी प्रत्यक्ष खड़ी स्थूल दशा को। जाने किस प्रकार अकस्मात ही, उसमें भावना उठी, कि वह अपने हृदय-गह्वर में छिपाये मातृत्व को क्यों नहीं इस पुरुष पर वार देती। और यह जो उद्धत हो आया पुरुष, उस पर गिर जाना चाहता है, वह क्यों नहीं अपनी उस शक्ति को खोल

देती, जो उसके प्रशान्त विश्व में व्याप्त हुई उसे जिन्दा बनाये बैठी है। उस क्षण में सचमुच ही, उसमें टीस उठी और उसने अपने मन की आंखों से देखा उसके वर्तमान से लगा हुआ उसका अतीत उसे क्यों नहीं ऐसा वर देता कि वह इस पुरुष के दो आने लौटा दे, उसे अपनी गोद में ले, उसे प्यार करे और मा का विशाल-हृदय लेकर वह अपने को उसके ऊपर वार दे।—उसके सब दुर्गुणों को क्षमा कर दे। और कहे, मेरे लाल!—तुम्हीं तो मेरे बच्चे हो ना!···

पर मेनो ने उस पुरुष से कुछ नहीं कहा। वह उदास और खिन्न बन गयी। आध घन्टे बाद जब वह आदमी उसकी कोठरी से नीचे उतरा तो बलात् उसके अन्तः ने उसकी पीठ पर ही चीख कर कहा—"अरे, पुरुष!···काम और भोग के पुतले!··· हाय, दिन भर की मजदूरी के दो आने, यों ही, इस राह पर बहा गया। जाने क्यों, मेनो के माथे में और अधिक सलवटें आयीं, और वह अपनी छाती को दबाती हुई बोली—"पागल कहीं का! जिन पैसों की उसे दो रोटियां खानी थीं, वह यहां दे गया।—आंख मूंद कर दे गया···!"

हाथ में लिये उन दो आनों को मेनो ने फिर मुट्ठी खोल कर देखा और उन्हें नाली के पानी में फेंक कर बोली—"जाने मैं ही क्यों विधाता ने इस पाप-पथपर डाल दी हूँ···!"

आज उस मेनो ने फिर याद किया, वह एक दिन विधवा थी, और केवल तीन सौ रुपये में बिक कर, जाने कितनी घाटियों के चक्कर काटने के बाद इस टेक पर आ टिकी है। और जाने···इतने में नाली साफ करता हुआ भंगी आया, उसने वह दो आने देखे, फिर मेनो की ओर देख कर बोला—"सेठानी···यह दो आने ····?"

"अरे हां, ले जा यह दो आने!" कहते वह झटके से खड़ी हुई और अपनी खाट पर पड़ते ही जाने कब के रुके आंसुओं को एक बारगी बहा बैठी।

दूसरे दिन के प्रातः में जब मेनो अस्पताल पहुँची, तो उसने देखा, वही कल का हट्टा-कट्टा मजदूर, एक ओर उदास मुँह किये बैठा था।

उसे देखते ही मेनो का हृदय चीख उठा—हाय ! हाय ! किन्तु साथ ही, ऐसी विषाद भरी आंखों से उसे देखा कि जिसमें न केवल उसने उसके लिये खुली प्रतारणा थी, अपितु, ग्लानि और घृणा के भाव भी स्पष्ट हो आये थे। अस्तु !

अपने काम से छुट्टी पाकर, जब हजारी मेहरो की कोठरी में आया, तो एक दम मेहरो से न मिल सका। दरवाजे पर बैठी गंगो ने पूछा—"हजारी, आजकल कितने पैसे कमा लेते हो ?" कहने के साथ-ही, उसने अपने हाथ में ली सुलगी सिगरेट हजारी की तरफ की। फिर बोली—"धेली-बारह आने पड़ जाते हैं या नहीं ?"

हजारी ने सिगरेट में दम लगा कर कहा—"कहां, मुश्किल से चार या छः आने।" कहते, उसने सिगरेट फिर गंगो की ओर बढ़ाई।

गंगो ने कहा—"तुम्हीं पियो।"—फिर पूछने लगी—"आजकल लोगों के पास पैसा नहीं, क्यों हजारी ?"

हजारी ने सिर हिला कर इस बात की पुष्टि की। जरा देर की चुप्पी के बाद गंगो अचम्भे से बोली—"हजारी देख, उसे देख, जींगड़ा-सा उस कोठरी के पास खड़ा है !"...

हजारी ने उठकर देखा, कोई बारह साल का लड़का अफरीदी स्त्री से बात कर रहा था, जो गंगो की कोठरी से बीस-तीस कोठरी छोड़कर रह रही थी। हजारी ने देखा, लड़का वहां से इस प्रकार पीछे को हटा, जानो वह अज्ञात-भाव से इस ओर चला आया हो। जब वह गंगो के पास से निकला, तो उसने पुकारा—"अरे, सुनियो।"

पर जैसे उसने गंगो के भाव को ताड़ लिया हो। लज्जा से भीगा, केवल एक बार गंगो की ओर देखकर आगे को बढ़ गया। गंगो उसके इस पटु-कर्म को देखकर अपने-आप भुनभुनाहट के स्वर में बोली—"आदमी के बच्चे !...अभी तो दूध भी नहीं सूखा !"...हजारी से कहने लगी—"देखा, कैसा चतुर लड़का था। उस अफरीदनी ने खूब उल्लू बनाया होगा, हजारी !"...

हजारी ने ईर्षित ढंग में कहा—"किसी बड़े घर का जान पड़ता

था, तभी तो इस ओर चला !"

इतने में मेहरो आ गई। आते-ही, हजारी से बोली—"तुम जरा खाट पर जा बैठो हजारी। मैं नहा लूं।"

मेहरो ने स्नान किया। खूंटो से उतार कर धोती बदली। फिर आले में रखी कागज में से कृष्ण की तस्वीर निकाल कर अपने सामने रखी। आंख मूंदते हुए उसने अपने दोनों हाथों को जोड़कर प्रार्थना की। पांच मिनट में पूजा को समाप्त करने के बाद, तस्वीर को पूर्ववत रखकर, हजारी से बोली—"हजारी आओ, रोटी खा लें।"

हजारी ने कहा—"तुम्हीं खाओ।"

मेहरो बोली—"आये भी। अभी क्या खाई होगी ?"

लेकिन हजारी ने फिर भी मना किया। यह सुनकर गंगो, जो अब अपनी पवित्र, और अपने धन्धे से अछूती धोती बदल कर खड़ी थी, हजारी का हाथ पकड़ कर बोली—"तुम तो मिनती कराते हो हजारी !—आओ, उठो।" और उसे उठा कर थाली के पास ले गई।

पर चौके में इतने बर्तन नहीं थे, जो तीन आदमी अलग बैठकर रोटियां खा पाते। मेहरो ने एक ही थाली में दाल और रोटियाँ करके बीच में रख लीं।

इस समय जैसे ये थोड़ी देर के लिये अपना व्यवसाय भूल गयी थीं। हजारी उनकी खिलोड़ो का केन्द्र बना। कभी मेहरो कोई बात छेड़ती और कभी गंगो ऐसी बात कह डालती, जिससे हंस कर इस दाल-रोटी में जो छोंक लगने, और हलके हाथ से चुपड़ने के अतिरिक्त ज्यादा घीदार नहीं थी। और ना ही विशेष मसालेदार। पर इन तीन के एकत्र होकर खाने में शायद उन्हें मिठाई और चटपटी वस्तु से कम जायका नहीं लग रहा था।

खा चुकने पर, मेहरो और गंगो ने फिर अपनी पहिली पोशाकें पहनीं। धोतियां पूर्ववत टांग दी गयीं। किवाड़ खोल कर गंगो फिर दरवाजे पर बैठ गई।

मेहरो ने हजारी से पूछा—"देश की कोई खबर आई हजारी ? अब

की कैसी फसल हुई कुछ पता लगा ?"

हजारी ने उत्तर दिया—"चिट्ठी तो आई नहीं। गांव के पास का एक आदमी मिला था, वह तो कहता था, बरसात से फसल चौपट हो गई !"

मेहरो ने यह सुनकर जैसे किसी स्वजन की याद की। सांस खेंच कर बोली—"आज कितनी तारीख होगी हजारी ?—पहली है ना ?"

हजारी ने स्वीकार करके सिर-भर हिला दिया।

मेहरो ने फिर कहा—"हजारी एक काम कर। मैं तुझे बीस रुपये देती हूं, एक पैसा देकर मनीयार्डर फार्म भरवा, दौलत के नाम बीस रुपया भेज दे।" कह कर वह कोठरी के एक कोने से बंधी पोटली में से रुपये लाकर बोली—"यह ले रुपये।— और देखियो, फार्म में जो नीचे लिखने की जगह होती है, उसमें लिखवा देना, मैं पचास रुपये नहीं भेज सकती। ये बीस भी बड़ी मुश्किल से भेज रही हूं। अगर हो सका तो अगले महीने की पहली तारीख को और कुछ भेजूंगी।"

जब हजारी चलने के लिये उठा तो मेहरो ने पूछा—"अब आयेगा हजारी ?"

हजारी बोला—"अब क्या आऊंगा ?"

"तो कल आइयो।"

"देखा जायगा।" कह कर हजारी कोठरी के नीचे उतर चला।

इस समय किसी पुरुष को न आते देखकर, मेहरो गंगो के पास जाकर बोली—"कोई सिगरेट है गंगो ?"

गंगो ने रात को एक आदमी से सिगरेट की डिबिया ऐंठी थी, जिसमें अभी तीन बाकी थीं। ऊपर आले से डिबिया उठा कर बोली—"ले।"

जब मेहरो ने एक सिगरेट सुलगाई तो ऊपर को घना-सा धुंआ फेंक कर उसने बाहर की तरफ ध्यान से देखती गंगो के मुंह की ओर देखा।

ऐसे समय ये नारियां, जो जरा फुरसत का अनुभव करतीं, कोई अपनी कोठरी में बैठी गाती, कोई रात की नींद को पूरा करती और कोई आस-पास की स्त्रियों में बैठकर व्यवसायिक और निजी बातें करके अपना मन बहलातीं।

इसी के साथ इन स्त्रियों में एक स्वभाव और उत्पन्न हुआ, जो इस समय वही गंगो में भी उदय हुआ। वह अपने मूढ़े पर बैठी एक दूर की कोठरी की ओर देख रही थी। जिसमें बैठे हुए दो-तीन पठान एक अफरीदन से बातें कर रहे थे—जैसे सौदा कर रहे हों। अफरीदन इस तरह चंचल और बेढंगे ढंग से अपने शरीर का तोड़-मोड़ कर उनसे बोल रही थी कि जो गंगो को भला नहीं लगा। और इस भला न लगने के परिणाम स्वरूप गंगो के चेहरे पर गहरी वेदना प्रकट हो आयी थी। वह घुटनों पर ठोढ़ी धरे अधमिची आंखों से अफरीदनी को इस प्रकार देखने लगी, जो द्वेष और स्पर्धा के साथ, यह कहना चाह रही थी, अरी, तू औरत!... तुझे जरा भी याद नहीं कि तू औरत है। तुझे पुरुष के सामने इस तरह खुल नहीं जाना चाहिये!...आह, औरत!...

किन्तु, इसी के साथ गंगो के हृदय में एक और जलन उठ रही थी। वेदना सी भीषण और कठोर! किसी ओर से उसने अपने से पूछा—"क्यों गंगो, भला ये पठान तेरे पास आयें तो? .. तुझे भी तो यही रूप रचना पड़ेगा!— इस प्रश्न के साथ वह अपने में खो गयी थी।

—कि मेहरो ने पूछा—"क्या सोच रही है गंगो?"

गंगो का ध्यान टूट गया। मानो वह अन्तरिक्ष से फिर भूतल पर आ गिरी। चौंक कर बोली—"कुछ नहीं!" फिर कहने लगी—"यह पेट भी, जो न कराये थोड़ा है मेहरो। देखियो, वह अफरीदनी कैसी ललचाकर उस पठान को पकड़ रही है!"...

मेहरो ने उठकर इस देखने को कोई महत्व नहीं दिया। बैठे-ही उत्तर में बोली—"जिस दिन रामजी इस पेशे को छुड़वायेगा, मैं परशाद

बाटूंगी, गंगो !" वह सिगरेट की राख को जमीन में छोड़कर पैर के अंगूठे से इस तरह मिटाने लगी, मानो अकस्मात जो उसमें गहरी वेदना व्याप्त हो गई थी, उसको वह मिटा ही देना चाहती थी।

गंगो ने फिर कहा—"पर ये मुयी तो बड़ी खुली हैं। ऐसा भी क्या, कुछ तो शर्म करें !"...

यह सुन कर मेहरो को और वेदना मिली। तपाक से बोली—"शर्म करें गंगो !"—तभी कहने लगी—"मेरे पड़ोस में यह मारवाड़िन जब आई थी, तो कितनी शर्म करती थी, याद है ! तू भूली नहीं होगी गंगो, तूने ही तो एक दिन खाने के लिये उसे आटा दिया था। पर आज वह भूखी नहीं है। अब पहिले की तरह एक-एक पैसे को नहीं भटकती है।"—वह खुले आसमान को देख कर बोली—"अब वह हम दोनों में अधिक कमा लेती है गंगो।"...और भूल गयी बेचारी रूपा, चमेली और गजरी की बात, तेरे देखते-देखते यहां आयीं और शर्म के कारण भूखी मरने पर ही अपने शहर कानपुर और बनारस चली गयीं।" तभी घोंटे पर ठोढी रख कर मेहरा ने कहा—"इन तीनों ने मुझे बताया था गंगो, हम दो-दो सौ में खरीद कर गुन्डों द्वारा अपने घर कानपुर और बनारस से भगायी गयी थीं। और अब जाने कहां होंगी !"...

गंगो कुछ रुक कर बोली—"कुछ भी हो मेहरो, मैं औरत को निर्लज्ज नहीं देख पाती। मैं स्वयं इसी गिनती में हूं। पर सच जानो बहिन, यही बात मुझे रात-दिन कोंदती है कि मैं निर्लज्ज किस प्रकार बन गयी हूँ !"...सड़क पर थूक कर बोली—"यह आदमी भी तो कैसे मंडराते हैं, जानो, हम इनके लिये बढ़िया गोश्त की बोटियां रूप में यहां आ पड़ी हैं !"

मेहरो ने गहरी भावना के साथ, गंगो की ओर देखा। बोली—"गंगो बहिन, जब बाजार लगता है, खरीदार आते-ही हैं। लेकिन हम जो लाचारी में यह दुकान खोल कर बैठी हैं, अपनी गरज के लिये'ना ! अगर ये दुकानें न हों, तो कौन आयेगा ! ये मिलों के शराबी मजदूर,

जिनकी तुम पूरी तनख्वाह ले लेती हो, फिर क्या इस तरह डोलेंगे! ये...

बीच में गंगो कह उठी—"और इनकी औरतें जो अपनी लाज को ढके घरों में पड़ी रहती हैं,—कुछ उनके दर्द का भी तो अन्दाजा लगाओ मेहरो!"...

मेहरो ने कहा—"इसमें क्या कहना! ये अन्धे और कामी बन कर, महीने भर की कमाई शराब और हम लोगों में खोते हैं, वह चूल्हे की जड़ों में पड़ी रोती हैं।" रुक कर कहने लगी—"हमारी इस गली में ही पचासों ऐसी निकलेंगी, जो ऐसे ही दुःखों की मार खाकर यहां आ बसी हैं!"

इतने में एक आदमी उधर से आ निकला। वह गङ्गो को देख कर बोला— "कहो ठाकुराइन अच्छी हो।" वह आकर बैठा, और गंगो की ओर सिगरेट बढाता हुआ बोला—"लो पियो ठाकुराईन! गंगो ने सिगरेट ले ली। और उसने चाहा कि पूछे तुम्हारी क्या इच्छा है। किन्तु आदमी उसी समय उठता हुआ बोला—"अच्छा चलूंगा ठाकुराईन।" कहने के साथ वह उठा, और एक दुअन्नी गंगो की ओर बढ़ा कर उसके हाथ को दबाता हुआ बोला—"तुम बड़ी अच्छी हो ठकुराईन!—बड़ी अच्छी!"

जब वह चलने लगा, तो गङ्गो ने अनायास पूछा—"तुम्हारा कौन सा गांव है, चौधरी?"

चौधरी ने कहा—"आगरे के पास मदनपुर।"

"मदनपुर?"...गङ्गो ने आश्चर्य से पूछा—"तो......"कहते वह चौधरी के मुँह को देखने लगी। इतने में चौधरी बढ़ चला। उसने मेहरो से कहा—"यह आदमी मदनपुर का है।"

मेहरो चौंक कर बोली—"तेरे गांव के पास जो मदनपुर है, उसका?"

गंगो ने कहा—"हो, उसी का। और वह इस तरह उसे जाते देखने लगी, जैसे वह कोई भारी अपराध, या कोई नयी बात करके जा रहा हो।" जब वह आंखों से ओझल हो गया, तो गंगो के सामने

अफरीदनी पर उठी भावनायें, स्पष्ट रूप से अपने ऊपर चरितार्थ हो गईं। खाट पर जाकर वह भरी आंखों से छत की कड़ियां देखने लगीं। मानो अनायास इस नारी-हृदय में रत्नाकर की तरह, ज्वार उठ आया हो, जो उसके वास्तविक रूप को खोल कर विश्व-भर को मिटाने के लिए, व्यग्र और आतुर हो गया था। उस अवस्था में पता नहीं, गंगों कब तक उसी अशांत धारा के सदृश, आंखों का पानी .बहाती रही। क्योंकि आज उसने जाना, वह अपने को खो चुकी है। उसमें गंगो नाम का प्राणी पतित हो गया है!—निर्लज्ज हो गया है!···

# आठवां-परिच्छेद

हिन्दू-समाज में अपने त्यौहारों के प्रति उल्लास और गर्व जो सदा से चला आया है. उसी प्रकार, उस दिन भी, दशहरे का दिन था। रात को राम की विजय-यात्रा के समय, सजे हुये लोगों की तरह शहर के बाजार भी अपनी रौनक से चमक उठे थे। राम के रथ के साथ जो अनेक प्रकार के वाध्य-यन्त्र बज रहे थे, उसी सरसता के साथ, ये बाजार की लड़कियां भी, आज अपने मुँहों पर पाऊडर पोत कर, ओठों पर लाल रंग लगाये, उन चमकीली साड़ियों में ऐसी दिखाई दे रहीं थीं, मानो हिन्दू समाज की तरह ये भी श्रीरामचन्द्र की विजय पर अपने को समर्पित करने के लिये छज्जों पर खड़ी हो गयी थीं। उस रात के पहर में बाजार में, सभी श्रेणी के व्यक्ति आ एकत्र हुये थे।

किन्तु भगवान राम की सवारी देखने के लिये जो भीड़ एकत्र हो आयी थी, कदाचित उसकी समूची उत्सुकता छज्जों पर खड़ी लड़कियों के प्रति झुक गयी थी। और कैसे आश्चर्य की बात थी, कि पुरुष समाज इन लड़कियों को देख तो रहा था, पर मानो, लड़कियां उसके लिये अलभ्य थीं, अमोल थीं। अथवा वह उससे दूर की—बहुत दूर की—एक नयी मीठी कल्पना के रूप में सामने आ गयी थीं, जिन्हें वह देख ही सकता था, बोलने या पाने का अधिकार नहीं पाये था। और ये लड़कियां भी, जो मानो सचमुच-ही दूर थीं, आपस में कभी हंसती,

और कभी अंगड़ाइयां लेकर नीचे भीड़ की ओर गहरी निगाह से देखतीं।

इसी समय दुअन्नी बाई के कोठे पर एक घटना घटी। जिस प्रकार वेश्याओं के कोठों पर गृहस्थों की स्त्रियां और पुरुष सवारी देखने के लिये आये, उसी प्रकार दुअन्नी के कोठे पर एक बाबू का नौकर तीन-चार स्त्रियों को लेकर ऊपर आया। दुअन्नी ने उन्हें अलग से ऊपर जाने की राह बताई। किन्तु जैसे-ही वे स्त्रियां ऊपर जाने लगीं, तो एक तरुण लड़की ने कहा—"मा, यहां वेश्या के घर पर?"

उसी समय दुअन्नी की बड़ी लड़की मोती, पास ही के कमरे के द्वार पर खड़ी थी। तभी, उस लड़की ने बात कहने के बाद ही, जाने कैसी निगाह के साथ मोती की ओर देखा। मोती ने सिर्फ यही देखा, उसे देखने के साथ, उस लड़की के माथे में सलवटें पड़ गई थीं।

लड़की की मा ने क्या कहा, यह मोती नहीं सुन पायी। वह द्वार पर उसी प्रकार तटस्थ खड़ी रही। लेकिन वह लड़की और उसकी मा अभी जीने से ऊपर चढ़ ही रहीं थी कि कोठे पर आये दुअन्नी के एक मेहमान मुसलमान युवक ने उस लड़की की ओर देखा। जाने कैसे उसकी आंखों में उन्माद और गहरी वासना एक दम झलक आयी थी इस समय मोती जो लड़की को ऊपर जाती हुई देख रही थी—जाने कैसे देख रही थी—जब उसने उस मुसलमान युवक की आंखों को उस लड़की की ओर देखा, तो जैसे वह सब ओर से छूट कर ठीक अपनी स्थिति में आ गई हो। तभी वह युवक जीने की तरफ चला। मोती ने उसके पीछे ही तपाक से कहा—"अब्दुल कहां जा रहे हो!—वहां घरों की स्त्रियां बैठी हैं।" कहने के साथ ही, उसने इस तरह अब्दुल की ओर देखा, कि जानो, वह बरबस उसकी अन्तड़ियों में घुस जाना चाहती हो।

मोती की आवाज पाकर अब्दुल रुक गया। पास आकर बोला—"ऊपर जाने की इतनी सख्त मुमानियत है, मोती?" तभी उसने कुछ ठहर कर कहा—"यह जो लड़की अभी गयी है, तुमने इसकी आंखें नहीं देखीं मोती। जो शराब की तरह चू रही थीं!"······

इस बात को सुन कर मोती उसे घूरने लगी ! वह जैसे उसकी आंखों में घुस जाना चाहती हो। बोली—"तुम्हारा जोश इतना बढ़ा हुआ है, अब्दुल !...पता है, अगर यह लड़की तुम्हारे घर में होती, तो तुम इसे अपनी बहिन कहते" कह कर, मोती ने सड़क की ओर आंख फेर लीं। उसकी परिचित दुल्लो ने आज केले और आम के पत्तों से छज्जा सजा कर, उनमें इस तरह बत्तियां लगायीं, जैसे उसके यहां कोई उत्सव हो। मोती ने उन्हीं पत्तों पर अपनी आंखें डाल दीं।

उसी समय अब्दुल बोला—"तो तुम क्या होती मोती ?"

मोती ने बात सुन कर फिर उसकी ओर मुँह किया। अब्दुल की मुसकराहट देख कर, वह खीजते हुए स्वर में बोली- "हँसते हो, अब्दुल ! अगर अपने घर की किसी लड़की को ऐसा कहते तो ठीक होता !"......

पर अब्दुल ने बात का कुछ ही अन्श सुना। फिर बोला—"आज क्या माजरा है मोती ?—आखिर इतनी नाराजगी क्यों ?" कहता हुआ वह कमरे की तरफ चला। लेकिन मोती एकान्त पाते ही इस विषय में अधिक गम्भीर हो गयी। इतने में दुअन्नी ने आकर कहा—"मोती, तू यहां खड़ी है ! मेहमान लोग कमरे में बैठे हैं। वह बाबू साहब तुझे पूछ रहे हैं। और मियां अब्दुल भी आ गये।"
मोती कुछ न कह कर कमरे में गयी। हीरा के पास बैठते-ही उसने धीरे से कहा- 'यह अब्दुल ऊपर न जाने पाये हीरा। ध्यान रखना। ऊपर भली स्त्रियां बैठी हैं।"

लेकिन अब्दुल में जैसे इतनी शक्ति नहीं थी कि वह अपने उठे विचार को रोक लेता। शायद यही कारण हो जो वह एक नवाब का लड़का होकर, इस दुअन्नी और चवन्नी के यहां बसी लड़कियों पर, अपनी जागीर और घर का सब माल कुर्बान कर बैठा था। जिस मोती की वह कटी हुई बात सुन कर आ बैठा था, उसी पर वह हजारों रुपया पानी की तरह बहा चुका था। लेकिन आजकल दुअन्नी की नयी लड़की चमेली उसके रुपयों का खिलौना थी।

इसी समय राम का रथ बाजार में आया।

जब सब छज्जे पर जलूस देखने लगे, तो अब्दुल मोती की आंख बचा कर फिर उसी ओर गया। पर जैसे ही अब्दुल ने सीढ़ियों पर पैर रखा, हीरा ने पीछे से चिल्ला कर कहा—"अब्दुल, अभी ऊपर मत आओ।"

—और अब्दुल के जैसे जोर का चपत पड़ा हो। हीरा के पास होकर दस रुपये का नोट आगे बढ़ाता हुआ बोला—"जरा चुप रहो हीरा, मैं एक लड़की को भरी निगाह से देखना चाहता हूँ।"

हीरा कुछ कहती, कि इतने में आवाज सुनकर मोती भी आ पहुँची। अब्दुल के हाथ में नोट देख कर बोली—"क्या खां साहब रिश्वत दे रहे हैं?"

मौत के मारे अब्दुल के मुँह से निकल पड़ा—"दे तो रहा हूं, अगर मन्जूर करो।" यह सुन कर मोती जैसे तड़प गयी। घनी पीड़ा के स्वर में बोली—"देखूं तो!" कहते उसने अब्दुल के हाथ से नोट ले लिया। फिर बोली—"यह इसीलिए ना, आप 'ऊपर जाकर उस लड़की को तार्कें—और मौका मिले तो कुछ छेड़खानी भी करें!—क्यों नवाब साहब?"

"तुम पागल हो गई हो मोती! तुम्हें आज हो क्या गया है?"

"नवाब साहब, मैं पागल नहीं हो गई हूं।" नोट के कई टुकड़े करती हुई कहने लगी—"यह तो मैं नाली में फेंक रही हूं, और आप से कह रही हूं, इज्जत के साथ छज्जे पर चलें। चाहें तो तशरीफ भी ले आ सकते हैं।"—क्षणिक रुक कर, करुणाभरी आंखों से अब्दुल को देख कर बोली—"मैं तुम्हारी इज्जत करती हूं, अब्दुल! इसलिए कि तुम हमारे पुराने ग्राहक हो।—मोती कांप रही थी।—"और सुनो, मैंने जो तुम्हारे रुपयों का पानी बना कर दिया है, इसने मुझे सिखाया है अपने को बर्बाद करके कम से कम इतना तो करूँ ही, कि अगर मनुष्य एक स्त्री को नर्क में डालना चाहता है तो उसे अपनी आंखों देखते बचाने की चेष्टा करूँ।"—तभी धीरे से बोली—

"यह भी इसलिए तुम-ही जैसे कामी पुरुष, इन नारियों को न दीन का रखते हैं न दुनिया का।—क्यों ठीक कहती हूं न, मियां अब्दुल!" कहते हाथ में लिए नोट के टुकड़ों को नाली के पानी में छोड़ दिया।

अब्दुल को जैसे काठ मार गया था। यदि वह दरवाजे का सहारा न लिए खड़ा होता तो बहुत सम्भव था, वह गिर पड़ता। कुछ देर रुक कर वह बिना कुछ कहे, जीने से उतर कर नीचे सड़क की भीड़ में मिल गया। जबकि आज शहर-भर खुशी के उल्लास में था। कुछ देर के पहले का अब्दुल अब बे-जान होकर एक ओर को बढ़ चला।

वहां से मोती छज्जे पर पहुँची। जलूस का आखिरी भाग उसके सामने आ गया था। जब रथ ठीक उसके छज्जे के सामने आया तो उसने देखा, छज्जों पर बसने वाली कितनी ही लड़कियां रथ पर फूलों की वर्षा करने लगीं। इसी के साथ, वह देखने लगी, दुअन्नी ने बड़ी शिष्टता के साथ, रथ में बैठे भगवान रूप में लड़कों को प्रणाम किया।

तभी मोती ने रथ से आंख हटाकर एक लम्बी सांस छोड़ दी। वह शून्य में धुँधले तारों से छिपे आसमान को देखने लगी। कदाचित् सैकड़ों आदमियों के समुदाय में मोती ही ऐसी दीख पड़ी, जो ऐसे समय, नीचे न देख कर ऊपर देख रही थी। आंखों को नीचे डालने के साथ ही उसने कोरों में आये पानी को आंचल में ले लिया।

और जब मोती छज्जे से हट कर अपने कमरे में पहुँची, तो वह रो तो नहीं पड़ी परन्तु रोने से पूर्व की स्थिति जरूर उसके सामने आ गयी थी।

इसी समय बड़े कमरेमें दुअन्नी आगन्तुकों की खातिर करने का हुक्म दे रही थी। जब गृहस्थ की स्त्रियां चलने लगीं, तो मोती अपने कमरे के दरवाजे पर आकर एक-एक को देखने लगी। कुछ लड़कियों के साथ वही लड़की मोती के कमरे के सामने आई। मोती को लक्ष करके उसने अपनी साथिन से कहा—"देखा यह खड़ी हैं बाईजी!"—साथ ही उसने इस प्रकार मोती की ओर देखा, जैसे वह घृणा के साथ मोती के मुंह पर थूक देना चाहती हो।

मोती उसी प्रकार खड़ी थी। चाहती तो हट जाती, पर जैसे वह

यह-सब सुनने के लिए ही खड़ी थी। तभी उसने गाती हुई हीरा का स्वर सुना, जो वह गा रही थी—

"क्यों कतरे तुझमें आब नहीं, ना चीज न बन, आला बन जा।
आ निकल सदफ की जुल्मत से, तू लूलू से लाला बन जा॥"

मोती उसी ओर चली, आज उसे पहल-पहल जान पड़ा, हीरा बहुत सुन्दर गाती है। जब वह लड़कियों के पास जा बैठी, तो इतने में कमरे में चार बाबू आये। सभी युवक। कोई खद्दर में, कोई साहबी पोशाक में। नरेन्द्र को छोड़कर, एक वही पूर्व परिचित प्रोफेसर, और रईसजादे श्याम बाबू के अतिरिक्त एक अखबार के रिपोर्टर। नरेन्द्र आज भी सबसे पीछे था। आते ही मोती की ओर उसकी चार आंखें हुईं। उसके बैठने ही मोती ने कहा—"इधर आइये न कोने में कैसे बैठ गये?"

"नहीं, नहीं, ठीक बैठा हूँ।" नरेन्द्र ने कहा।

लड़की हीरा, अब तक दो तीन गाने गा चुकी थी। एक साहब ने दुअन्नी से फरमायश की—"कोई चीज मोती बाई को भी हो न?"

यह सुन कर मोती स्वयं हीरा के पास बैठ गयी। सम्भव था, किसी और समय मोती इस फरमाइश की कद्र न करती। पर इस समय, न जाने क्यों, वह स्वयं हीरा की जगह गाना चाहती थी। जब वह उठ कर हीरा के पास बैठी, तो उसने देखा, प्रोफेसर ने उसे लक्ष्य करके नरेन्द्र से कुछ कहा है। वास्तव में उसने मोती द्वारा नरेन्द्र के प्रति ऐसा सम्मान देखकर ही पूछा था—"क्यों मित्र, तुम तो आने में इतनी आना-कानी कर रहे थे—सच कहना, यह पहचान और मुरौव्वत कब की?"

नरेन्द्र ने कहा था—"यहां आने का यह तीसरा अवसर है प्रोफेसर। एक तो तुम्हारे साथ, दूसरा बाद में और तीसरा आज।"

यह सुन कर प्रोफेसर हँस पड़ा। बोला—"खूब! इस पर भी आने में इतनी खुशामद!"

श्यामबाबू ने कहा—"जौहरी के और अर्थ क्या होते हैं!"

इतने में मोती ने गाना शुरू किया—

"लाऊँ वह तिनके कहीं से आशियाने के लिये।

बिजलियां बेताब हों जिनको जलाने के लिये।"...

प्रोफेसर बोला—"खूब!—नयी चीज है। हां, इस मिसरे को फिर से कहो बाई।"

"दिल में कोई इस तरह की आरजू पैदा करूँ।
लौट जाये आसमां मेरे मिटाने के लिये!
पास था नाकामिये, सैयाद का ऐ, हम सफीर।
वरना मैं और लड़ के आता, एक दाने के लिये।"...

नरेन्द्र ने कहा—"अच्छी चीज है।"

मोती ने आगे गाया—

इस चमन में मुर्गे दिल गाये न आजादी के गीत।
आह! यह गुलशन नहीं, ऐसे तराने के लिये।"..

नरेन्द्र अपने-आप बोला—बहुत सुन्दर! "आह! यह गुलशन नहीं..." और मोती की ओर देख कर बोला—"इस मिसरे को फिर से कहो बाई!"

मोती ने मिसरे को दुहराया। इतने में पहले व्यक्ति उठ कर चले। इसी समय दीवार पर की घड़ी तीन बजा रही थी। लेकिन उस रात में जैसे समय की पड़ताल नहीं की जानी थी। क्योंकि भगवान रामचन्द्र की विजय जयन्ती पर, इन नारियों के साथ पुरुषों को हर्ष मना लेना भी जैसे अनिवार्य हो गया था।

घण्टे की आवाज पाकर दुलारी अपने कमरे में सोने चली गयी। केवल लड़कियां और ये चार बाबू रह गये। प्रोफेसर ने कहा—"बाई जी, अब गाने को बन्द करो।—कुछ बातें भी तो हों।"

इस तरह लड़कियां हाथ-पर-हाथ रख कर बैठ गयीं। पर प्रोफेसर को यह ही न सूझ पड़ा, किस रूप में बातों का सिलसिला छेड़ा जाय। रिपोर्टर ने इस बात को ताड़ लिया। व्यंग और हास्य-मिश्रित बोल में कह उठा—प्रोफेसर साहब, कोई साइकोलेजी का प्रश्न कीजिये ना?"

इस पर श्यामबाबू ने कहा—"अरे भाई, अब तो वह बुढ़िया चली गई, कोई मतलब की बात हो ना?"

बुढ़िया से अर्थ दुअन्नी से था। नरेन्द्र बोला—"बुढ़िया से इतनी घृणा करते हो, श्याम ?"

"घृणा तो नहीं, डरता हूँ।"

यह सुन कर सब लड़कियाँ हँस पड़ीं।

नरेन्द्र ने पूछा—"लेकिन आज, यदि उस पर रूप होता तो ?"

"तो···" श्याम ने जरा रुक कर कहा—"वह भी आंखों से देखने की वस्तु होती। और···"

मोती बीच में बोली—"तो यों कहा जाय, बाबूसाहब रूप के भूखे हैं !"···

श्याम ने छूटते ही कहा—"बेशक ! मैं ही क्यों, संसार चाहता है।"

यह सुन कर नरेन्द्र ने गम्भीर होकर कहा—"श्यामबाबू तब तो मैं कहूं, इस टेक पर टिक कर तो तुम जरूर धोखे मेंरहोगे। तुम सदा ही वास्तविकता से दूर रहोगे। यह ठीक, तुम सुन्दर चीज को देख कर उसकी ओरझुको, पर इस मानव के लिये तो यह बात नहीं लागू होती, श्यामबाबू !"

"मैं जानता हूं तुम सुन्दर स्त्री के रूप के प्रति झुके हो, पर वह अन्दर भी उतना ही सुन्दर होगा इसका क्या भरोसा। दिल कुरूप स्त्री के भी पास होता है, जो शायद सुन्दर स्त्री से स्वच्छ और पवित्र।"

रुग्न और अधीर स्वर में प्रोफेसर ने श्याम की ओर देखकर कहा—"मैं तुम्हारे भाव को समझता हूँ, श्यामबाबू ! तुम्हारी बात है, यह लड़कियां सुन्दर हैं इसलिये हम इनके पास आते हैं। किन्तु मैं कहूँ, पुरुष यहीं पर बड़ी भारी मूर्खता भी करता है और वह यह कि वह इनके पास आता है, अपना लक्ष साधता है, अपने को निसार भी करता है, पर कहता यह है कि ये त्याज्य हैं।"

श्याम, जिन्हें तुम केवल रूप बेचने वाली कहते हो, इनके हृदय में भी मोह, ममता और प्रेम है, पर तुम देख नहीं सकते।' वह सिगरेट का धुंआ निकाल कर बोला—"वह मनुष्य की वासना में मिल चुका है श्यामबाबू !"···

नरेश बोला—"उस दिन का इतिहास अदृश्य नहीं हो गया है, जब भारत तप्त कड़ाहे में पड़ कर भुन रहा था। अर्थात् सत्तावन के युग में, जो गौरव उठ खड़ा हुआ था, इन नारियों ने ही सैनिकों की नसों में किस प्रकार जोश भरा, वह गाथा इतिहास के स्वर्णाक्षरों में लिखी जायगी। उस लाल घड़ी में जो सैनिक अपनी परिचित नारियों के यहां पहुंचते थे, उन्हें दरवाजे से कह दिया जाता था—"खबरदार! तुम हमारे यहां न आ पाओगे! देश पर विपत्ति के बादल आये हैं, और तुम अपनी वासना की तृप्ति करने चले हो!—प्रोफेसर"—वह कहने लगा—"इस प्रतारणा ने सैनिकों के हृदय में जान डाल दी थी! तभी देश ने सुना, हजारों अंग्रेज बच्चे मिटा दिये गये। जेलों से कैदियों को मुक्त कर दिया गया। पेशवा की फौज को रसद पहुँचाने का काम एक वेश्या का था। इतिहासकार ने बतलाया है, वह दिन-भर घोड़े पर चढ़ी कभी शहर में, और कभी फौज में। जब सैनिक लड़कर विश्राम लेते, वह मा बन कर, उन्हें पुचकारती। लड़ाई का महत्व बताती, और वह उन्हें आदेश देती, तुम मा के लाल हो। तुम्हारी मां संकट में है। वह परतन्त्र है। तुम्हें उसकी बेड़ियां तोड़नी-ही होंगी। तुम उसके ऋणी हो। उसने अपना सर्वस्व खोकर तुम्हें जन्म दिया है। उसके स्वत्व के लिये तुम्हें मर मिटना ही होगा।"

नरेन्द्र फिर कहने लगा—"किन्तु आज, उन बातों का कोई महत्व नहीं रह गया है, प्रोफ़ेसर! विश्व का नियम है, वह ऐसी बातों को प्रश्रय नहीं दिया करता, जो उसके मार्ग में अवरोह हों। यह समाज का भयङ्कर स्वार्थ है। हम जिस बात को लेकर, इन नारियों को अपने निकट देखना चाहते हैं, वस्तुतः वहां दूसरी-ही स्थिति काम करती है। हमें इनके प्रति सहानुभूति है, दया है, प्रेम है, किन्तु जहां अपने में मिलाने का प्रश्न आता है, उस समय सबका अस्तित्व मिट कर केवल स्वार्थ रहता है, और दम्भ! प्रोफेसर,—वह बोला—"समाज के दम्भ-ही ने इन नारियों को इन राह पर पटक दिया है। केवल इन्हीं नारियों के प्रति नहीं, वह विश्व की समूची नारियों के

लिये लागू है। उसी में से कुछ कट कर इधर आ रही हैं।"

रिपोर्टर बोला—"समाज कोई स्थूल पिण्ड नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति के पास अपना समाज है।—अपने विचार हैं। उनके अस्तित्व को तोड़ देना पाप ही हुआ ना!"

"निःसन्देह!—नरेन्द्र जोर से बोला— "एक मनुष्य की कमजोरी सैकड़ों को रुलाने के लिए पर्याप्त होती है।"

"हूं!"—रिपोर्टर जैसे बात के मर्म तक पहुंच गया हो। वह कुछ कहता कि प्रोफेसर बोला— "मेरा मत है, यदि देश अपनी सहानुभूति को कार्य रूप दे, इन नारियों के लिये विश्व का कोई काम असाध्य नहीं होगा।"—वहकहने लगा—"नरेन्द्र बाबू, इस दशा में भी ये देश के एक बड़े भाग का पेट भर रही हैं। ये तबलची और सारङ्गीयाज देश में कम संख्या में नहीं हैं। कल क्या खाने को देश उन्हें देगा? किन्तु, समाज केवल वाह्य रूप को देखता है। उसके पास विचार नहीं हैं। संकल्प नहीं हैं। वह एक बंधा पिण्ड है, जो जरा से इशारे पर ढुलक पड़ता है। उसकी मानसिक शक्ति लोप हो चुकी है। हमें ऐसे समाज को नष्ट कर-ही देना होगा। जिस व्यक्ति में सहानुभूति नहीं है, सौहार्द्र नहीं है, उसमें व्यक्ति नाम की कोई वस्तु है, इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। ये नारियां हैं।—विश्व की अमोल और अनिंद्य विभूतियां! भला, देश इन्हें भूल कर एक दिन मिट नहीं जायगा? उसे, इनके चरणों में एक दिन झुकना ही होगा। जो आज ये वासना की प्रत्यक्ष मूर्ति हैं, इन्हीं में से मा और बहनों का देश को नाता जोड़ना ही होगा।"

नरेन्द्र कहने लगा—"प्रोफेसर, सच तो यह है, हमारे देश का समाज है-ही नहीं। वह मुर्दा हो चुका है। केवल सिसकते प्राण अवशेष हैं। तुम देखते हो देश में सुधारक, लेखक सभी प्रकार के व्यक्ति हैं। किन्तु, वे सब अकर्मण्य हैं। उनमें जहां इन नारियों के प्रति सहानुभूति आयी कि जाने इनके आचरण, उन्हें झुका क्यों देते हैं। लेखक यदि सुधार के नाम पर कुछ लिखता है, तो वह स्वयं रूप के

आगे इतना गिर जाता है कि जहां उसका अस्तित्व भी शेष नहीं रहता। सुधारक इतनी सामर्थ ही नहीं पाता, जो खुलकर बोल सके। यही लेखक की दशा है। एक लेखक को इस बात का जरा भी अधिकार नहीं है कि वह अपनी जाति, देश और समाज की धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्थिति पर कुछ लिख सके। तुम इस हिन्दू जाति को ही लो, इसमें जो सड़न और गन्दगी है, उसके लिये लेखक को इस बात का अधिकार नहीं कि वह इस दुर्भोगी जाति की कमजोरियों को स्पष्ट करे। चाहे बात सामुहिक हो। वह दूसरे प्रांत की बात नहीं लिख पायेगा। ऐसा क्यों है? उनकी मनोवृत्तियां उन्हें स्वयं पतित बना चुकी हैं। यह दास-वृत्ति, देश के लिये एक श्राप है! गन्दे कीड़ों की तरह प्रत्येक व्यक्ति में यह भावना उग चुकी है, ये नारियां हैं— काम और भोग की नारियां!······यदि कोई लेखक, इस षड्यन्त्र की पोल खोलता है, तो उस लेखक की कृति हास्यास्पद, अथवा अश्ललील बना दी जाती है। और यदि वह रास्ता बताता है, तो उसकी उस मौलिक सूझ को आशीष देना-ही उनके कार्य के प्रति इति हो जाती है। जैसा कि एक लेखक * ने लिखा है।

"प्रोफेसर,— वह फिर बोला—"मैं आज तीसरी बार वेश्या के कोठे पर आया हूं। लेकिन इन तीनों बार के आने में, मेरी यह उत्कट इच्छा रही है कि देखूँ, इन नारियों के पास भी हृदय है या नहीं। ये जो इस तरह हम लोगों से अलग हैं, क्या वास्तव में इनके लिये यही उपयुक्त है? प्रोफेसर, कितनी भी गन्दी वस्तु हो, उसकी सार्थकता और वास्तविकता सर्वथा लोप नहीं हो जाती।"

"तुम्हारा मतलब क्या है, नरेन्द्र बाबू?"—श्याम ने एकाएक पूछा।

नरेन्द्र छूटते तीर की तरह बोला—"मैं कहता हूं, तुम क्यों नहीं इन लड़कियों में से एक से विवाह कर लेते। मैं जानता हूं, तुम्हारा यह साहस सम्भव है, तुम्हें घर वालों से और समाज से पृथक कर दे।

---

* स्व० श्रीयुत प्रेमचन्द द्वारा लिखित— सेवासदन।

पर तुम पुरुष हो एक दिन स्वयं ही तुम्हारी परिस्थितियां अनुकूल हो जायेंगी।"

"तुम भी?"—रिपोर्टर ने पूछा।

नरेन्द्र ने कहा—"हां, विश्वास करो रिपोर्टर, मैं तुम लोगों से अलग नहीं चलूंगा।"

इसी समय घड़ी ने पांच बजाये। प्रोफेसर बोला—"ओ,' पांच बज गये। उठो भलेमानस, अब तो सबेरा भी आ गया।"

किन्तु रिपोर्टर अपनी किसी बात पर टिका था। बोला—"नरेन्द्र बाबू, तुम्हारी बातों ने मुझे एक तरकीब सुझाई है। क्यों न युवकों की एक संस्था बनायी जाय?"

श्याम ने कहा—"इससे मैं सहमत हूं। तनिक रुक कर कहने लगा—"रहा विवाह का प्रश्न, भई तुम लोग तैयार हो जाओ, मेरे लिये जो कहोगे, असहमत नहीं हूंगा।"

प्रोफेसर ने हंसकर कहा—"तो दूसरे के कन्धे पर रख कर बन्दूक चलाओगे?"

"यदि अभ्यास के लिये यही ठीक हो तो क्या बुरा?" श्याम ने कहा।

तब रिपोर्टर बोला—"इस प्रश्न को यों ही न छोड़ देना चाहिये। आप अलग-अलग विचार करें और एकत्र होकर इन लड़कियों से पूछें, क्या ये विवाह करने के लिये प्रस्तुत हैं। क्षणिक-जोश को लेकर कुछ कर डालना भी संगत नहीं होगा।"

नरेन्द्र ने कहा—"हां, यह ठीक है।"

जब प्रोफेसर जीने की तरफ चला, तो श्याम ने दस-दस रुपये के पांच नोट मोती की तरफ बढ़ाते हुए कहा—"क्षमा करना बाईजी, आज आपका बहुत समय लिया। हम कल दिन की रात में आये थे, और आज के प्रातः में जा रहे रहे हैं। यह प्रातः हमारे-तुम्हारे बीच में पता नहीं, कौनसा विधान लेकर आया है।"

मोती बोली—"वाह!—आपने हमारा समय लिया कि हमने आपका?"

"किसी का सही।" श्याम ने हंस कर कहा—"यह छोटी सी दक्षिणा लो।"

मोती ने पूछा—"आखिर इतनी जल्दी क्यों? आपको तो फिर भी आने की बात है ना?"

"हां, हां, क्यों नहीं।"

"तो बस, तभी दीजियेगा।"

पास में खड़े नरेन्द्र ने कहा—"यह तो ले-ही लो न, मोतीबाई।"

मोती उसकी आंखों को देखकर बोली—"आप भी शर्मिन्दा करने लगे?" फिर श्याम से कहने लगी—"बाबू साहब, नोटों को जेब में रख लीजिये।"

आखिर श्याम जीने की तरफ चला। नीचे प्रोफेसर और रिपोर्टर खड़े थे। जब श्याम के पीछे नरेन्द्र भी चलने लगा, तो मोती ने उसके हाथ से अपना हाथ छुआ कर कहा—"आप जरा ठहरें।"—और छज्जे की ओर ले जाकर खुले आसमान के नीचे खड़ी होकर बोली—"अब कब आइयेगा नरेन्द्रबाबू?" जाने क्यों उसकी आंख भरी हुई थीं जिन्हें जाने वह कब से रोके हुई थी।

नरेन्द्र उस ओर देखकर बोला—"तुम रो पड़ना चाहती हो, मोती?"

मोती रुंधे गले से बोली—"रोना तो भाग्य में लिखा है, बाबू!"—क्षणिक रुक कर बोली—"भला, आज आप कितने मास में आये हैं!"

नरेन्द्र बोला—"मैं सत्याग्रह में जेल चला गया था मोती। अभी पन्द्रह दिन हुए आठ मास बाद आया हूं।"

"अब कब आइयेगा?" छूटते मोती ने पूछा।

नरेन्द्र बोला—"मैं आऊंगा, इसका विश्वास करो मोतीबाई।" कहते वह फटती आयी आसमान की लाली देखने लगा। आकाश-मण्डल शान्त था। उसमें बस, एक-आध तारा था। तभी उसने फिर मोती से सुना—"मैं वेश्या हूं, इसीलिए हृदय-हीन न समझ बैठना नरेन्द्रबाबू!"

नरेन्द्र ने मोती के बहते आंसू देखे। वह व्यग्र होकर उसका

कन्धा पकड़ता हुआ बोला—"क्या कह रही हो मोती! लाओ मैं तुम्हारे चरणों से उतरे जल को पी लूं।"—उसके उठते आये दिल में मोती के आंसू भर गये, जिन्हें वह अपने प्यासे हृदय को पिलाने के लिये जैसे पागल और चंचल हो उठा था।—जाने उन मीठे आंसुओं में कितना प्यार था, और कितनी ममता।

तभी मोती मौन होकर, अन्तरिक्ष की ओर देखने लगी।

इतने में प्रोफेसर की आवाज सुनाई दी। साथ-ही वह पीछे-से आकर बोला—"खूब! हम उल्लू बने नीचे खड़े हैं और आप यहां..."

मोती बीच में बोली—"क्षमा करो, प्रोफेसर साहब!"

नरेन्द्र ने प्रोफेसर से कहा—"मित्र, इस नये प्रभात में इस बात को हमें ले ही लेना होगा। निःसन्देह, हम लोग बहुत-कुछ कर सकेंगे।" उसके स्वर में दीनता और दृढ़ता स्पष्ट हो आयी थी।

प्रोफेसर बोला—"देखो, कार्य शुरू करने के लिए विचारा जायगा।" साथ ही कहने लगा—"मोतीबाई, यदि तुम्हारी हीरा मेरे साथ विवाह करना पसन्द करे, तो मैं तैयार हूँगा।"

मोती ने उत्तर दिया—"आप पक्के हो लें। मैं उसे तैयार कर लूँगी। देखिये, इस विषय को अभी रक्खें गोप्य, क्योंकि अम्मा के जान लेने पर, ठीक नहीं होगा।"

प्रोफेसर ने कहा—"हां, हम इस विषय में सतर्क रहेंगे।"

"अच्छा!"—नरेन्द्र चलने के लिये बढ़ता हुआ बोला—"अब फिर आयेंगे मोती बाई!—नमस्ते।"

मोती अकेली छज्जे पर खड़ी रही। कभी वह इन चारों को जाते देखती, कभी आसमान के पूर्वी भाग की लाली को। जब वह आंखों से ओझल हो चुके, और वह भी खड़ी थक गयी, तो फिर अपने कमरे में पहुँची। वह बिस्तर पर पड़ कर, इस प्रकार अपने में विचार-विनियम करने लगी, जैसे वह अपनी निजी और सतर्क निधि को अपने में खोल-खोल कर देख रही हो और फिर बांध करकह रही हो—यह ऐसे हैं— हां, ऐसे!...

इतने में उसकी रो आने की अवस्था हो आयी। जब छज्जे पर की बातें याद आयीं, तो उसने फिर पूर्ववत् नरेन्द्र को लक्ष्य किया। और अपने भविष्य की कल्पनाओं को समेट कर, वह इस प्रकार आँख बन्द पड़ी रही कि जैसे उसे कोई देख नहीं लेगा—सुन नहीं लेगा।

## नवां-परिच्छेद

मेहरो की कोठरी से चार-पांच कोठरी छोड़ कर एक खाली कोठरी में एक स्त्री आकर बसी। उम्र बीस से कम होगी। किन्तु अपने व्यवसाय में बड़ी पटु और सिद्धहस्त थी। नाम बेगम था। क्या मजाल, जो आदमी शराब के अतिरिक्त पैसे दिये बगैर उसके चुंगल से निकल जाये। वह दिन-रात के चौबीसों घण्टों में शराब पिये रहती।

जब दिन के बेकार समय में कोई स्त्री उसके पास जाकर बात करती, अथवा वह स्वयं घूमती हुई किसी कोठरी के सामने आती, तो व्यवसाय की कमी के प्रश्न पर आते ही कहती—"तुम आदमियों को पटाना नहीं जानतीं।"—और तुरन्त माथे में बल डाल कर, रूखे और विषैले भाव से कहती—"ये मर्द मतलबी होते हैं।—काम निकला कि फिर बात करना भी पसन्द नहीं करते!"

एक दिन वह घूमती हुई जब मेहरो की कोठरी के सामने से निकली, तो मेहरो ने पुकारा—"बेगम!"

मेहरो की आवाज सुन कर वह रुक गयी। सिगरेट का धुंआ छोड़ कर बोली—"कहो, ठकुराइन, क्या हो रहा है?"—कहते, उसने अपने एक पैर को मेहरो की चौखट पर टेक दिया।

इतने में तीन-चार स्त्रियां और आ गईं। तभी एक ने पूछा—"क्यों बेगम, तुम शराब बहुत पीती हो?"

बेगम तुरन्त मुँह से पान का पीक थूक कर बोली—"जब मिलती है, तो क्यों न पी जाये? है भी तो मुफ्त की, ना!"

"तो तुम लोगों से शराब के भी पैसे लेती हो?"

"क्यों नहीं!"—वह अपने-आप बोली—"विलासी आदमी से सब-कुछ लिया जा सकता है।"

"तुम अच्छी हो बेगम!"—मेहरो ने कहा—"यहां तो पेट की रोटियां भी नहीं पटतीं।"

यह सुन कर बेगम ने छूटते कहा—"ये आदमी किसी को कुछ यों ही नहीं दिया करते, ठकुरानी। पुरुष दुनिया का सबसे बड़ा स्वार्थी प्राणी है।"—सिगरेट की राख छोड़ कर बोली—"ठकुराइन! यहां बस कर भूखा नहीं रहना होगा। फिर तो अल्लामियां का नाम न लिया जाये। इन रोटियों के लिये ही तो हम इस नर्क में आ बसी हैं!"...

"यों कहो बेगम, तुम पुरुष से जबरदस्ती पैसा वसूल करती हो?" पास खड़ी मारवाड़िन ने पूछा।

यह सुनते ही, बेगम हँस पड़ी।

"किन्तु, बेगम, मेहरो बोली—"यदि आदमी पैसे से खाली हो तो?"

"पैसे से खाली, और भूखा पुरुष इस गली में नहीं आ गिरेगा ठकुराइन!" क्षणिक रुक कहने लगी—"यदि कोई ऐसा आये, तो मैं उसे पकड़ नहीं लूंगी।"

"हूँ"!—भीतर बैठी हुई गंगो ने ईर्षा भरे ढंग में कहा—"तू छोड़ देगी, दुनिया की पापिन!—रात-दिन तो शराब में डूबी रहती है।"...

गंगो की अन्तिम बात बेगम ने सुन ली। किन्तु उसने उत्तर नहीं दिया। सिगरेट के धुँए में उसने गंगो को देखा। फिर चौखट से पैर हटा कर संयत और उतरे नशे की सी भर्रायी और सूखी आवाज में अपने-आप बोली—"अभागी औरत!"—तभी अपनी कोठरी की ओर जाती हुई कहने लगी—"तुम किस तरह इन आदमियों के पैसों पर अपना पानी छोड़ रही हो!—आह, तुम्हें क्या पता, ये आदमी अपने इने-गिने पैसे देकर तुम से ले क्या जाते हैं!"...

किन्तु कोठरी में आकर बेगम एकाएक उदास हो चली। टूटी-सी एक बारगी खाट पर बैठ कर बोली—"इन स्त्रियों की दशा देखी बेगम!—ये भूखी हैं पैसों की, और आदमियों की!" तभी झटके के साथ बोली—"शीः!—क्या नारी जीवन है! और ये सब लगती कैसी

हैं– साक्षात डायन-सी ! चेहरे भयानक किस प्रकार बन गये हैं। आह ! आदमियों के टकों ने इन्हें निकम्मी और स्त्रीहीन किस प्रकार बना दिया है ! अभिमान रह-ही नहीं गया है। --निरी मनुष्य की वासना पर ढुलकने वाली नारियां !"...

इसी समय, जब कि बेगम अपनी कोठरी में बैठी जहर-सी तीखी बातों को उगल रही थी, मेहरो ने मारवाड़िन से कहा--"यह किसी बड़े घर की आवारा लड़की है !"

मारवाड़िन बोली--"स्त्री नहीं है यह ! तूने देखी नहीं, अगली चलती किस तरह है !"

मेहरो ने कहा--"किन्तु उसका कहना झूठ नहीं है।"

"होगा !" मारवाड़िन उत्तर देकर बोली—"पर मेरी शरम नहीं छूट जायगी मेहरो।"

भीतर बैठी गंगो बहुत देर से अपनी किसी बात को पी रही थी। मारवाड़िन के बाद बोली—"कुछ भी हो, हम बेगम नहीं बन जायंगी। क्या जिन्दगी-भर यहीं रहना है। कुछ दिन काटने हैं, कट जायेंगे, अपने घर चली जायंगी।"

मारवाड़िन ने कहा—"कोई आकर नहीं जाया करता गङ्गो। बहुतों से यही सुना है, पर कहीं और भी ठिकाना नहीं है।"

गंगो बोली—"मेरे लिये यह बात नहीं है। मैं जाऊँगी।—और फिर जाऊंगी।"

मेहरो ने मुसकरा कर कहा—"गंगो बहिन, चली जइयो।"—तभी फिर बोली—"और देख तो गंगो, तू बेगम पर ही क्यों नाराज है। बेगम किसी से दबने वाली औरत नहीं है।"

मारवाड़िन अपनी कोठरी की ओर जाती-जाती रुक कर बोली—"और-तो-और, यह मुफ़्त में धौंस के पैसे लेने वाला पहलवान भी उससे किस तरह बोलता है। वह उसे मारने के लिये नहीं चढ़ जाता। कमजोर जान कर-ही, यह पुरुष दूसरे की ओर बढ़ता है, मेहरो !"

मेहरो ने सम्मति में सिर हिला दिया। उसने देखा बेगम अपनी

कोठरी के सामने लोटे से पानी छिड़क रही है। इतने में भंगी नाली साफ करता हुआ सामने खड़ा होकर बोला—"बेगम, कुछ होगी ?"···

बेगम ने उसके इस प्रश्न को सुनकर न तो आश्चर्य ही किया, और न घृणा ही। बोली—"हूं। शराबी का बच्चा !···" तभी उसकी ओर देखकर बोली—"अच्छा, ठहर।"—कोठरी के अन्दर से बोतल लाकर कहा—"ले पी !·········"

भंगी ने अपनी गम्भीर खुशी के साथ झाड़ू पटक दी। अनेक आशीष व्यंजक बोल कहने के साथ, दांये हाथ की हथेली को होठों पर लगा लिया। शराब के आठ-दस घूँट पिला कर बेगम बोतल उल्टी करने के साथ ही उससे बोली—"बस इतनी ही है।" यह सुन कर शराब का प्यासा भंगी खारी और कषैली डकार लेता हुआ, दीन नेत्रों से बेगम को देखकर फिर झाड़ू लगाने लगा। बेगम उसकी इस भाव भंगी को खाक भी नहीं समझी। जाने उसमें कुछ था ही नहीं। भंगी ने बेगम की कोठरी के सामने का कूड़ा साफ किया। जब वह पुनः नाली साफ करने चला, तो उसने बेगम के हाथ में जलती सिगरेट देखी। तत्क्षण वह ऐसा मुंह बना बैठा, जैसे शराब पीने के बाद सिगरेट मिलना भी आवश्यक था। बेगम ने इस भाव को जान लिया। वह सिगरेट के एक-साथ कई दम लगा कर बोली—"अरे, ले सिगरेट।"

वह मुड़ कर बोला—"खुदा तुम्हारा भला करे बेगम।" कहते वह आगे बढ़ा और बेगम भीतर कोठरी में खाट पर जाते ही जाने क्यों एक-बारगी खिलखिला कर हंस पड़ी। और उसी क्षण-ही जैसे उसके घूँसा लगा हो, हंसी छोड़ कर पूरी गम्भीर होकर बोली—"क्या कहा शराबी के बच्चे, खुदा तुम्हारा भला करे !"········

वही खुदा जिसने इस पुरुष और नारी को यहां पटक कर, जलाने और सिसकने के लिये छोड़ दिया है। अरे, उसी खुदा के नाम पर !

और मेहरो, जिसने बेगम का पानी छिड़कना देखा, भंगी को शराब पिलाते देखा, फिर उसे सिगरेट देते भी देखा। घोटों पर टोढ़ी रखे, कभी दूर गये नाली साफ करते भंगी को देखती, कभी बेगम की

कोठरी के दरवाजे को। जब तक भंगी द्वारा प्रत्येक कोठरी के आगे ठिठक कर, कुछ पा लेने की क्रिया उसके सामने से ओझल नहीं हो गई, वह इस तरह अपने में तन्मय थी, कि उसे यह ही न जान पड़ा, उसकी सहयोगिनी गंगो ने कब तो साबुन से मुंह धोया, और कब कंघी से बालों को ठीक कर लिया। गंगो ने पास आकर कहा--"जाओ मेहरो, मुँह-हाथ धोलो, यहां मैं बैठती हूं।"—यह सुन कर उसने बेगम की शून्य कोठरी की ओर फिर देखा। वह सोचने लगी—यह शराब, नारी और पुरुष--ये सभी, एक दूसरे के प्रति मिल गये हैं। अर्थात, ये सब गठबन्धन रूप में मेहरो की नजर के सामने इस प्रकार आये, कि न तो वह इनसे घृणा ही कर सकी, और न बंधा प्यार ही।

इसी समय एकाएक मेहरो का मन बागी हो चला। वह अभी मन में कह रही थी कि पुरुष की उत्पत्ति केवल वासना के लिये हुई है। परन्तु वह इसे कह नहीं सकी। वह स्वयं अपने को देख कर बोली—"अरी तू! पुरुष की ग्लानि, घृणा और विलासमय निधि को समेट कर, अपने में लेने वाली अरी तू!......हां जैसे विश्व का नारीत्व उससे यह पूछ रहा हो। वह फिर कहने लगी—"किन्तु इस भंगी ने ही शराब क्यों पी! और इस बेगम ने ही क्यों पिलायी" जैसे वह अपने को नोंचती हुई बोली--"नहीं यह सब इसी प्रकार रहेगा! हम रहेंगी-- ये शराबी रहेंगे।–और यह वासना का दरिया इसी प्रकार बहता रहेगा!"-- मेहरो ने एक खुली सांस छोड़ी। फिर कहने लगी—"यह भंगी-ही क्यों?–मेहरो यह पुरुष जाति ही इस भंगी की तरह शराब पीने के लिये हाथ बढ़ाती रहेगी! और हम नारियां इन पुरुषों के चरणों में सदा ही, हां, सदा की तरह झुकती रहेंगी!"......

बहुत देर के बाद मेहरो को अपनी स्थिति का ज्ञान हुआ। जब गंगो ने फिर उसे उठने के लिए कहा, तो वह इस प्रकार चौंक कर उठी, जैसे उस नारी रूप मेहरो में, कोई और मेहरो आ गई हो। जो उसे प्रतारणा देती हुई कह उठी—"छिः मेहरो, यह काम क्या अच्छा लगता है!"

इतने में अन्धेरा आ गया। गली में एक-दो करके आदमियों की भीड़ लगनी आरम्भ हो गई थी। सजी हुई स्त्रियां, कोई मूढ़े पर बैठी, किसी ने अपनी कोठरी के आस-पास चक्कर लगाना शुरू किया, और कोई किसी राहगीर को रोक कर बात करने लगी।

इस प्रकार यह नगर का आकुल और तृषित-खण्ड, विश्व की सारी श्रेष्ठताओं से अलग होकर, बस केवल अपने जीवन के भू-गर्भ को विलासी और काम के सताये पुरुषों से सम्बन्धित करने के लिए तैयार हो गया।

आठ बजते-बजते कोठरियों के आगे आदमियों की काफी भीड़ हो गई। कहीं लँगोटी- और मोटे गाढ़े की मिरजई पहने बगल में बोतल लिए मिल के मजदूर दिखायी पड़े। कहीं वह शौकीन मजदूर जो चटकदार कुरता और धोती या तहमद पहने, इन औरतों से हँस कर, आंख चला कर, बातें करते दीख पड़े। इनमें अधिक जवान लड़के ही दिखाई पड़े। जो दिन-भर किसी कारखाने में गरम लोहा पीट कर या हथौड़ी चला कर रुपया-बारह आने की कमाई करके बन-ठन कर आये थे। ये ऐसे दीख पड़े, मानो इन नारियों को रिझाने के अतिरिक्त उनका और कोई उद्देश्य ही नहीं हो। और यह नारियां भी उनकी तुर्की टोपी, जालीदार रेशमी कुरता, तथा रंगदार वास्कट पहने देख कर उनसे इस तरह बातें करतीं, जैसे वे इन छैल-चिकनैयों को जानती हों। साथ-ही इस तरह देखतीं कि वे उनके उजलेपन को न देख कर बस केवल उनकी जेब के भारीपन को देख लेना चाहती हों।

जब बारह बजे तो गली में आदमियों की भीड़ कम हुई। इसी समय एक आदमी मैले कपड़े पहने, शरीर से सुन्दर युवक बेगम की कोठरी के सामने आकर ऊपर चढ़ गया।

बेगम उसे देख कर झट बोली— "ओ' तुम!—आओ भीतर खाट पर बैठो।"

उसके बैठने पर बेगम ने फिर कहा— "तुम कल नहीं आये विनय?"

विनय ने उत्तर दिया—"कल मैं बाहर था।" कहते उसने एक कागज बेगम के हाथ पर रख दिया।

बेगम उसे पढ़ कर बोली—"बस यही ?"

"देख लो, जो कुछ है।"

इस पर बेगम ने बिना कुछ कहे, ऊपर आले से एक किताब उठाई। उसमें पट्ठे के भीतर से दस-दस रुपये के पांच नोट निकाल कर विनय को देती हुई बोली—"यह मेरी पांच दिन की कमाई है, विनयबाबू!"

विनय कुछ बोला नहीं। केवल बेगम का मुंह देखता रहा।

बेगम ने किताब को पूर्ववत आले में रख दिया। विनय के पास आकर कहने लगी—"विनय तुम दुबले होते जा रहे हो। कोई चिन्ता लगी है क्या ?"

विनय बोला—"नहीं तो ! न मैं चिन्तित ही हूँ।"—कह कर उसने बेगम को इस तरह देखा जैसे सादर-प्रेम के साथ तथा उसके इस जीवन और इस कोठरी से नाता न रखते हुए भी वह समवेदना जरूर रखता हो। कुछ ठहर कर बोला—"आज तुमने शराब अधिक पी है कमला। तुम्हारी तबियत तो ठीक है ना ?"

बेगम का दूसरा नाम कमला था। उसने शराब की बात पर ध्यान नहीं दिया। अपनी बात पर आकर बोली—"कुछ खाओगे ?"

"क्या खिलाओगी ?"

"रोटियां।—वह भी दिन की।"

"लाओ।"

लेकिन बेगम बोली—"नहीं, आज न खिलाऊँगी। कल दिन में आओ तो खिलाऊँ।"

विनय हँस पड़ा—"अच्छा कल सही।" कह कर वह चलने के लिए उठा। जब वह चलने के लिए उद्यत हुआ तो बेगम सामने खड़ी होकर बोली—"विनय !...क्या सच मैंने शराब अधिक पी ली है ! ना विनय, बहुत थोड़ी-सी ! दुःख और क्लेश में शराब से अच्छा साथी नहीं होता विनय !...इस नशे में मेरे पास कोई चिन्ता नहीं है।" तभी कहने

लगी—"हां, तो कल आओगे न?' कहते उसकी आंखों का नशा बढ़ गया। आंखें सजल हो आयीं।"

विनय पास होकर बोला—"मैं कल आऊंगा।" जब वह दरवाजे की तरफ जाने लगा तो बेगम ने आगे बढ़ कर कहा—"सुनो तो विनय!" कहते वह विनय के पास आयी और बिना बोले उसके दोनों हाथों को पकड़ती हुई बोली—"विनय, अरे तुम आये और चल दिये!" तभी नीचे को मुंह लटका कर बोली—"अच्छा जाओ।"

विनय के जाते ही कमला की आंखों में केवल बोझ भरे आंसू शेष थे। जब वह चारपायी पर आयी तो जैसे शून्य हो गयी थी। कदाचित वह भूल गयी थी कि वह बेगम रूप में एक कमला भी है, जिसने शराब पी है, और वह नशे में है। तभी बेगम रो पड़ने की दशा में हो गयी। जाने क्यों बेगम का दिल तड़प उठा। और उसे दीखने लगा, वह क्यों नहीं अपने लिए ऐसा स्थान खोज पाती, जो विश्व के एक किनारे बैठ कर रोये और खूब रोये। किन्तु जैसे बेगम को यह धारणा और भावना भी अधिक रोचक और भली नहीं मालूम दी। तभी वह सब-कुछ छोड़ कर फिर दरवाजे पर आयी। बे-जाने वह उस शून्य पथ की ओर देखने लगी, जिस पर चल कर अभी-अभी विनय उसकी आंखों से ओझल हो गया था।

## दसवां-परिच्छेद

जब बेगम रोटियां बनाने बैठी तो विनय की प्रतीक्षा उसे आकुल, और अशान्त बना रही थी। तभी कुछ देर बाद विनय आया। बेगम विनय को देखते-ही, मुसकरा कर बोली—"रोटियां खाने आये होगे, विनयबाबू?"

विनय ने पास होकर कहा—"यह भी पूछने को बात है। पर तुम तो अभी कोयले-ही सुलगा रही हो।"

वह पंखे से कोयलों को हवा देती हुई बोली—"लेकिन ये सुलग भी तो नहीं रहे हैं!—इस कोठरी में इतनी सील है कि कोयले भी मुश्किल से आग पकड़ते हैं।"

"तो लाओ, मैं इनको खातिर करूं।" विनय ने कहा—"तुम आटा गूंथो।"

"तुम ?—नहीं, तुम खाट पर बैठो।"

तब विनय खाट पर पड़ कर, स्वाभाविक ढंग से कोठरी के चित्र को देखने लगा। जिसमें उसे ऐसा कौतूहल दीख पड़ा, जैसे अजनबी और अनुभूति भरी कल्पनाओं के साथ सब-कुछ उसकी आंखों के सामने आ गया हो। वह कभी मकड़ियों के जाले देखता, कभी दीमक की घर बनी हुईं काली-स्याह कड़ियों को। वह कभी कोठरी में फैली हुई दुर्गन्ध का अनुभव करता, और कभी दीवारों पर पुरातन की जमी हुई सड़न भरी रुईदार फुई को देखता।

यह सब देखकर, विनय में इनके प्रति ममता नहीं उमड़ आयी। और ना ही उसमें इनका इतिहास जानने की जिज्ञासा ही जगी। लेकिन जब उसने कोठरी का आकार देखा, तो एकाएक उठ कर चारों खूंटों का मीलान करने लगा। और फिर अपनी जगह आकर, खीजने और मर्म भरे स्वर में बोला—"मानो, इन नारियों के लिये इससे अधिक स्थान की आवश्यकता ही नहीं!—यह दुर्गन्ध तो जैसे इनके जीवन की सहयोगिनी बन गयी है!"

इतने में छ-न-न करके बेगम ने साग छौंका। अपने काम से छुट्टी पाकर वह विनय के पास आती हुई बोली—"क्या सोच रहे हो, विनयबाबू ?"

विनय ने अज्ञात भाव में कहा—"कुछ नहीं!"

"कुछ तो ?" खाट की पट्टी पर बैठ कर बेगम ने फिर पूछा।"

तब विनय बोला—"इस गली में जितनी नारियां हैं, मैं देखता हूं, इनका जीवन भी इन गन्दी कोठरियों जैसा बन गया है। वह नर्क की पीड़ा से अधिक कठोर और वीभत्स कहा जा सकता है।"

बेगम अंगीठी के पास जाकर चमचे से साग चलाती हुई बोली—"अरे बाबू, यह मनुष्यों की क्रीड़ा-भूमि है। और यहां पर बसने वाली ये नारियां, आदमी की भूख को, उसकी पीड़ा को, हां, विनयबाबू,

"खैर !"–हवलदार ने दरवाजे से हटते हुये कहा—"अगर मिले तो ध्यान रखना।" और चलते, फिर उसने विनय पर नजर डाली।

पर, जब बेगम ने झांक कर देखा हवलदार गली से बाहर जा रहा है, तो खाट की पट्टी में से एक कागज निकालकर विनय को दिखाती हुई बोली—"यह देखो विनय।"

विनय ने देखा, विनय और कमला के फोटू के साथ, उन्हें पकड़ने के लिये गवर्नमेंट द्वारा दो दो हजार का इनाम छपा था। वह हँसने की चेष्टा करता हुआ बोला—"यह तुमने कैसे पाया कमला ?"

कमला उसके टुकड़े करती हुई बोली—"हजरत की जेब में था। यहां बैठते-ही, नशे में इतने बुत हुये, कि मुझे पैसे देते समय यह कागज निकल पड़ा। मैंने धीरे-से दबा लिया।—उसे नाली में फेंककर बोली—"तुम्हें, उसने बड़े घूर कर देखा है विनय।"

विनय शांत था।

जब विनय भोजन कर चुकने पर चलने लगा, तो बोला—"तुम्हें यह कोठरी बहुत शीघ्र छोड़नी होगी कमला।"

कमला बोली—"तुम भी अब यहां मत आना। इसे कम शैतान मत समझना।"

इसके बाद विनय कोठरी से उतर चला। जब कि बेगम निर्निमेष दृष्टि के साथ धड़कते हुये हृदय से जाते हुए विनय को देखने लगी। वहां से हटकर बेगम ने जाने क्या सोचा कोठरी के एक कोने में जाकर दो तीन ईंटों को हटाया और कपड़े की एक पोटली खोल कर एक चीज देखने लगी। वह पिस्तौल था। बेगम पिस्तौल को हाथ में लेकर अपने आप बोली—"एक गोली से एक ! और फिर उसके बाद पूरे सात।" कहते बेगम एकबारगी खिलखिला कर हँस पड़ी। जाने उस समय उसके हृदय में विद्रोह का कौनसा रूप आ गया था।

## ग्यारहवां परिच्छेद

रविवार को दोपहर में जैसे ही नरेन्द्र बाजार में कहीं जा रहा था, अकस्मात पीछे से उसे रिपोर्टर का स्वर सुन पड़ा। हाथ में हैट हिलाता

हुआ रिपोर्टर पास आते ही बोला—"मैं तुम्हारे घर होकर आ रहा हूं नरेन्द्रबाबू।"

नरेन्द्र ने कहा— "श्याम के घर जारहा हूं, आओ तुम भी चलो।"

लेकिन रिपोर्टर अपनी बात लेकर. बोला—"तुम्हें उस दिन की दुअन्नी के कोठे पर की बातें याद हैं, या भूल गये? मैं तुमसे आज उसी विषय में बात करने आया हूं।"

यह सुन कर, उत्सुकता से नरेन्द्र ने रिपोर्टर की ओर देखा। आगे जानने के लिए उसने पूछा—"तुमने क्या सोचा रिपोर्टर?"

"मैंने?"—रिपोर्टर ने कहा— "आओ जरा उधर चलें।" कह कर उसने दूसरे चौराहे की तरफ चलने का इशारा किया। चलते हुए बोला—"मैंने बहुत-कुछ निश्चय किया है, नरेन्द्रबाबू। सच तो यह है, उस दिन की बैठक से मैं अपने भूले हुए लक्ष को फिर से पाने के लिये व्यग्र हो उठा हूं।"

तभी नरेन्द्र ने एकाएक पूछा-"दुअन्नी की किसी लड़की से विवाह करोगे क्या?"

"परन्तु इसके लिए लड़कियां भी तो तैयार हों।" रिपोर्टर बोला।

एक खाली दुकान के पास रुक कर नरेन्द्र कहा—शायद वह तैयार हो जायें। न हों, चेष्टा तो की जायगी। पर तुम कौनसी लड़की को पसन्द करते हो, रिपोर्टर?"

रिपोर्टर ने दुकान के तख्ते पर पैर रखते हुए कहा-"चमेली को-।" फिर बोला— "मित्र, उस दिन मैं चमेली के एक-एक भाव को देख रहा था। बहुत ही लजीली और गरीब लड़की है वह!"

नरेन्द्र कुछ देर तक रिपोर्टर की आंखों को देख कर बोला—"परन्तु तुम अपने सामने कौनसे विवाह का रूप रखना चाहते हो। आज हमारे सामने विवाह की कई प्रथाएँ चल पड़ी हैं। सच कहना रिपोर्टर, क्या तुम चमेली को सद्गृहस्थ के रूप में लेना चाहते हो, अथवा..."

रिपोर्टर तपाक से बोला—"केवल सद्गृहस्थ के रूप में। मैं इसे भूल नहीं गया हूं नरेन्द्रबाबू, मुझे एक सद्गृहस्थ की मा ने पैदा किया

था। मैं पवित्र वैवाहिक-जीवन में आना चाहता हूं। श्रद्धा और प्रेम के जीवन में!"

नरेन्द्र आतुर स्वर में बोला—"तो पूछूं, तुम्हारा निश्चय अटल है?"

"सोलहो आना अटल।"

"आओ, उधर चलें। यदि अवसर मिला तो बातें करेंगे।" नरेन्द्र ने कहा।

दोनों सीधे दुआजी के कोठे की तरफ चले। ऊपर जाकर नरेन्द्र ने नौकर से मोती के लिये पूछा। तभी दूसरी ओर से चमेली ने आकर कहा— "अम्माजी तो सो रही हैं। मोती बहिन दूसरे कमरे में हैं, आप बैठें, अभी बुलाती हूं।"

चमेली इस समय एक सफेद धोती पहने हुए थी। ऊपर धोती की लाल किनारी थी। उसके जाने पर नरेन्द्र बोला— "देखा रिपोर्टर! इस भोलेपन पर धोती कैसी खिल रही है। सचमुच, जैसे हमने अभी-अभी एक देवी के दर्शन कर लिये हों।"

चमेली के साथ मोती और हीरा कमरे में आईं। बैठकर मोती ने नौकर को पान लाने की आज्ञा दी।

नरेन्द्र बोला—"पान रहने दो मोतीबाई। क्या तुम्हारी अम्माजी सो रही हैं?"

"जी हां।"

वह फिर चमेली को देखकर मोतीसे बोला— "तुमसे एक बात कहनी है मोतीबाई।"

मोती ने जानने के लिये जिज्ञासा प्रकट की।

"मगर, यहीं कहूं?"

मोती जरा मुसकरा दी। कहने लगी—"आप कहें। हम आपस में कोई पर्दा नहीं रखती हैं बाबू।"

नरेन्द्र बोला—"यह बात नहीं है बाई।" तभी बिना भूमिका के बोला—"हमारी उस दिन की बात तो याद है ना? हममें से रिपोर्टर बाबू पहले क्षेत्र में कूद रहे हैं। तुम्हारी क्या सम्मति है?"

मोती मुसकरा कर बोली—"यह तो बतायें, किसके भाग्य खुले हैं।"

नरेन्द्र बोला—"पर तुम रिपोर्टर महाशय से परिचित तो हो ना?"

मोती तपाक बोली—"आपसे कौन न परिचित होगा। इतने बड़े अखबार के रिपोर्टर और हमारे परिचित न हों? मैं खूब जानती हूं, जाने कब से जानती हूं। पर यह तो बताओ, किस लड़की के लिये बात है। आखिर उससे भी तो पूछा जाये ना।"

तब नरेन्द्र चमेली को इंगित करके बोला—"क्या तुम्हारी चमेली-बाई विवाह जीवन में आना पसन्द करेंगी? आपकी इन्हीं से विवाह करने की इच्छा है।"

चमेली ने अपना नाम सुनते-ही, हीरा के पीछे मुंह कर लिया। नरेन्द्र ने देखा, उसके मुंह पर लाली दौड़ आई है। मोती उसका हाथ पकड़ कर बोली—"क्यों चमेली, क्या विचार है?"

उसने दबे स्वर में कहा—"तुम जानो बहिन।"

हीरा बोली—"यह क्या जाने मोती। हमने तुम्हें ही अपनी बड़ी बना रक्खा है।"

इसी बीच में चमेली चुपके से दूसरे कमरे में खिसक गई। मोती ने कहा—"आप आज रात में आइयेगा न, उस समय मैं पूछ रखूंगी। यह लड़की लजाती बहुत है। ब्याह के लिये तो तैयार है ही। पर एक बात है बाबू, इसकी एक बुढ़िया मा है, उसका अवश्य प्रबन्ध करना होगा।"

रिपोर्टर बोला—"वह भी अपनी बेटी के साथ रहे। वह मेरी भी तो मा हुई ना।"

किन्तु मा के लिये बेटी वेश्या का काम कर रही है, यह बात नरेन्द्र को पसन्द नहीं आई। इस बात को सुनते-ही जैसे उसे तेज छुरी ने बींद दिया हो। चौंक कर बोला—"क्या यह मा के लिये ऐसा काम करती है मोतीबाई!"

मोती बोली—"बाबू इसके पिता पर एक हजार रुपये का कर्ज था। जब वह किसी तरह भी अपना कर्ज न चुका सका, तो अपनी इस

अकेली लड़की को यहां लाया। और अम्मा के सामने गिड़गिड़ा कर बोला—"बाई, तुम मेरी लड़की को ले लो। राम तुम्हारा भला करेगा। अब पिता तो मर चुका है, मा है, वह भी बुढ़िया है। यह दस-पांच रुपये महीना उसके पास भेज देती है। और साल भर में पन्द्रह-बीस दिन के लिये अपने घर भी हो आती है।

नरेन्द्र बोला—"इसे यहां बुलाओ तो। अभी क्यों न पूछ लो।"

हीरा ने कहा—"मैं लाती हूं। लेकिन, इसे तो हम तैयार कर लेंगी, आप और पक्के हो लें।"

रिपोर्टर बोला—"मैं बहुत दिन से यही पक्का कर रहा हूं, हीराबाई। अधिक विचार करके काई अर्थ नहीं निकल पायेगा।"

जब हीरा चमेली का ले आयी तो नरेन्द्र ने पूछा—"क्यों चमेली, तुम इन बाबू के साथ विवाह करना पसन्द करोगी?"

इस पर मोती ने चमेली का हाथ लेकर रिपोर्टर के हाथ में देते हुए कहा—"यह क्या पसन्द करेगी बाबू!—मैं करती हूं। मण्डप कब सजेगा?—लड्डू हमें भी देना नरेन्द्रबाबू।"

चमेली ने कहा—"ब्याह घर से होना चाहिये मोती बहिन। मा भी तो आशीष देगी ना!"

रिपोर्टर बोला—"वहां जाकर क्या करेंगे। अगर कोई तुम्हारे गांव का आदमी हो तो मैं रुपये देता हूं, वह तुम्हारी मा को मेरे घर ले आयेगा।"

चमेली बोली—"वह यहां रह नहीं सकेगी। अब उसके पास इतना पैसा हो जायेगा, जिससे वह अपनी गुजर कर लेगी।"

"हां, ठीक तो है।"—मोती ने कहा—"यहां के जेवर मा के ही पास जाने चाहिएं। मा को अपने उस परिचित से यहीं बुला लो चमेली।"

रिपोर्टर बोला—"तो उस आदमी को यह दस रुपये दे देना मोतीबाई। मैं समझता हूं, इसी रविवार का दिन ठीक होगा।"

रुपये देखकर मोती बोली—"यह रहने दीजिये। इतने तो हमारे

पास भी होंगे।" हंस कर कहने लगी—"बस एक दिन लड्डू खिला दीजियेगा। यह मरी तो कभी याद भी नहीं करेगी, रिपोर्टर बाबू!"

इतने में दुअन्नी का बोल सुनाई पड़ा। नरेन्द्र बोला—"अब आज्ञा दो मोती। सम्भव हुआ तो रात में आयेंगे।"

मोती बोली—"आयेंगे ना?—जरूर! जरूर!"

रिपोर्टर ने कहा—"जरूर आयेंगे। हम भी, प्रोफेसर और श्याम-बाबू भी।"

जीने से उतर कर रिपोर्टर बोला—"मुझे एक काम जाना है नरेन्द्र-बाबू। तुम लोग मेरी प्रतीक्षा न करना। मैं सीधा यहीं आ मिलूंगा।"

उसी रात को जब नरेन्द्र, प्रोफेसर और श्याम दुअन्नी के कोठे पर आये, तो हीरा केवल एक बाबू के सामने बैठी हुई गाना गा रही थी। कुछ देर के बाद वे महाशय चले। मोतीने नरेन्द्र से पूछा—"आपके रिपोर्टरबाबू नहीं आये?"

नरेन्द्र ने कहा—"वह आता ही होगा। उसने यहीं मिलने को कहा था। तभी सीढ़ियों से जूतों की आवाज सुनाई दी। एकाएक रिपोर्टर ने कमरे में आते ही सिर से हैट उतारा।

यह देख कर सब खिल उठे। श्याम उछल कर बोला—"मित्र, तेरी बहुत उम्र होगी। अभी जिक्र था कि तुम आ ही धमके।"

रिपोर्टर बोला—"धन्यवाद! किन्तु मैं अधिक जीना नापसन्द करता हूं श्यामबाबू!"

चमेली इस समय ऐसे शांत बैठी थी, जैसे उसका इस पेशे और काम से कोई सम्पर्क ही नहीं था। किन्तु रिपोर्टर ने आगे कहा—"आज बड़ी खतरनाक बात हो गई है। वह मुंह को लटकाकर कहने लगा—"और वह भी एकदम नयी। कल अखबार दूना बिकेगा।"

"क्या? क्या?" प्रोफेसर ने उतावलेपन से पूछा।

रिपोर्टर आंखों में दर्द-सा लाकर बोला—"इस तबले और सरंगी की आवाज में हम एक दिन अपने संसार को भी भूल जायेंगे, प्रोफेसर!"

मोती ने मुसकराकर कहा—'लेकिन इस समय तो दोनों ही बन्द हैं। आप सुनाइये ना?"

वह कहने लगा—"आज टकिहारी बस्ती में से एक बेगम नाम की औरत पकड़ ली गई है। उसका असली नाम कमला था। जो गवर्नमेंट के विरुद्ध षडयन्त्र रच कर फरार थी और जिसे पकड़ने के लिये दो हजार रुपये का इनाम था।"

नरेन्द्र बीच-ही में बोला—"ऐसी वेश्याओं में वह स्त्री ...!"

रिपोर्टर ने कहा—"हां, नरेन्द्रबाबू! लेकिन उसकी बहादुरी तो सुनो, उसके पास एक आदमी आता था, जिसे पकड़ने के लिए भी दो हजार रुपये का इनाम था। उसका नाम है विनयशंकर। कहीं एक दिन वहां पर तैनात हुए सी०-आई०-डी० के हवालदार ने उस विनयशंकर को बेगम की कोठरी में देख लिया। उस समय उसके पास फोटो नहीं था। बस केवल सन्देह हुआ था। जब उसने देखी हुई सूरत और फोटो को मिलाया, तो उसे विश्वास हुआ, यही विनयशंकर है। किन्तु कमला की सूरत वह बेगम पर नहीं डाल सका। हां, विनय की चेष्टा के साथ जब वह बेगम को ध्यान से देखने लगा, तो बहुत-कुछ वह उसमें भी कमला के चिन्ह पाने लगा।"—वह कहने लगा—"इस पर यह भी मजा, उसके कई कागजात बेगम की कोठरी में गायब हो चुके थे। आज सी०-आई०-डी० के थानेदार, हवालदार और कई कानस्टेबिल बेगम के पास पहुंचे। पहले तो उससे कुछ इधर-उधर की बात-चीत की। फिर उसकी कोठरी की तलाशी लेने लगे। तलाशी लेते हुए वहां की जमीन भी खोद कर देखने लगे। लेकिन जैसे-ही वह कोठरी के एक कोने को खोदने लगे, बेगम ने एक साथ पिस्तौल की कई गोलियां चला दीं। हवलदार तो दो गोली खाकर गिर गया। एक गोली इन्स्पेक्टर के हाथ में लगी। सम्भव था, वह सब को समाप्त कर देती, पर सिपाहियों ने तुरन्त उसे पकड़ लिया। जमीन से एक पिस्तौल तथा कारतूसों की पेटी मिली है।"

श्याम बोला—"कितना आश्चर्य है! रिपोर्टर, अवश्य उसके साथ कोई गहरा उद्देश्य निहित था।"

रिपोर्टर ने कहा—"यह क्रांति युग है। श्यामबाबू, तुम समझते होगे, ये सब नारियां इसी धन्धे की लोलुप हैं। स्मरण रहे इनके पास भी अनेक उद्देश्य हैं।"

मोती इस समय बहुत गम्भीर बनी हुई थी। उस्तादजी से बोली—"साज बांध दो उस्तादजी।" फिर नरेन्द्र से कहने लगी—"बड़ी मर्द औरत निकली नरेन्द्रबाबू! मुझे मिले तो उसके पैर चूम लूं।"

नरेन्द्र बोला—"उसके पैरों को संसार चूमेगा। वह जिस कोठरी में रही, उसे पवित्र कर दिया और जिस गली में रही उसका भी नर्क धुल गया।"

रिपोर्टर कहने लगा—"जब उसको पुलिस ले जाने लगी, तो मैंने उससे पूछा—"कोई सेवा?" तो वह प्रेम और अपनत्वता के साथ बोली—"सेवा तो बहुत हैं रिपोर्टर महाशय! देश का समूचा भाग सामने तड़प रहा है।" उसके इस आदेश को सुनकर मैं शांत हो गया था और जब उसे पुलिस मोटर में ले जाने को थी, तो कई स्त्रियों को लक्ष करके उसने कहा--'बहिनों, अगर यह रोजगार कमाना है तो अपने को खोओ मत! स्मरण रखो, तुम अपने देश को मां बन सकती हो। इस कमाई के पैसे को नाली में न बहा कर, देश के काम में लगाओ। मैं कहती हूं इन कोठरियों को छोड़ कर अपनी झोपड़ियों में जाकर बैठो। तुम्हारा परमेश्वर तुम्हें वहां भी रोटियां देगा।'' ' और उसके चलते, कई स्त्रियों ने उसे हाथ जोड़े।"

नरेन्द्र बोला—"श्यामबाबू, सुना! जिन्हें तुम केवल मनुष्यों के पैसों पर नाचने वाली कहते हो, उन्हीं में से एक की यह कथा है। नवीन और अनोखी कथा।" वह रिपोर्टर से कहने लगा—"और जब वह कोर्ट के अन्दर बयान देगी, तो वह देश-भक्ति का एक अनूठा इतिहास होगा रिपोर्टर।"

प्रोफेसर ने कहा--"फांसी होगी।"

'अवश्य!'--हवलदार पोस्टमार्टम पहुंचा दिया गया है।' रिपोर्टर ने कहा।

यह विषय ऐसा था, जिसे सुन कर सभी गम्भीर हो रहे। नरेन्द्र ने कहा— "चलना चाहिये प्रोफेसर।"--फिर बोला—"हां, हमारी भी एक नयी बात सुन लो। रिपोर्टर और चमेलीबाई का इसी रविवार को विवाह होना तय हो गया है।"

छियासी

श्याम उछल कर बोला—"सच ! बधाई रिपोर्टर बाबू ! मुझे कहने को एक भाभी तो मिली।" वह फिर चमेली से कहना लगा—"मैं पहले से ही राम-राम करता हूं, भाभीजी। पहले दिन की बनाई रोटियों को खानेका हक मुझी को होगा ना ?"

मोती हंसती हुई बोली—"चे खुश, आपने देवर-भाभी का रिश्ता बहुत जल्दी जोड़ लिया, श्यामबाबू।"

नरेन्द्र ने देखा, प्रोफेसर इस बात में सहयोग देने के साथ कुछ संयत भाव ले बैठा है। तभी उसने प्रोफेसर से पूछा—"आपने क्या निश्चय किया, प्रोफेसर साहब ?"

प्रोफेसर बोला—"मैं उस दिन सब कह चुका हूं नरेन्द्रबाबू। तुमसे भी और मोतीबाई से भी।"

मोती ने कहा—"तो फिर क्यों न एक-ही दिन दोनों का हो जाये। हीरा को अपनी ओर खेंचती हुई बोली—"मेरी हीरा आपके सामने है प्रोफेसर साहब ! क्यों नरेन्द्रबाबू ?"

नरेन्द्र बोला—"ठीक तो है प्रोफेसर ! शुभस्य शीघ्रम।" कहते वह हीरा और प्रोफेसर की तरफ देखने लगा।

प्रोफेसर बोला—"मेरी स्वीकृति की राह में समाज का कोई प्रतिबन्ध नहीं है, नरेन्द्रबाबू ! रविवार का दिन उपयुक्त होगा।"

रिपोर्टर बोला—"यह कार्य तो तुम्हारे और मोतीबाई के ऊपर है नरेन्द्रबाबू ! हम से जब कहोगे, मंडप के नीचे आ बैठेंगे।"

"तो यों कहो, भाभियों के ढेर लग रहे हैं। "मुसकराता हुआ श्याम बोला -"किन्तु मोतीबाई, तुम्हें कब भाभी कहने का सौभाग्य मिलेगा ?"

यह सुनकर मोती लाल होगयी।

नरेन्द्र ने कहा—"अच्छा, अब हमें चलना चाहिये। मोतीबाई, तुम सब ठीक करलो, मैं किसी दिन बीच में मिल लूंगा।"

कह कर वह उठा। किन्तु जैसे-ही सब चलने लगे तो नरेन्द्र ने देखा, मोती ने कई बार उसे देखा है। जिसमें याचना और मोह का ऐसा सामंजस्य आ मिला था जिसे देखकर उसे इच्छा आई, वह रुके, और

मोती से कुछ कहे। और जब वह जीने में आया तो उसने स्पष्ट देखा, मोती की आंखों से कई बूंद उसके आंचल में गिर गये हैं। जिन्हें उसने बड़ी पटुता से छिपा लिया है। किन्तु वह आंसू देखकर भी रुका नहीं। राह में चलते, उसमें भावना उठी, वह लौट चले। और मोती के पैरों में गिरकर बोले— "ऐ मोती! मैं तुझे प्यार करता हूं।— मीठा और सरस प्यार! किन्तु इसी समय उसे बेगम का ध्यान हो आया। अपने-आप बोला—"एक यह भी तो मीठा प्यार है। जीवन और मृत्यु का प्यार! जिसे पाने के लिये उस महान स्त्री को फांसी पर चढ़ जाना होगा!—अनायास उठे भयानक दर्द के साथ उसने अपने से पूछा—"तुम कौनसा उत्सर्ग करने चले हो नरेन्द्रबाबू! कहते, वह स्वयं अपने विश्व के शून्य-अन्धकार में घूम गया। उसे नहीं जान पड़ा, वह एक जीव है और एक स्थूल जीव है। बस केवल वह एक ठंडे पिन्ड की तरह इस राह पर चल पड़ा है, जैसे निर्जीव होकर वह बहा जा रहा हो—जहां उसका कोई अस्तित्व नहीं है, कोई ध्येय नहीं है।

## बारहवां परिच्छेद

एक दिन जब नरेन्द्र, मोती के यहां आकर एकान्त कमरे में उससे बातें कर रहा था, तो उसी बीच में दुअन्नी कमरे में पहुंची। एक युवक से मोती को बातें करते देख कर दुअन्नी में एक गुप्त शंका उठ आयी। किन्तु वह अपने भाव को रोक कर, मोती से बोली— "बाबू को पान खिलाओ मोती! तुम अपने यहां आये अतिथि का सत्कार भी नहीं करना जानतीं।"

मोती ने साधारण ढंग से कहा— "अम्मा, यह पान नहीं खाया करते।" तभी कहने के साथ-ही उसने दुअन्नी के चेहरे पर आये भावों को पढ़ने की चेष्टा की।

इतने में नरेन्द्र चलने को उठा। उसने पांच रुपये का नोट मोती की तरफ बढ़ाया। नोट का लेना मोती को भला नहीं लगा। वह इस विषय में अभी सोच ही रही थी कि उसने दुअन्नी से सुना--"अरी लड़की क्या सोच रही है। देख बाबू क्या दे रहे हैं।"

मोती मानो सचेत होकर तुरन्त बोली— "आप इतनी जल्दी जा रहे हैं बाबू !"—कहते उसने रुपये ले लिये।

नरेन्द्र के जाते-ही दुअन्नी ने कहा— "पगली कहीं की! —क्या बाबू का रूप देख रही थी।" तभी रोष भरे स्वर में उसने पूछा— "क्या दे गया बाबू ?"

मोती ने ईर्षा और क्षोभ-भरे दिल से उत्तर दिया—"पांच रुपये।"

यह सुन कर दुअन्नी ने रुपये की बात छोड़ दी। वह मोती को देख कर बोली— "तुझे क्या हो रहा है मोती! मैं देखती हूं तू आज कल अधिकतर अकेली रहती है। गाहकों से पहले की तरह बात करना भी पसन्द नहीं करती।"

मोती विद्रोह भरे भाव में बोली-"मुझे क्या-कुछ हो गया है, अम्मा!"

दुअन्नी ने फिर शांत और गुरुत्व भरे स्वर में कहा— "मैं झूठ नहीं कहती मोती! मैंने बाल आदमियों में रह कर पकाये हैं। किसी से प्रेम करना बुरा नहीं है। लेकिन प्रेम पर स्वयं अपने को बलिदान मत करो बेटी।"

मोती ने भरे दिल से रुखाई के साथ पूछा—"अम्मा, इसका मतलब?"

किन्तु जैसे दुअन्नी खुलना नहीं चाहती थी। अब वह कम्पित स्वर में बोली—"तुम बच्ची भी तो नहीं हो।" कहते, उसने लम्बी सांस छोड़ दी और बोली—"जो मन में आये करो, पर करो सोच-समझ कर।"

दुअन्नी के जातेही, मोती ने अपने मन की आंखों से देखा तो जैसे उसे काठ मार गया था। उसमें एक बारगी भावना आई, कि वह अपने इस एकान्त में रो पड़े। किन्तु उसके आंसू नहीं निकल आये। तब बहुत देर बाद जब उसने अम्मा की बात छोड़ दी और फिर पूर्ववत हो गई तो उसमें सुखद कल्पना व्यापी— वह एक गढ़ की रानी है। और उस गढ़ का अधिपति नरेन्द्र है। वह अपने उस गढ़ के अन्दर बड़ी प्रसन्न है। बड़ी सुखी है। वह अपने राजा की प्यारी बनी हुई रानी, राजा को पूजती है, और हर्षती है।

किन्तु मोती की यह मीठी भावना अधिक नहीं टिक सकी।

दुलारी का कटाक्ष, और उसके प्रेम के प्रति उपेक्षा, फिर उसके सामने आगयी। तभी मानो ज्वार आया, और उसका बना-बनाया किला ढह गया। अब, मोती का हृदय पहले से अधिक उद्वेलित हो उठा। उसमें विचार आया, वह अभी अम्मा के पास जाकर कह दे—'मैं इस पैसे को नहीं कमाऊंगी अम्मा!' इस विचार के साथ, अम्मा का जो खरा और अभ्यासी उत्तर होगा, जब वह मोती के सामने आया, तो वह एकबारगी काँप गयी। उसका रुंधा अन्तल इतना गम्भीर हो गया, कि वह अपने-आप ऐंठ गया।— मोती रो पड़ी। और यदि इस स्थिति में उसके सामने नरेन्द्र आ जाये तो निःसन्देह वह बिना आपत्ति के कह उठेगी— 'तुम मुझे यहां से ले चलो बाबू!—अभी ले चलो।'

किन्तु, जब मोती फिर रो चुकी, तो उसका दिल गिर गया। वह उदासीन हो गयी। और वह विश्वास करने लगी उसमें कुछ नहीं है। वह यों ही पड़ी रहेगी। लोग आयेंगे और उसे ठुकरा कर चलते बनेंगे!

इतने में हीरा कमरे में आयी। वह मोती के पास आकर बोली—"आज अम्मा को क्या हो रहा है, मोती! वह कुछ रुआसी-सी कमरे में बैठी है।"

मोती ने कहा—"वह अभी तो यहाँ से गयी है। तू ने गलत समझा होगा।"

"नहीं मोती।"—हीरा बोली—"मैं सुन नहीं पायी, वह कुछ कह भी रही थी। हां, इतना-भर सुना— यह जिन्दगी-ही ऐसी है, जिसकी न जड़ है न साख!"

मोती बोली—"तो अम्मा जरूर रोयी है। वह हमारे रवैये देखकर ही ऐसा सोच रही है हीरा! अच्छा, तू यहीं बैठ, मैं अम्मा के पास जाती हूं।"

दुलारी के कमरे में जाते-ही मोती ने देखा, सचमुच उसकी अम्मा खाट पर पड़ी हुई रो रही है।

"अम्मा!"—पास जाकर मोती ने कहा—"तुम रो क्यों रही हो अम्मा?"

मोती का स्वर सुनते ही, दुअन्नी अपनी पहिली स्थिति में आगई। वह मोती की ओर देखकर बोली—"मैं रो नहीं रही हूं, बेटी! याद कर रही हूं, कि मैं आज किस तरह धनवाली बन गयी। जो मैं एक दिन जवान थी, आज कमर झुकाकर बुढ़िया क्यों बन गयी हूं।"

मोती ने अम्मा की बात में से एक का भी अर्थ नहीं समझा। कहने लगी—"जवानी के बाद बुढ़ापा कौन नहीं देखता अम्मा!"

दुअन्नी को मोती की इस बात से शान्ति नहीं मिली। वह इस समय कुछ और ही चाहती थी। बोली—"नहीं बेटी! तुम मेरी बात समझने की चेष्टा मत करो।" क्षणैक रुक कर अपने-आप कहने लगी—"मोती, मैं तुमसे जरूर कहती हूं, कि तुम राह में चलती हुई भटकने की चेष्टा मत करना। आह! मैंने कितनी लड़कियों का जीवन नष्ट कर दिया है मोती!—भोली और सुकुमार बच्चियों का।" वह मोती का हाथ पकड़ कर कहने लगी-"तू भी आज किसी बड़े घर की बहू होती मोती। पर हाय! तुझ पर तो मेरी निगाह थी।"

मोती ने आश्चर्य के साथ पूछा—"मैं कैसे बड़े घर की बहू होती अम्मा?"

अब दुअन्नी की आंखों के आंसू सूख चुके थे। वह कहने लगी—"तेरे लिये, इतना मेरा दोष नहीं है मोती, जितना कि तेरे पिता का था। वह तेरा पिता था।—जाने कैसा पिता था बेटी!...जो आदमी वेश्या के यहां लुट कर, कंगाल और धनहीन हो जाये, यह मैंने तेरे पिता को ही देख कर सीखा कि ऐसा मनुष्य, दुनिया में घोर-से-घोर पाप कर सकता है। वह मनुष्य-जाति का कलंक, तेरा पिता था, या अब क्या कहूं मोती, कि वह कैसा था। जब उसकी प्यास नहीं बुझी, तो तू पांच हजार रुपये में मेरे पास रखी गई थी।—हां, पांच हजार में! हाय, उस कामी ने उन पांच हजार रुपयों को भी चवन्नी की एक लड़की पर बखेर दिया था बेटी!"...

यह सुन कर मोती को अब इससे भी आगे जानने की इच्छा हो आयी। वह पांच हजार में बिकी हुई है, यह तो वह दुअन्नी से पहले

भी सुन चुकी थी। पर वह पूछने लगी--"तो अम्मा, वह थे कहां के ?"

"यह कुछ पता नहीं बेटी।--था शहरी ही।"

इतने में हीरा, पन्ना और चमेली भी आगई। सब को देखकर प्यार से दुअन्नी बोली --"आओ बेटी।"--कह कर उसने सब को चारपाई पर बैठाया। फिर कहने लगी--"तुम सब समझदार हो। अगर तुममें से कोई यहां से जाने के लिये तैयार है, तो वह मुझसे कहे, मैं उसे पैसा और आशीर्वाद देकर बिदा करूंगी मोती।"

मोती बोली--"तुम ऐसी बातें क्यों कर रही हो अम्मा !"

"नहीं बेटी ! भला मैं कितने दिन की हूं। मरते समय तुमसे कोई छल नहीं करूंगी। यह धन तुम्हीं ने कमाया है, अगर तुम्हारे ही पल्ले पड़े तो इससे बड़ा मुझे और कौनसा सुख होगा।"

लड़कियां शान्त थीं।

दुअन्नी कहती चली--"अब अगर चाहती हूं, तो इतना ही बेटा कि मरते समय तुममें से जरूर एक मेरे पास हो।"

मोती उठ कर बोली--"तुम अकेली नहीं रहोगी अम्मा। अगर कोई भी न रहेगा, तो ईश्वर तो तुम्हारे पास होगा।"

तभी कमरे के बाहर आकर हीरा पूछने लगी--"क्या बात थी मोती?"

मोती बोली--"आज अम्मा किसी बात को देख कर दुखी हुई है।"

"कौनसी बात ?"

मोती ने कहा--"बात बहुत कुछ हैं हीरा, और है कुछ भी नहीं। अम्मा जिस उम्र में है, इस तरह दुखी होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। आखिर हम हैं तो बाहर की ही ना !"

पास आकर बैठती हुई पन्ना ने कहा--"नहीं बहिन !--यह बुढ़िया हमारे दिल को टटोलती है।"

"यह भी हो।" मोती बोली-- "अम्मा इस तरह कई बार रो चुकी है। और हमें खुली छुट्टी दे चुकी है।"

हीरा कहने लगी--"ना, बहिन ! पापी के पास भी दिल होता है। फिर अम्मा तो कुछ पुण्य करती है। इस पेशे को कमाकर, अगर आज

यह बातें न सूझेंगी, तो क्या फिर से आदमियों को रिझायेगी। इसके अपनी कोख की कोई लड़की भी तो नहीं मोती।"

किन्तु, इस स्थिति के आते ही मोती को अनायास एकान्त की चाह हो आयी। वह तुरन्त उठ कर छज्जे पर गई। पर उसे वहां खड़ा होना भी उपयुक्त नहीं जंचा। उसके अन्दर जो एक अज्ञेय भावना उठ चली थी, वह उसे एकाएक व्यथित करने लगी, उसे याद आया, उसका पिता है।—कामी और लोभी पिता। वह अपने ऐसे पिता को देखे, और उसकी छाती से लग कर रो पड़े। जाने उस पिता के साथ, उसकी कैसी मा होगी।—आह! उसके गत जीवन का वह कैसा इतिहास होगा!...वह एक बार जोर से बोली—"इस बुढ़िया ने तेरा नाश कर दिया है मोती!"...फिर कहने लगी—"किन्तु इसका भी क्या दोष! यह जीवन!—हां, यह इसी प्रकार बीतता रहेगा!—यह कहते एकाएक उसे नरेन्द्र का ध्यान आया। बोली—"किस तरह कहूँ कि यह बाबू मुझसे विवाह करने के लिये तैयार होगा!"—हाथ की हथेली पर ठोढी टेक कर कहने लगी—"बाजार की लड़कियों से विवाह करने से पूर्व, अपने सम्बन्धियों के प्रतिकार को कौन भूल जाये मोती।" बलात, मोती के दोनों हाथ बँध गये। आंखों से आंसू उड़ेल कर बोली—"दया करो प्रभो! जाने इस समय वह कौनसी याचना के लिये प्रभू के द्वार पर भटक गयी थी जब कि उसके प्रेम भरे दिल में आग की ज्वाला भभक उठी थी।

# तेरहवां परिच्छेद

जब दूसरे दिन ये कथित मित्र दुअन्नी के कोठे पर पहुंचे, तो दुअन्नी ने इन चारों के सामने एक बात रखी। किन्तु उस बात में इनमें से एकने भी प्रेरणा नहीं पायी। जब वह अपने कमरे में चली गयी, तो नरेन्द्र बोला—"सुना रिपोर्टर, एक नारी का मूल्य केवल दो सौ रुपये।" वह चिल्लाया,—"तुम इस दो सौ रुपये की शिला पर उसे तोड़ सकते हो, और फोड़ सकते हो!...एक स्त्री को भोगने के लिए एक रात के केवल दो सौ रुपये!..."

रिपोर्टर बोला—"व्यापार में ऐसी भावुकता नहीं चल सकती नरेन्द्रबाबू ! दुअन्नी का यह व्यापार है । वह इसे पाप भी तो नहीं समझती।"

नरेन्द्र बोला—"क्या पता, जब वह इसे पाप नहीं समझती, तो इन नारियों को भोगने वाले व्यक्ति ही क्या समझते हैं। किन्तु जिनके पास कोई प्रतिकार ही नहीं है, भावना ही नहीं है, उनके लिए पाप का अर्थ ही क्या ! भावुकता भुलायी भी तो नहीं जा सकती, रिपोर्टर। कर्म,कर्म है। पर औचित्य-हीन कर्म का ध्येय क्या होगा !"

"मैं इसे स्वीकार करता हूं।" रिपोर्टर बोला।

वह फिर कहने लगा—"रिपोर्टर, यही बात हमारे साथ भी लागू है। समाज में ऐसे व्यक्ति कम नहीं हैं, जो विवाहे-ही नहीं जाते। ऐसे भी साथ-ही पुरुष कम नहीं हैं जो इन नारियों से तृष्णा को ही शान्त करने के लिए उद्यत हों। वह विवाह नहीं है। केवल.तृष्णा का द्वन्द है। विवाह एक पवित्र संस्कार है।" नरेन्द्र इस प्रसंग में जान-बूझ कर आया था।

"अर्थात ?" प्रोफेसर ने पूछा।

"हम जो करना सोच रहे हैं, यह अवश्य देखें, उसमें मूल तत्व कितना है।" वह कहने लगा—"बात दूसरी चल रही थी प्रोफेसर। किन्तु इस विवाह की बात पर आकर कम-से-कम तुम यह तो स्वीकार करोगे, बिना स्वार्थ की भावना के उठे, मनुष्य परमार्थ के भी किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं हो सकता। चाहे कर्म व्यक्तिगत लाभके लिए हो अथवा समाज या राष्ट्र के लिए। इसी तरह इन नारियों की बात है। हम लोग इन्हें ऊपर उठाने के लिए व्यग्र हैं, जो हममें से दो मित्र इन लड़कियों से विवाह करके अपने संकल्प का श्रीगणेश भी करते हैं। इसी स्थल पर हमारे सामने दो प्रश्न उठते हैं, एक निजी स्वार्थ, और दूसरा परमार्थ। हम इनमें से किसका पोषण कर रहे हैं, यह निश्चय रूप से पहले विचार लेना चाहिये प्रोफेसर।"

नरेन्द्र की यह बात प्रोफेसर को कुछ भली नहीं लगी। वह इस

विषय में कुछ उत्तर देता, कि रिपोर्टर हंसने के भाव में बोला—
"मगर मित्र, जब स्वार्थ सामने है, तो हम क्यों नहीं, इसी का सुन्दर उद्देश्य बना लें। आखिर यह प्रश्न छोड़ा भी तो नहीं जायगा।

"क्षमा करो रिपोर्टर"—नरेन्द्र बोला—"आज तुम विवाह कर लेते हो केवल रंग-रूप को देखकर। जिसका मिटना भी अनिवार्य है। उस दशा में क्या पति-पत्नी का वही सम्बन्ध बना रहेगा, यही मुख्य प्रश्न है। इस नैतिक प्रश्न को हल करने के लिए, हमें अपने समाज की प्रथा का अनुसरण लेना पड़ता है। भले ही, उसमें दोष आ गये हैं, किन्तु उसकी सार्थकता को भुलाया भी नहीं जा सकता। पति-पत्नी का आध्यात्मिक-जीवन, कुछ समाज से भी मांगता है। प्रोफेसर, मैं जानता हूं, इस रीति-नीति में स्त्री-समाज पर कम अत्याचार नहीं किया गया है। किन्तु इसमें समाज के नियमों का क्या दोष। यह हमारी शिक्षा का बहाव है। और उन लोगों का भयङ्कर स्वार्थ है, जो अपनी स्वेच्छा का पेट भरने के लिये, देश के सामने धर्म का जाल बिछाते हैं। निःसन्देह, इस क्रान्ति-युग में इस प्रकार के जाल को तोड़ देना चाहिए। और यह युवकों का काम है। किन्तु, हमें केवल स्वेच्छा का अन्त करना होगा, नियमों केअस्तित्व को नहीं मिटाना है।"

प्रोफेसर बोला—"किन्तु, तुम जिस समाज को लेकर, पति-पत्नी में आदर्श देखते हो, वह आज भारत में कल्पना की भी बात नहीं है नरेन्द्रबाबू! मैं नहीं समझता, पुरुष के पास क्यों इतने अधिकार हैं, कि वह अतिरिक्त पत्नी भी रख सकता है। मैं तुम्हारी बात का खण्डन नहीं कर रहा। यहां तक मैं भी सहमत हूं। परन्तु, गृहस्थ के आध्यात्मिक दृष्टि-पथ पर आते ही, यह प्रश्न अछूता रहता है, वेदों के संस्कार में, जहां स्त्री को देवि और मा का रूप दिया है, वहाँ उसे अधिकारों से बंचित क्यों कर दिया। भले ही, यह वेद की बात न हो। किन्तु, उनके प्रचारक अवश्य इस बात को लिए हैं। तुम कहते हो, यह युवकों का काम है, हां, ठीक भी है। पर यह न भूल जाओ नरेन्द्र, हमारे देश

की समाज व्यवस्था ही ऐसी है, यहां धर्म का इतना गारा गढ़ है कि जब तक राज्य-व्यवस्था का हस्तक्षेप नहीं होगा, युवक क्या, संसार की कोई भी शक्ति काम नहीं कर सकेगी। मत भूलो कि हम गुलाम हैं। गुलाम का दायित्व कभी ऊंचा नहीं उठ सकता। और जिन धर्म-दाताओं से हमें कुछ छीन लेना है, उन्हीं पर तो राज्य का हाथ है। राज्य भी तो उनसे कुछ कम नहीं कमाता। यह सब इसी प्रकार चलेगा। हां, हमें अपने को यह कहना है, विवाह-जीवन बाजार की वस्तु नहीं है। यह जीवन का महान कर्म है। यहां सत्य की पूजा करनी ही होगी। जब तक हम पत्नी को आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखेंगे, सुख और सन्तोष केवल कल्पना की बात होगी। पति को स्त्री के चरणों में झुक जाना है और स्त्री, जो एक दिन मां का रूप धरती है, पति को इस रूप में देखना है, कि वह उसका है।--भक्ति और प्रेम को उत्सर्ग करता हुआ उसका पति है। विवाह का काम शीघ्र सम्पन्न हो जाना नरेन्द्र बाबू।"—कहते प्रोफेसर लाल हो गया था।

किन्तु रिपोर्टर हास्य के भाव मे बोला—"बहुत शीघ्र! क्यों कि अखबार का मुख्य पृष्ठ इसी समाचार से भरेगा।"

मोती बोली—"और फोटो भी।"

"मगर पहले आपका।"

श्याम बोला—"वह भी भाई नरेन्द्र के साथ।"

"आपकी जबान खुल गई ना। मैं तो सोचती थी, आज आप बोलेंगे ही नहीं।" मोती ने कहा।

"वाह! जब भाभी का जिक्र आये, मैं चुप रहूं। फिर रोटियां कैसे मिलेंगी। पर मुझे आप न कह कर, तुम उपयुक्त होगा भाभी जी। क्यों कि मैं नरेन्द्र भैया से बहुत छोटा हूं।"

इतने में रिपोर्टर द्वारा मंगाई मिठाई आई। मोती ने मिठाई इन चारों के सामने रख दी। नरेन्द्र ने कहा— "इसमें से आधी निकाल लो मोती।"

हीरा ने कहा—"हम लोग कुछ नहीं खायेंगी।" "—कहकर मोती

को छोड़ कर सब एक ओर चली गईं। मोती बोली— "आप खाइये, आखिर हैं तो लड़की ही। शरम के आगे ये मिठाई नहीं खा सकेंगी।"

पर श्याम पत्ते पर मिठाई रख कर बोला—"तुम तो आओ भाभी।"

"नहीं तुम-ही खाओ।"

मगर श्याम इस तरह नहीं मानने वाला था। मोती को इच्छा न होते हुए भी उसके साथ मिठाई खाना पड़ी।

मिठाई खाते खाते नरेन्द्र बोला— "परसों तुम्हें इन लड़कियों को तैयार रखना है मोती। क्यों ठीक है ना?"

"ठीक है। किस समय?"

"प्रातः आठ बजे।"

इसके बाद सब उठ कर चल दिये। निस्तब्ध, और शून्य, केवल मोती कमरे में रह गयी थी।

# चौदहवां परिच्छेद

अगले दिन जब रिपोर्टर नरेन्द्र के घर पहुंचा तो उसने बातों के प्रसंग में कहा—"तुम्हारी रात की बातें प्रोफेसर को पसन्द नहीं आयीं, नरेन्द्र बाबू।"

उसने पूछा—"क्यों?"

"तुम्हारी बातों से ऐसा जान पड़ा कि अपने को लड़कियों की दृष्टि में बहुत ऊंचा साबित करना चाहते थे।"

इस बात को सुनकर नरेन्द्र हंस कर बोला—"यह प्रोफेसर ने कहा है, रिपोर्टर?"

"नहीं।"—रिपोर्टर ने कहा— "कह तो मैं ही रहा हूं, लेकिन है प्रोफेसर के ही भावों का रूपान्तर।"

नरेन्द्र बोला—"बहुत सम्भव है, तुमने गलत समझ लिया हो। यदि यह प्रोफेसर की ही बात हो, तो तुम्हारा इस सम्बन्ध में क्या मत है?"

रिपोर्टर बोला—"इस सम्बन्ध में मैंने कुछ नहीं विचारा है। किन्तु मेरी निजी धारणा है, रात की बात से तुम यह स्पष्ट कर रहे थे, हम मनुष्य हैं, किन्तु वह समाज से ऊंचा वस्तु नहीं है।"

'इसमें झूठ ही क्या !— नरेन्द्र तपाक से बोला—"एक शब्द में तुम स्वयं समाज हो रिपोर्टर ! वाह्य समाज को छोड़ दो। मैं अपने जीवन के समाज को ले रहा हूं। आखिर हमारा नैतिक और अध्यात्मिक-जीवन, समाज नहीं तो क्या है। वेद, इसी बात को लेकर चले हैं। वह मनुष्य के शरीर-शास्त्र को ही दृष्टि में रख कर, हमारे सामने वाह्य समाज की रचना कर गये हैं। दोनों में भेद नहीं है। जानो, तुम चमेली के समाज से अपना सम्बन्ध जोड़ रहे हो। अभी तक तुम उसके वाह्य समाज से परिचित थे। किन्तु अब तुम्हारा और उसका समाज एक होकर विश्व के सामने आयेगा। यदि तुम्हारे और उसके समाज की समता में भेद आ गया, अपने सम्बन्धियों की प्रतारणा के आगे तुम झुक गये, यहीं पर उस लड़की के लिए संसार के सब द्वार रुंध जायेंगे रिपोर्टर। उसका समाज टूट जायगा। जो तुम्हारे समाज का पाप होकर, वह केवल प्रायश्चित करने के लिए रह जायेगी !"

रिपोर्टर बोला—"ऐसा नहीं होगा नरेन्द्रबाबू। फिर तुम तो हो-ही, भूले को सुझाने का काम तो तुम्हारा ही होगा ना।"

"केवल इतना-भर पर्याप्त नहीं होगा रिपोर्टर। अभी बहुत बड़ा काम तुम्हारी ओर देख रहा है।"

"हां, हां, क्यों नहीं। तुम्हें अधिकार होगा, हम पति-पत्नी से मनचाहा काम ले सकोगे। किन्तु एक बात तो बताओ। बोलो पूछूँ या नहीं।"

"क्यों नहीं पूछोगे।"

"तुमने अपने विवाह के विषय में क्या स्थिर किया है? मालूम होता है, मोतीबाई तुम्हें वर चुकी है।"

इस बात को सुन कर वह बोला—"अभी कुछ स्थिर नहीं किया है रिपोर्टर। मैं अभी विवाह के प्रति झुक नहीं गया हूं। मैंने मोती को कोई वचन भी नहीं दिया है।"

"किन्तु, वह तुमसे प्रेम जो करती है।"

"मैं इसे जानता हूं।"

"लेकिन तुम विवाह के प्रति उदासीन भी तो नहीं हो नरेन्द्र !"

"हां, यह ठीक है। किन्तु, विवाह से पूर्व, मुझे एक और कार्य करना होगा रिपोर्टर।"

"उस कार्य को मैं जान सकता हूं। इन्हीं नारियों का सुधार ना ?"

"मैं इस सुधार को कार्य रूप में लाऊंगा मित्र। तुम लोगों को मेरी मदद करनी होगी।"

"किन्तु, क्या तुम ने मोती के सामने अपनी इस स्थिति को रख दिया है। कदाचित, अभी तुम उसकी बात का कोई उत्तर नहीं दे पाये हो। यह आदर्श नहीं है नरेन्द्रबाबू "

क्षण भर नरेन्द्र, रिपोर्टर को तरफ देखने लगा। बोला--"पर, मैं तो इसी आदर्श को पालने चला हूं रिपोर्टर बाबू !"

"केवल कोरी भावना है। —रिपोर्टर बोला--"जो इस लोक की भी नहीं है। तुम्हें मोती से विवाह कर ही लेना चाहिये। वह तुम्हारे मार्ग में अवरोह भी तो नहीं होगी।'

"मैं इसे जानता हूं रिपोर्टर, मोती जैसी पत्नी पा मैं सुखी होऊंगा पर, यह आवश्यक भी तो नहीं है, विवाह कर ही लेना चाहिये। प्रेम पा लेने की वस्तु नहीं है। वह देखने को है। मैं इस नारी-पेशे को अपने जीवन में नष्ट हुआ देखना चाहता हूं, मित्र।"

इतने में, प्रोफेसर कमरे में आया। जब वह हाथ मिला कर कुर्सी पर बैठ गया, तो नरेन्द्र बोला—"सुना है, मेरे मित्र प्रोफेसर मुझसे नाराज हैं।"

प्रोफेसर, रिपोर्टर की ओर देखकर बोला--"निःसन्देह बहुत अधिक।"

"क्या मैं कारण जान सकता हूं, कि आप बगल में क्या दबा लाये हैं।"

प्रोफेसर बोला—"जी नहीं, जान नहीं सकते, देख सकते हैं।"

"धन्यवाद !"—कहते, नरेन्द्र ने प्रोफेसर की बगल से कागज का लिपटा हुआ बण्डल निकाल लिया। और जब उसे निकाल कर देखा, तो तीनों इस तरह हंस पड़े, कि बण्डल की वस्तु पर तनिक देर के लिये होने वाली समालोचना रुक गई।

रिपोर्टर बोला—"तो भई, मुझे भी लानी पड़ेगी।"—वह साथीथी।

"अवश्य!"—प्रोफेसर की ओर देख कर नरेन्द्र बोला—"प्रोफेसर साहब, कितने में लाई गई?"

प्रोफेसर तीन उंगलियां उठाकर बोला—"तीन सौ में।"

"तो यह कहिये, अभी तो अकेले प्रोफेसर साहब विलायत का घर भर रहे थे, अब श्रीमती जी भी हाथ बटायेंगी।"

प्रोफेसर ने कहा—"नहीं जनाब! आपके डर से स्वदेशी खरीदी गई है। विलायती के इतने दाम न होते।"

रिपोर्टर उठ कर बोला—"अच्छा भई, कहीं घूमने भी चलोगे, या यहीं बैठे रहना है।"

प्रोफेसर ने कहा—"हां भई, नरेन्द्र उठो। हमें कुछ और भी बातें करनी हैं। हमें आगे के कार्य का विधान भी तो बनाना है। जो इन्हीं दो-तीन दिन में बन जाना चाहिये।"

## पन्द्रहवां परिच्छेद

बेगम का पकड़ा जाना और उसकी पिस्तौल से गोलियां चलना, नगर के लिये एक नई और विचित्र बात थी। जिसके लिए लोगों में जुदी-जुदी भावनायें उठीं। कोई कहता, वह देवी थी। कोई कहता दीवानी थी और कोई कहता बदमाश थी!...

लेकिन इसमें सत्य क्या था, यह बात केवल बेगम तक निहित थी। भला सुख और ऐश्वर्य की गोद में पली हुई जनता सत्य पर कैसे टिक पाती

हवलदार मरा नहीं। वह कुछ दिन अस्पताल में रह कर अच्छा हो गया। किन्तु पुलिस के पास बेगम की सजा के लिये पहले-ही कम प्रमाण नहीं थे।

मुकद्दमा चला। पुलिस की ओर से आठ सौ रुपया प्रति दिन पर वकील था। किन्तु अभियुक्ता स्वयं अपना वकील बनी थी। अब बेगम ने स्पष्ट रूप से अपना नाम कमला घोषित कर दिया था। प्रति दिन जब वह जेल से लौरी में बैठकर कचहरी पहुंचती तो अदालत के कमरे

में जाने से पूर्व ही, वह जनता के समूह के आगे बन्देमातरम् का गीत गाती। गाने के साथ वह इतनी तन्मय हो जाती कि उस दृश्य को देख कर जनता का समूह कुछ कांप उठता कुछ रो उठता।

जब वह अदालत के कटघरे में खड़ी होकर पुलिस के गवाहों से जिरह करती तो अंग्रेज जज और खड़ी हुई जनता उसके उस गम्भीर गवेषणापूर्ण भाषण को सुन कर चकित हो जाती।

तभी एक दिन प्रातः अखबार में निकला, बेगम उर्फ कमला जेल से भाग गई। जनता के सामने उसके प्रति यह दूसरी स्थिति आई। जो दीवानी और बदमाश कहने वाली जनता थी, अब उसमें विचार उठा—"यह नारी थी— जाने कितनी महान्!..."

परन्तु इन सब घटनाओं का उग्र रूप जो बेचारी तीसरी श्रेणी की नारियों पर आया, वह इतना घृणित और जघन्य था कि सुनने वालों ने भी हा-हा खाई। पुलिस के प्रहार के आगे ये नारी कांप गईं। आये दिन उनके ऊपर चारों ओर से जुल्म और आपत्ति आने लगी। नित्य बीसियों स्त्रियां थाने में बुलाई जातीं और बेगम का हाल पूछने के लिये उन्हें कठोर दन्ड दिया जाता। गुन्डे अब खुल कर अपना कर वसूल करने लगे। ग्राहकों ने पुलिस के भय से आना छोड़ दिया। और जायदाद के मालिकों ने कोठरियों के किराये दूने कर दिये।

कैसा दारुण अत्याचार था यह!... ये नारियां, जो विश्व के पैरों से ठुकरायी हुई, इन गन्दी कोठरियों में आ पड़ी थीं अब मनुष्य की कठोर बुद्धि ने उन्हें यहां भी आ घेरा। जिस समाज पर इनकी इस अवस्था का उत्तरदायित्व था, उसके द्वारा दया करना तो दूर, वह उनके प्रति अपने उपेक्षा के भाव को भी नहीं छिपा सका। फलतः दशा दिन-पर-दिन कठोर बनती गई यहां तक कि जब पुलिस का अत्याचार कम हो गया तो भी नारियों की स्थिति में कोई अन्तर नहीं आ पाया। क्योंकि जब कुछ समय के लिये बाजार में ताले पड़ गये और फिर बाद में वह खुला, तो भला पहले गाहक कहां आ पाते! स्थिति की शांति पर भी, इन नारियों के सामने रोटियों का प्रश्न ज्यों-का-त्यों बना रहा।

इन सब बातों का कमला ने अध्ययन किया। जेल से भागकर उसके लिए एक स्थान पर रहना कम चिन्ता की बात नहीं थी। किन्तु इन नारियों की दशा को देखकर वह इतनी विक्षिप्त और व्याकुल हो उठी कि अपने सहयोगियों के कहने पर भी, उसने शहर छोड़कर भाग जाना स्वीकार नहीं किया। यहाँ तक कि उसने दो सहयोगियों को अपने विरुद्ध भी कर लिया। परन्तु इस स्थिति में भी उसने एक दिन स्पष्ट कह दिया—"यदि मैं अपने जीवन से देश को स्वतन्त्र नहीं कर सकती हूं तो कम-से-कम इन नारियों के प्रति अपने निश्चित कर्तव्य को अवश्य पूरा करूंगी।" एक दिन उसने स्पष्ट घोषणा की—"मैं अपने इस लक्ष पर पूरा उतरने के लिए यदि फिर वेश्या-वृत्ति करना हितकर जानूंगी, तो करूंगी।"

उसके साथियों में इतनी शक्ति नहीं थी, जो उसके मार्ग में अवरोध बनते। जो विरुद्ध हो गये थे, कमला के सामने उनकी कोई चिन्ता नहीं थी।

एक दिन प्रातः जब विनय कमला के कमरे में गया, तो उसके बिस्तर पर केवल एक पत्र रखा मिला। जो उसी को सम्बोधन करके लिखा गया था। वह पत्र उठा कर देखने लगा। जिसमें लिखा था—

"विनय, मैं जा रही हूं। कहां और किस ओर, यह कुछ नहीं लिखूंगी। मुझे ढूंढने की चेष्टा भी व्यर्थ होगी। मैं सम्भव समझने पर तुम्हें ढूंढ लूंगी। हमारा स्थिर उद्देश्य, सभी के साथ है। सभी पूरा करने की एकान्त चेष्टा करें, यही मेरीकामना है। मैं अपने कार्य-क्षेत्र में उतर रही हूं। विदा। तुम्हारी सहयोगिनी—कमला

विनय ने पत्र पढ़कर फाड़ दिया। पत्र फाड़ चुकने पर, जब कुछ देर शांत रहा तो एकबारगी वह विचार सागर में गिर गया। उसी दशा में वह वहां से हट कर अपने कमरे में आया और कमरे में आकर कुछ क्षण के बाद अपने-आप बोला—"क्या इसी तरह देश स्वतन्त्र होगा। कहते, अनायास उसका हाथ जेब में पड़ी पिस्तौल पर गया।

उसे निकाल कर फिर बोला—"हां, इसी प्रकार स्वतन्त्र होगा क्या !... तुम अपने घर-भर को छोड़ चुके हो विनय !"'उसी अवस्था में फिर वह पिस्तौल के रूप को देखने लगा। मन में कहा, यह पिस्तौल है। इसके अन्दर सात गोलियां हैं।—सात आदमियों का अन्त करने के लिये !''' वह झटके से बोला—"सात क्या, यह सैकड़ों का अन्त कर देगी !—यह पिस्तौल है। किन्तु क्या यह परतन्त्रता का भी अन्त कर देगी विनय !'''वह अपने से कोई उत्तर नहीं ले पाया। उसका हृदय रुँध गया। उसमें भावना उठी, वह यह सब कर क्या रहा है। इसका अर्थ क्या है ?—तुम एक दिन देश के लिये फांसी पर चढ़ोगे। और देश स्वतन्त्र होगा ?'''कहते वह पागल की तरह हँस पड़ा। फिर पिस्तौल को गहरी दृष्टि से देखकर बोला—"वह भी इस पिस्तौल से स्वतन्त्र होगा। इस स्थिति के साथ उसने पिस्तौल के दबे घोड़े को ऊपर उठा लिया और देखने लगा, उसके शरीर का कौन अंग ऐसा है कि जिस पर वह पिस्तौल का लक्ष करे। घोड़ा नीचे को छोड़ दे और गोली मार कर उसके उस सुन्दर अङ्ग को भेद दे। वह गिर पड़ेगा, पिस्तौल भी गिर पड़ेगा। और जबकि उसका अन्तिम सांस निकल रहा होगा, तो वह जानेगा—"हां, इससे देश स्वतन्त्र होगा।-·· और छः गोलियां शेष रह जायेंगी। नहीं वह छः को भी अब शेष कर देगा !...

अब पिस्तौल का मुंह उसके माथे की ओर उठ गया था। वह जोर से बोला—"नहीं, तुम्हें मर ही जाना है विनय। इस शून्य में तुम कब तक भटकते रहोगे। यह सारहीन जीवन है। तुम देश के ही कौन होते हो। वह स्वतन्त्र होगा होगा ! आओ, चलो, देखो यह पिस्तौल की गोली कैसी है। यह प्राणों को किस प्रकार खींचती है। तुम्हें मर जाना चाहिये विनय !'''इतने में उसी आवेश के साथ उसने गोली छोड़ दी। किन्तु, गोली कान के ऊपर से तैर कर कमरे में गूँज गयी। उसके हाथ से पिस्तौल गिर पड़ा।—छः गोलियां शेष थीं।

वह एक गोली के गर्जन से कांप उठा। फिर उसमें शक्ति नहीं आयी, किसी ओर से भी प्रेरणा नहीं मिली, कि वह आगे बढ़े,

पिस्तौल को फिर पूर्ववत् हाथ में ले, और ठीक होश में आ माथे से पिस्तौल को सटा दे, और एक-के-बाद छहों गोलियों का अन्त कर दे !···

विनय उसी अवस्था में कुर्सी पर बैठ गया। तभी उसने बाहर से आहट सुनी। बैठे हुए ही बोला––"कौन ?"––उसकी आवाज कांप रही थी।

उत्तर मिला—"सी।"

उसने उठ कर दरवाजा खोला। सांवले रंग का, घुँघराले बाल रखे एक युवक कमरे में आते ही-बोला—"ओह, यह क्या है विनय ! कमरे में गोली का धुआं कैसे भरा है। और यह पिस्तौल कैसे पड़ा है ?"—वह फिर कहने लगा—"यह मकान आज खाली हो जाना चाहिये। कल शाम खुफिया का एक आदमी इधर आया था। कमला कहां है ?"

"वह जा पता है।"

"कोई पता नहीं, कब गई ?"

"आज सुबह।"

युवक शान्त होगया। तभी वह तुरन्त जाता हुआबोला—"यह याद रखना मकान खाली हो जाना चाहिये।"

विनय ने कहा—"अच्छा, अच्छा।"

दिन बीतने पर, चिराग जलते-ही, एक युवक मेहरो की कोठरी के सामने आया। मेहरो उसे ऊपर से नीचे तक देखकर बोली—"ऊपर आओ।"

युवक कोठरी में चढ़ गया। पास जाकर उसने मेहरो से पूछा—"मैंने तुम्हें कहीं देखा है। खड़ी क्यों हो, बैठ जाओ।"

मेहरो ने कहा-"देखा होगा। यहीं देखा होगा। तुम कहां के हो?"

"मैं ?······वह बोला––"तुम कहां की हो ? भला हमारा क्या ठिकाना।"

मेहरो ने उत्तर दिया—"जिला सीतापुर में, कुरसवां········

"ठीक!—कुरसवां में मैं एक ठाकुर के यहां गया हूं। नाम तो भूल गया शायद तुम्हें वहीं देखा हो।"

मेहरो विश्वास-सूचक भाव से बोली—"वहीं देखा होगा।"

"और यह तुम्हारी साथिन?—"तुम्हारा नाम क्या है?"

मुझे मेहरा कहते हैं। यह दूसरी गंगो बलरामपुर के पास की है।

अब युवक मौन हो गया। मेहरो जो भोलेपन से उसकी सब बात का उत्तर देने लगी, उसमें जिज्ञासा उठी, शायद यह हमारे गांव की कोई बात सुनाये। लेकिन, यदि वह मेहरो से यह पूछता, कि तुम्हारे पिता का क्या नाम है, तो सम्भवतः मेहरो इसे न बता पाती।

उसने फिर कहा—"तुम अपने गांव में क्यों नहीं रहतीं?"

मेहरो ने कहा—"खायें क्या! गांव में लोग दाने-दाने के लिये तरस रहे हैं। क्या हम इस पेशे को अच्छा समझती हैं।"—फिर कहने लगी—"कोई पट्टा थोड़-ही लिखाया है। अब तो जाने की ही सोच रही हैं।"

युवक ने पूछा—"जाने की क्यों सोच रही हो?"

वह बोली— "आमदनी तो कुछ है नहीं। पहले तो कुछ होती भी थी, मगर जब से यहां एक लड़की पकड़ी गई है, कोई डर का मारा नहीं आ पाता है इतने आदमी आ-ही नहीं पाते, कि जितनी कोठरियों में स्त्रियां हैं।"

युवक इस बात को सुनने के साथ अपनी किसी भावना को पी गया। बोला—"तो उस लड़की की वजह से, आजकल तुम्हारी आमदनी नहीं होती क्यों?" फिर बोला—"अगर तुम्हें कोई और धन्धा बताये, तो उसे कर सकोगी क्या?"

मेहरो ने तपाक से कहा—"क्यों नहीं। अगर कोई दूसरा रास्ता निकल आये तो हमारी आत्मा बड़ा आशीष दे।"

लेकिन कुछ बता सकती हो, ऐसी और कितनी हैं, जो इस पेशे को छोड़कर दूसरी जिन्दगी बसर करना चाहती हैं।

"सब-की-सब!"—मेहरो बोली—"यदि सब नहीं तो आधी से

अधिक एक साथ इस पेशे को छोड़ने के लिए तैयार हैं। आज-कल बहुत तो एक समय खाकर दिन काटती हैं।"

"अच्छा !"—वह मेहरो की ओर पांच रुपये का नोट बढ़ा कर कहने लगा—"मैं फिर कभी तुम्हारे पास आऊंगा।" कह कर उसने नोट मेहरो के हाथ पर रख दिया।

वह कोठरी से सड़क पर पहुंचा। आज कई दिन बाद मेहरो को एक साथ पांच रुपये का नोट प्राप्त हुआ। वह भी अनायास। वह जाते हुए उस युवक को मन-ही-मन आशीष देने लगी।

यह युवक रूप में कमला थी। जिसे मेहरो, जाने कितनी बार कोस चुकी थी। बाजार के चौराहे पर जाकर, उसने एक अखबार खरीदा। जिसमें उसकी एक ऐसे समाचार पर नजर पड़ी, जिसकी उसे न तो कोई कल्पना-ही थी, और न निकट भविष्य में कोई आशा-ही।

# सोलहवां-परिच्छेद

अपने स्थान पर जाकर जबकि कमला रिपोर्टर और प्रोफेसर के विवाह के समाचार को पढ़ रही थी, तभी उसने अखबार को एक ओर पटकते हुए कहा—"सुन्दर स्त्री को देखकर पुरुष के झुक जाने का अपवाद ही कैसा !"—मगर ठीक उसी समय दुश्रन्नी के यहां एक विचित्र दृश्य उपस्थित हो गया था।

उस रात्रि के समय में, जब कि रोज की तरह लड़कियों का गाना शुरू हो जाना चाहिये था, यह कुछ न होकर बड़े कमरे का प्रकाश तक बन्द था। तभी नरेन्द्र, प्रोफेसर और रिपोर्टर, दुश्रन्नी के मकान के सामने आये, जो यह देखकर सामने पटरी पर स्तम्भित से खड़े हो गये।

उसी समय चमेली छज्जे पर आयी। जब उसने इन तीनों को खड़े देखा, तो मोती से जाकर बोली—"मोती बहिन, वह तीनों बाबू बाहर खड़े हैं।"

स्वयं मोती इस समय किन्हीं और विचारों में थी। यह सुन कर उसने बाहर जाकर इन तीनों को आने के लिये हाथ का इशारा दिया, और फिर जीने के पास जा खड़ी हुई। जब तीनों ऊपर पहुंचे तो नरेन्द्र

से बोली—"मैंने बड़ी गलती की है बाबू, अम्मा से इन लड़कियों के विवाह की बात कह कर, सिर पर विपत्ति मोल ले ली है।"

नरेन्द्र बोला—"यह तो अच्छा ही किया मोती। तुम्हें अपनी अम्मा को बताना आवश्यक था। किन्तु अब क्या विचार है?"

मोती बोली—"मैं इस समय विचारहीन हो गई हूं, बाबू।" —तनिक देर रुक कर कहने लगी—"कल विवाह अवश्य ही होगा। आप स्वयं आठ बजे यहां आइयेगा। मैं आपकी प्रतिक्षा करूंगी।"

"लेकिन तुम्हारी अम्मा की इच्छा का क्या होगा?"

"कुछ नहीं।"—मोती बोली—"वह कहती है, जितने में खरीदी गई हैं, उतने दाम रख जाओ। इसके अतिरिक्त···कहते मोती अधीर हो गई। और तभी झटके के साथ बोली—"कल लड़कियों का विवाह होना-ही चाहिये। वह आप लोगों को खुले मुंह कोस रही है। आप ठीक आठ बजे आइयेगा।–समझे बाबू।"···

नरेन्द्र बोला—"यह लोग साड़ियां खरीद लाये हैं।"

"लाइये अच्छा हो, लड़कियां यहां का एक भी कपड़ा न ले जायें।"

नरेन्द्र ने दोनों से साड़ियों के बन्डल लेकर, मोती को देकर कहा—"अच्छा हम चलें।"

इसमें कौन सी किसके लिये होगी?"

'दोनों एक हैं।"

तभी नीचे राह में चलते हुये रिपोर्टर को एक महाशय ने आवाज दी। जब वह पास आये, तो छूटते ही बोले—"मैं धन्यवाद देता हूं, रिपोर्टर बाबू।"

"किसलिये?"—रिपोर्टर के मस्तिष्क में अभी मोती की बात घूम रही थी। वह इस समय उदासीन था।

वह महाशय हंस कर बोले—"वाह!—पूछ रहे हो, किसलिये? कल जब समाज-मन्दिर में पहुंच कर चार लड्डू लूंगा, तब पूछना किसलिये।"

नरेन्द्र ने रिपोर्टर से पूछा—"अखबार में निकल गया क्या?"

यह सुनकर उस व्यक्ति ने हाथ में लिये अखबार को खोल कर कहा—"यह देखिये हजूर! मैं समझता हूं, आप तो लड्डुओं के उम्मेदवारों में खास होंगे।"

नरेन्द्र बोला—"खूब!–जब बटेंगे देख लीजियेगा।"

महाशय ने प्रोफेसर को लक्ष करके पूछा—"भई, आपकी तारीफ?"

रिपोर्टर बोला–"जिन्हें आपने अखबार में पढ़ा है। मेरे मित्र प्रोफेसर साहब।"

"धन्यवाद!—श्रीमान चार लड्डुओंकी आपसे भी आशा है। —क्यों ना?"

प्रोफेसर—"हां, हां, क्यों नहीं, आप-ही तो मालिक होंगे। कल दर्शन दीजियेगा।"

वहां से चलकर, नरेन्द्र और प्रोफेसर के साथ, रिपोर्टर अपने मकान पर पहुंचा प्रेस का आदमी छपे निमन्त्रण-पत्र ले आया था। रिपोर्टर ने कहा—"तुम दोनों अपने मित्रों के नाम लिखो, मैं अपने परिचितों के लिखे देता हूं। अभी आदमी साइकिल पर चढ़ कर बांट आयेगा।"

घन्टे भर में तीनों ने शहर के सभी प्रतिष्ठित सज्जनों, और मित्रों को निमन्त्रण लिख कर चपरासी को दे दिये। प्रोफेसर ने पूछा— "अब क्या काम है, नरेन्द्रबाबू?"

पहले मिठाई वाले से लड्डू बनाने के लिये कहना चाहिये। और भई रिपोर्टर, श्याम को तो बुलाओ, आज वह दिखायी-ही नहीं दिया।"

रिपोर्टर—"इस समय दस बज चुके हैं?"

नरेन्द्र ने कहा—"तुम आदमी भेज दो। लाओ, मैं पत्र लिख दूं, भागा आयेगा। पता नहीं, कि उसने हम लोगोंकी खोज भी की हो।".

जब आदमी श्याम को बुलाने चला गया तो प्रोफेसर बोला— 'आओ इतने हलवाई को कह दें।"

"श्याम को आने दो। यह चीज उसकी पसन्द पर है।"–नरेन्द्र ने कहा।

रिपोर्टर बोला—"हां, यह ठीक है।"

कह कर रिपोर्टर दूसरे कमरे में गया। चाय बनाने का सामान लाकर बोला—"इतने में आप लोगों के लिये चाय तैयार करूं।"

प्रोफेसर ने कहा—"खाली चाय क्या, मैं निराहार भी हूं।"

"ओ, कुछ खाया नहीं है। आदमी आने दो, अभी मंगाता हूं।"

इसी समय श्याम कमरे में घुसा। वह आते-ही बोला—"कुछ मेरे लिये भी मंगाओ।"

नरेन्द्र ने कहा—"तुम बड़ी जल्दी आये, श्याम।"

इस पर पीछे खड़े आदमी ने कहा— "बाबूजी तो इधर आते-ही मिल गये।"

"तभी मैं कहता था प्रोफेसर, यह ढूंढ़ रहा होगा। अच्छा श्याम, हलवाई से लड्डू बनवाना तुम्हारा काम है। लोगों को हम निमन्त्रण दे चुके हैं।"

श्याम बोला—"लेकिन यह तो बताओ, दुअन्नी के घर का चिराग क्या आज-ही से गुल हो गया। मैंने तो रिपोर्टर साहब की पत्नी से पूछा भी, जो मालूम हुआ, तुम लोग खड़े २ चले आये हो।"

नरेन्द्र ने कहा—"बुढ़िया मचल उठी है। मोती ने जब उससे यह कहा, अब यह दोनों विवाह कर रही हैं, तो उसने कहा है, जितने में खरीदी हैं, उतने रुपये दे जाओ।"

श्याम हंस कर बोला—"बस यही बात। पूछ क्यों नहीं लिया, रुपये मैं दे दूंगा। किसी प्रकार भाभी तो कहने को मिले।"

नौकर ने नमकीन और मिठाई इन लोगों के सामने लाकर रखीं। खा-पीकर श्याम ने पूछा—"तब मोती ने क्या कहा?"

नरेन्द्र ने उत्तर दिया—"कल विवाह होगा।"

"कहीं ऐसा न हो, बराती आकर उल्टे फिर जायें। बड़ी भद्द होगी।" श्याम ने कहा।

यह बात प्रोफेसर के दिल की कही गई थी। जिसे वह बहुत देर से मन में लिये था।

नरेन्द्र बोला—"नहीं श्याम, मुझे मोती पर पूरा विश्वास है।"

"खैर !"—श्याम इस बात को वहीं समाप्त करता हुआ बोला—"तो कल विवाह के लिये लड्डू चाहिएँ। उठो, हलवाई से कहा जाय।"

और जब सब बाजार को चलने लगे तो श्याम ने निरुद्देश्य होकर पूछा— "दुअन्नी के यहां क्या हो रहा होगा?"

"बुढ़िया को लड़कियां मना रही होंगी।" नरेन्द्र ने कहा।

वस्तुतः बात यही थी। जिस उदासीनता के साथ, यह लोग हलवाई के यहां चले, दुअन्नी के कमरे में, ईर्षा, दुःख, क्षोभ और अहंकार का ऐसा मीठा, और हृदय के अन्दर तड़पाने वाला ताण्डव हो रहा था, कि भले-ही, इस समय दुअन्नी बक-झक नहीं रही थी, फिर भी, उसके द्वारा जोर और प्रभुत्व के नाते से लड़कियों के सामने यह अन्तिम बात थी—"मैं तुम्हारे इस विवाह को मन्जूर नहीं करूंगी।"

चमेली और हीरा जब बहुत देर तक इस बात को विचार चुकीं, और दुअन्नी मौन पड़ी रही, तो हीरा फिर बोली—"अम्मा, तुम्हारी यह इच्छा है, हम जिन्दगी-भर अपने को लोगों के हाथों में अर्पण करके, तुम्हारा घर भरती रहें!"...

इस बात के पैने तीर को खाकर, दुअन्नी जोर से चीखी—"छोकड़ी, आज बात करना सीख गई है! पता है, जिस दिन आयी थी, क्या हाल था। अब बातें बनाने लगी—बड़ी पारसायी कहीं की!"

हीरा खीज के भाव में बोली —"लेकिन अम्मा, अब इन बातों को फिर से उठाने में कोई लाभ नहीं है। क्या तुम इतना भी नहीं कर सकतीं, कि जो लड़की अच्छे मार्ग पर चले, उसे कुछ सहारा दो।"

दुअन्नी ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। पास बैठी हुई मोती ने कहा— "अच्छा, अब तुम जाकर सो जाओ हीरा। अम्मा जी कुछ करेंगी, उसमें तुम्हारा भला-ही होगा।"

किन्तु, जो द्वन्द्व उठ खड़ा हुआ था, भले-ही लड़कियों ने उसके प्रति उपेक्षा का भाव रखा, पर बार-बार रोकर, और कांप कर, उनके सामने अन्तिम लक्ष्य आ खड़ा हुआ, वह था, उन्हें अपना निश्चय करना-ही होगा। साथ-ही, दुअन्नी जो शाम से, इनके सामने राक्षसी

बन कर इन्हें रौंदने के लिए तैयार होगयी —अब थकी और कांपती हुई देह को लेकर इस तरह खाट पर पड़ रही, जैसे वह इन लड़कियों के सामने हिम्मत हार बैठी हो।

मोती ने फिर कहा- "हीरा, तुम अपने कमरे में क्यों नहीं जाती हो।"

हीरा तपाक से बोली—"बिना अम्मा की बात सुने चली जायं।"

मोती बोली—"अभी बातों से पेट नहीं भरा ! जा, तुझे जो करना हो कर। अम्मा को तुम-जैसी लड़कियों की कमी नहीं है।"

हीरा क्रोध और ग्लानि के साथ बोली—"यह तो मैं भी जानती हूं मोती, कि मुझ जैसी और आजायेंगी, जो अपने जीवन के गोश्त को टुकड़ियां काट-काट कर गाहकों को खिलायेंगी। और अम्मा का घर भरेंगी !"

मोती इस जहरीली बात को सुनकर मन में मुसकरा दी। फिर बोली—"हीरा तू आज अपनी सुध में नहीं है। अम्मा को खुश करके जाने में ही तेरा भला है।"

हीरा उठती हुई बोली— "मोती, मैं अम्मा के तीर नहीं मार रही हूं। अगर अम्मा मुझे राजी से बेटी कह कर जाने देगी, तो मैं बेटी बनी रहूंगी। अन्यथा ईश्वर इसका फल भी अच्छा नहीं देगा।" कह कर वह चमेली के साथ दूसरे कमरे में चली गयी।

मोती ने दुअन्नी के सफेद चांदी से बालों पर हाथ फेर कर पुकारा—"अम्मा !"

दुअन्नी ने उत्तर में केवल 'हूं' भर कर दी। और तभी एक लम्बी सांस छोड़ कर रुके स्वर में बोली—"ओ', भगवान !" ...

मोती ने फिर कहा—"अम्मा, तुम क्यों रुआसी हो रही हो ?"

दुअन्नी ऊपर मुंह उठा कर बोली—"मोती, इन लड़कियों की बातें सुनकर मैं अपने कर्मों को रो रही हूं। तूने सुनी, यह हीरा, जो कभी खुलकर मेरे सामने नहीं बोली थी आज कैसी बातों की मार देकर गई है। ओह ! जहर की बुझी हुई लड़की !"

मोती ने दुअन्नी की सुर्ख आंखें देखीं। और देखा, अम्मा ने

रो-रोकर अपनी धोती भी भिगो ली है। दया के साथ बोली—"अम्मा, तुम रो भी रही हो?"

दुअन्नी बोली—"ना मोती, जाओ, तुम सो जाओ। मुझे अकेली छोड़ दो।"

"तो रो क्यों रही हो, अम्मा! अब शान्त हो जाओ।" कह कर वह बाहर निकल गयी।

जब मोती अपने कमरे की ओर चली, तो उसने फिर सुना दुअन्नी खुल कर रो पड़ी है।

सचमुच इस समय दुअन्नी का मनीषी-मन अपने व्यवसाय से एक ओर हट कर, लड़कियों की बातों पर गिर पड़ा था। दुअन्नी ने चेष्टा की कि वह रोये नहीं! किन्तु वह शान्त न हो पायी थी।

भला, अब से पूर्व, जिसके पास व्यवसाय के औचित्य की ही बात थी, अब उसके सामने, एक दिन संसार से कूच कर जाने का भी ध्यान आया। और अचानक, वृद्धा दुअन्नी पर एक और विपत्ति, लड़कियां विवाह करेंगी। उसे याद आया, अभी-अभी लड़कियों ने कहा था—"हम विवाह करेंगीं! ......उसने हंस कर टाल दिया था। जब फिर सुना, तो जरा डाट के साथ रोका। किन्तु जब लड़कियों ने फिर वही बात पकड़ी, तो दुअन्नी याद करने लगी, उसने ललकार कर लड़कियों से कहा था— "लड़कियों मत भूल जाओ, कि तुम मेरी खरीदी हुई हो!"

किन्तु उन्होंने तो उसकी इस बात को भी ठुकरा दिया। वे तो स्पष्ट कह चुकी हैं, हमने तुम्हें बहुत कमा कर दिया है। तुम्हारे लिए पैसे पदा करने में अपना ईमान तक को बहा चुकी हैं। औ आज हम समाज से, संसार से, अपना इस तरह नाता तोड़ चुकी हैं, कि जैसे दूध से मक्खी निकाल दी जाती है।

इस रोने की अवस्था में दुअन्नी बहुत देर तक लड़कियों की बातों को दोहरा कर, अपनी अवस्था पर सोचती रही। हाय! हाय! उस रात के पहर में इस वृद्धा की कैसी दीन-दशा थी! जबकि उस क्षण उसके सामने सब-कुछ शून्य होगया था।

# सत्रहवां-परिच्छेद
## द्वितीय खण्ड

प्रातः होने पर, दुअन्नो के सामने रात की बातें केवल छाया-मात्र रह गयी थीं। बहुत सबेरे उठ कर, वह अपने नित्य के काम में लग गयी। उसके मन में आया कि वह लड़कियों को जगा दे। क्योंकि आज वह अपने समय से जल्दी उठ गयी थी। किन्तु उसने जगाया किसी को नहीं। तब कामों से निबट कर जब वह अपने कमरे में पहुँची तो विचारने लगी—"इन लड़कियों को अपने भविष्य पर हर्ष कितना होगा! आज वह दुनिया की तरह विवाह करेंगी। कभी मा भी बनेंगी। पगली चमेली तो रात-भर यही सोचती रही होगी।"

जब लड़कियां जाग कर अपने कामों से निबट लीं, तो उनके सामने रात की फिर समस्या आई। चमेली ने सोचा—"अगर अम्मा ने न जाने दी तो?" इसी उलझन में वह अपनी मा को भी खबर नहीं दे पायी।

अम्मा की बात पर रुक कर चमेली सहम गयी। अपनी इस निर्बलता को छिपाने के लिए, वह हीरा के पास पहुँची। जैसे ही वह जाकर बैठी थी, कि दुअन्नो के कमरे से मोती ने हीरा को आवाज दी।

हीरा ने कहा—"आ चमेली, बुढ़िया से विदा ले लें। देखें, वह अब क्या कहती है।"

चमेली ने कहा—"तू ही जा हीरा।"

हीरा ने पूछा—"क्यों? कोई डर है! उसमें इतनी ताकत नहीं है, जो हमें रोक लेगी।"

चमेली साथ हो ली। हीरा की ओर देख कर दुअन्नो ने कहा—"हीरा बेटी, क्षणेक रुक कर पूछने लगी—"अब तुम ब्याह करोगी, हीरा!"

हीरा इसे केवल व्यंग समझ कर बोली—"सोचा तो है, अम्मा।"

"लेकिन, अच्छी तरह भी सोचा है, बेटी।"

"अच्छी तरह।"

"वह कौन है?"

"एक प्रोफेसर।"

दुअन्नी ने मौन होकर जैसे कोई बात ढूंढी। बोली—"अच्छी बात है।" फिर आंखों में आंसू लाकर कहने लगी—"तू बड़ी कठोर है, हीरा! रात तो तूने मुझे खूब लताड़ दी, क्यों बेटी!" कहते दुअन्नी की आंखों से टप-टप आंसू निकल आये। फिर बोली—"खुशी से जाओ बेटी! मेरा आशीष तुम्हारे साथ है।" फिर झटके के साथ बोली—"ना, मेरा आशीष मत लेना, यह भी पापमय आशीष है। पर, जो भी मेरा अच्छा संस्कार है, उसे तो मैं तुम्हें जरूर ही दूंगी बेटी। और बेटी चमेली, तुम्हारा पति?"

हीरा ने कहा—"वह एक अखबार में काम करने वाले बाबू हैं।" अब हीरा की आंखों में आंसू आ गये थे। चमेली सुबक कर रो रही थी।

दुअन्नी बोली—"मेरी बेटियो, भला मैं इस बुढ़ापे में तुम्हें क्या दूं। तुमने रात जो-कुछ कहा, सब सच था। तुम लोगों ने मुझे जो कमा-कमा कर दिया है, उस धन को खुशी से ले जा सकती हो।"

हीरा ने कहा—"धन का क्या करेंगी, अम्मा। हम यहां की कोई वस्तु नहीं ले जायेंगी। और ब्याह तुम्हीं तो करोगी, अम्मा।"

दुअन्नी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

इतने में नौकर ने आकर सूचना दी—"दो बाबू आये हैं।"

मोती बोली—"अम्मा, वही आये होंगे। यहीं बुला लें?"

"हां, हां, बुलाओ।"

नरेन्द्र और रिपोर्टर के आने पर, हीरा और चमेली जाने लगीं। दुअन्नी बोली—"जाती कहां हो बेटी, बैठो।" साथ-ही उसने मोती से यह जानने की इच्छा की, कि इन बाबुओं में कौन, किस लड़की से विवाह करेंगे।

इस बात को ताड़ कर नरेन्द्र ने कहा— "यह मेरे मित्र रिपोर्टर-बाबू तुम्हारी चमेली से विवाह करेंगे दुअन्नी बाई, दूसरे प्रोफेसर साहब हैं, जो यहां आ न सके हैं।"

यह सुनकर दुअन्नीने आखिर अपनी रुकी बात को कह-ही दिया।

बोली—"बाबू कहीं ऐसा न हो, यह लड़कियां घर की रहें, न घाट की।"

नरेन्द्र बोला—"नहीं बाईजी! इसे केवल आप विशुद्ध विवाह जानें। साथ ही इन लड़कियों को समाज में बैठाने का उद्देश्य भी।"

दुअन्नी ने पूछा— "क्या आप इसी उद्देश्यपूर्त्ति के लिए यहां आते थे?"

नरेन्द्र इसे स्वीकार करके कहने लगा—"बाईजी, हमें आपसे भी सहायता लेनी है। जब तक आप जैसी वृद्धाओं का सहयोग नहीं मिलेगा, हमें इस कार्य की सफलता में सन्देह होगा।

दुअन्नी एकदम सभी बातों को भूल कर बोली—"मैं तैयार हूं, बाबू। फिर मोती से बोली—"मेरी सन्दूकची उठा ला मोती।" कहने लगी—"बाबू, तुम मुझे भले आदमी लगते हो।" सन्दूकची खोल कर कहती चली—"मैं चाहती थी, कुछ पैसा इन लड़कियों को दूं, पर न तो यह लेना ही चाहती हैं, और ना मुझे तुम्हारी बातें सुनकर देना ही उचित है। यह एक-एक हजार रुपये, दोनों लड़कियों की ओर से मैं आपको भेंट करती हूं।" कहके उसने दो हजार रुपये के नोट नरेन्द्र के सामने रख दिये।

नरेन्द्र बोला—"परन्तु आप अपनी सहायता का यहीं अन्त न कर दें, बाई जी। हमें आगे चलकर और भी सहायता लेनी होगी।"

दुअन्नी ने हर्ष के साथ कहा—"हां,हां, क्यों नहीं बाबू। इस मरते समय जो कहोगे, करने से पीछे नहीं रहूंगी।" तब लड़कियों से बोली—"तुम तैयार हो जाओ बेटी, बाबू तुम्हें लेने आये हैं।"

नरेन्द्र ने कहा—"आप भी चलेंगी ना?"

दुअन्नी फिर रुआसी हो आयी। बोली—"नहीं, बाबू! जिसके पंजे से यह लड़कियां निकल रही हैं, लोग उसे देख कर खुश नहीं होंगे। मैं रात-भर रोयी हूं। आर आज भी रोऊंगी। आज से इस घर का दूसरा इतिहास आरम्भ होता है, बाबू।"

"किन्तु क्या यह रोने की बात है बाईजी।"

"सोचती मैं भी यही हूं। किन्तु तुम हंसोगे, मेरा दिल बहुत छोटा

है बाबू। अब मैं कैसे दो लड़कियों में रहूंगी। यह भी तो एक दिन जाने की सोचेंगी।"

"यह आपका उपकार होगा बाईजी।"

इतने में हीरा और चमेली कल की पायी हुईं साड़ियां पहन कर आ खड़ी हुईं।

दुअन्नी ने पूछा—"और अपना सामान बांध लिया बेटी?"

हीरा बोली—"सामान कुछ नहीं लेना है अम्मा। जो लेना भी होगा, फिर आकर देखा जायगा। हम आयेंगी तो हैं ही।"

नरेन्द्र खड़ा होकर बोला—"अच्छा आज्ञा दो बाई, मैं फिर कभी आपके पास आऊंगा। इतने दिन के आने पर आज हमारे और आपके बीच का पर्दा हटा है।"

दुअन्नी इस पर मुसकरा दी। जो पता नहीं, वह मुसकराहट कैसी थी।

बाहर आकर नरेन्द्र ने मोती से पूछा—"तुम नहीं चलोगी मोती?"

मोती ने बहुत धीरे से कहा—"नहीं!"

जब लड़कियों के साथ आकर दुअन्नी जीने के पास से, अपने कमरे की तरफ चल दी, तो दरवाजे पर खड़ी होकर हीरा, मोती की छाती में सिर रख कर रो पड़ी। मोती ने अभी तक अपने आंसू रोक रखे थे। हीरा के सिर पर हाथ फेरती हुई बोली—"ससुराल रोकर नहीं जाया करते, हीरा।" अब कहती हुई वह स्वयं भी रो पड़ी।

हीरा बोली—"बहिन मोती, मैं तुमसे छूट रही हूं। अब अकेले में तुम रोओगी तो कौन मनायेगा!"

"ईश्वर मनायेगा हीरा!"...

चमेली ने मोती के पैर छू लिये। और अपने आये आंसुओं को आंचल में लेकर उसने मोती को छाती पर मुंह रख दिया। हीरा पास खड़ी हुई पन्ना से बोली—"मेरी पन्ना, मुझे भूलना मत। मेरी भली बहिन!" कह कर उसने पन्ना को छाती से लगा लिया।

इतने में मोती ने हीरा और चमेली के हाथ की अंगुली में एक-एक अंगूठी पहना दी। फिर पास खड़े नरेन्द्र से बोली—"यह छोटी-सी

पांच सौ रुपये की दक्षिणा लो, नरेन्द्रबाबू। मैं इन दोनों के विवाह पर, आपके भविष्य के कार्य क्रम के लिये भेंट देती हूं।"

"धन्यवाद!"—नरेन्द्र बोला—"मगर अभी अपने पास रखो मोती, मैं समय आने पर ले लूंगा।"

कह कर वह सब-के-सब मोती और पन्ना को छोड़ कर नीचे खड़ी मोटर में जा बैठे।

पन्ना के साथ, मोती छज्जे पर जा खड़ी हुई। सूर्य की आती हुई किरणें, इस प्रकार उनके मुंह पर आयीं, कि उनकी रोयी हुई आंखें, उन नयी किरणों में, ऐसी दीख पड़ीं, जैसे उन आंखों में अग्नी पैदा हो आई हो। लड़कियों को लेकर दूर जाती हुई मोटर, जब आंखों से ओझल हो गयी, तो मोती को स्पष्ट लगा, आज उससे, उसकी कोई प्यारी वस्तु दूर हो गयी है। हां, वह आज जीवन में निपट सूनी हो गई है!"'

लड़कियों के साथ आकर नरेन्द्र ने देखा, निमन्त्रित व्यक्ति आधे-से-अधिक आ चुके हैं। तब हवन आदि क्रियाओं के साथ वेद मन्त्र गान के बीच में प्रोफेसर और रिपोर्टर का वैवाहिक संस्कार सम्पन्न हुआ।

फिर नरेन्द्र ने खड़े होकर कहा—"यह विवाह सभी निमन्त्रित सज्जनों की कृपा से सम्पन्न हुआ है। साथ-ही हर्ष है, हमारी दो बहिनें, हमारे समाज में आ मिली हैं।"—वह कहने लगा—'जो समाज इन नारियों के प्रति उदासीन है, अथवा जिसके कोष में पाप शब्द के लिए कोई प्रायश्चित नहीं है, उसी समाज के अन्दर ये बहिनें आयी हैं। मैं अपने मित्र प्रोफेसर साहब, और रिपोर्टर महोदय को, इस मार्ग में प्रवृत्त होने के लिए बधाई देता हूं। आपने समाज के सामने एक आदर्श रखा है। जिस पर देश के प्रत्येक युवक को गम्भीरता से विचार करना है। श्रीगणेश हो गया है। केवल आगे के कार्य को सुचारू रूप देना है। आप जानें, इन बहिनों में से भी हमें सीता, सावित्री, और चित्तौड़ की पद्मनी उपलब्ध हो सकती हैं। किन्तु ये पाप के गर्त में जा पड़ी हैं। और यह पाप, जो निश्चय-ही पुरुष-जाति का है, बरबस इन

नारियों को भोगना पड़ रहा है। आज, जबकि प्रत्येक प्राणी, आगे बढ़ने का अरमान रखता है,—यह ईश्वरीय सत्ता, और सृष्टि की पवित्र वेदी पर घोर पाप किया जा रहा है कि हम केवल पुरुषत्व के बल पर, इन नारियों के प्रति अत्याचार करें!" ...

"भारत के प्रत्येक युवक को इस सकल्प में योग देने की आवश्यकता है। आपको यह सुनकर हर्ष होगा, कि जिस दुअन्नीबाई से इन दोनों बहिनों का सम्बन्ध था, और जो इस नगर की अपने काम में प्रमुख नारी है, हमारे कार्य-क्रम का सुनकर दो हजार रुपये प्रदान किये हैं। (तालियां) केवल इतना-ही नहीं, दुअन्नीबाई ने हमें भविष्य के लिए और सहायता देने का वचन दिया है। इसके अतिरिक्त, उसी की एक लड़की मोती-बाई ने पांच सौ रुपए की सहायता दी है। इस प्रकार हमें आशा है, कार्य करने के लिये आर्थिक सहायता की रुकावट नहीं आ पायेगी। किन्तु मुख्य प्रश्न, जनता पर निर्भर है। मैं आशा करता हूं उपस्थित सज्जन, भविष्य के कार्य में अवश्य योग देने की कृपा करेंगे, जो बहुत शीघ्र-ही जनता के सामने सुचारू रूप में पेश किया जायगा।"

नरेन्द्र के बैठने पर, प्रोफेसर ने कहा—" यह साहस, और इस भार को उठाने की क्षमता मैं अपने मित्र नरेन्द्रजी से ही ले पाया हूं। मैं आप सज्जनों के समक्ष प्रतिज्ञा करता हूं, अपने पूरे दल के साथ, अपने इस गृहस्थ-जीवन को निभाऊंगा। हम पति-पत्नी, उस कार्य में पूरा योग देंगे, जो अन्य बाजार की नारियों के सुधार के लिये किया जायगा। अपने इस विवाह पर, मैं उस शुभ-कार्य के लिये, यह एक हजार रुपये नरेन्द्र जी को भेंट करता हूं।"

रिपोर्टर ने उठकर मुसकराते हुये कहा—"जो श्री० प्रोफेसर साहब ने बातें कही हैं, वही मेरी ओर से भी लागू हैं। इस अवसर पर एक हजार की भेंट मेरी ओर से भी, उस पुन्य कार्य के चरणों में अर्पित है।"

इसके बाद उपस्थित व्यक्तियों में लड्डू बांटे गये। जब सब लोग जाने लगे, तो एक महाशय नरेन्द्र के पास आकर बोले— "मुझे इस विषय में आपसे कुछ बातें करनी हैं, आप कोई समय देंगे?"

नरेन्द्र ने कहा--"आज छः बजे मेरे मकान पर पधारिये। यहीं पास-ही १७ नं० का मकान है।"

"धन्यवाद।"--यह कमला थी।

जब सभी व्यक्ति समाज से चले गये तो श्याम, हीरा और चमेली के पास जाकर बोला—"मैं दोनों भाभियों को प्रणाम करता हूं।"

श्याम के इस हँसोड़पन को देखकर नरेन्द्र बोला—"और इन दोनों को भी तो करो।" उसका लक्ष रिपोर्टर और प्रोफेसर की ओर था।

श्याम—"नहीं भाई, रोटियां तो भाभी खिलायेंगी ना।"

हीरा और चमेली, श्याम की इन बातों को सुन कर केवल मुसकरा-भर दीं।--जब कि उनके हृदय से जैसे जीवन में पहिली बार जीवन का गहरा उल्लास आंखों की राह बह पड़ना चाहता था। उस क्षण वह कितनी प्रसन्न थीं, कितनी सुखी थीं।

# अठारहवां-परिच्छेद

एक किताब को व्यर्थ में पढ़ने की चेष्टा करता हुआ नरेन्द्र कुर्सी से उठकर कमरे से बाहर आया। यह चाहता था, कोई मित्र आये। इतने में श्याम सामने से बेंत हिलाता हुआ आता दिखाई दिया। उसके पास आते-आते नरेन्द्र ने कहा—"मैं अभी तुम्हारे घर जा रहा था, श्याम।"

श्याम बोला—"क्या मेरा भी विवाह-मंडप रचाना है?"

नरेन्द्र—"यदि स्वीकार करो तो।"

"वो मेरी स्वीकृति पर ही।—यों कहो।"

तब नरेन्द्र कमरे में जाकर कुर्सी पर बैठते हुए बोला—"तुमने कल प्रातः के उस बाबू को देखा था श्याम, जिसे मैंने मिलने का समय दिया था।"

"हां, तो फिर, आया था वह? था तो भला-सा आदमी।"

नरेन्द्र—"वह अभी-अभी गया है। खूब बातें हुईं। जान पड़ा वह भी इस सुधार का पक्षपाती है।"

तब श्याम हंसकर जोर से बोला—"सच! अरे, किसी से आंखें

खड़ी होंगी। कहना, एक हजार दिलवाओ, विवाह हो जायेगा।"

"नहीं श्याम, उसकी बातों से ऐसा नहीं मालूम पड़ा। किसी शिक्षित-वर्ग का युवक है। मुझे तो बहुत भला नजर आया।"

श्याम—"ठीक तो है। उससे कहो, तुम विवाह के लिये तैयार हो जाओ, उसके सिर भी एक लड़की मढ़ दी जायेगी।"

"तुम बड़े गुस्ताख हो श्याम! लड़कियां क्या मुफ्त में बट रही हैं, जो मंढ दी जायेंगी।"

"तो भाई साहब, आखिर इस सुधार का कोई किनारा भी होगा। जब उन्हें कोठों से हटाओगे, तो किसी घर में तो उनके रहने की जगह करोगे?"

नरेन्द्र—"यह कोई आवश्यक प्रश्न नहीं है। इनमें बहुत-सी ऐसी भी मिलेंगी, जो इस ओर से ऊबता उठी हैं। मगर उन्हें पेट के लिये यह-सब करना पड़ रहा है।"

श्याम छूटते बोला—"बहुत कम। भोग और वासना का जीवन इतना सुगम नहीं है, जो आसानी से मिटा दिया जाय। अथवा उसे भुला दिया जाय।"

"तुम्हारा मतलब है, उनकी तृष्णा रहती ही है,—मिट नहीं जाती।"

"निसन्देह! केवल इतना ही नहीं, यदि उनके बीच में कोई रुकावट आ जाती है, तो वह ऐसे साधन उपलब्ध करने की चेष्टा करने लगती हैं, जिन्हें समाज सभ्य-गृहस्थ की नारियों के लिये सर्वथा वर्जित समझता है।"

नरेन्द्र बोला—"इस बात के बहुत अन्श से मैं सहमत हूं, श्याम! मगर मुझे फिर यही कहना है, इनमें अधिक संख्या उन्हीं की है, जो मजबूरी से अपना प्रदर्शन करती हैं! वास्तव में उनकी आत्मा इन उपचारों को ग्रहण नहीं करती।"

"हो,—श्याम बोला—पर, मैं इस से सहमत नहीं।"

"लेकिन अब क्या करना है, इस विषय पर आओ। हमें तो सभी को समूल नष्ट करना होगा।"

"कल तुमने सब लोगों को बुलाया तो है, तभी निश्चय होगा।

फिर पूछने लगा—"तुम आज मोती के यहां नहीं जाओगे ?"

मोती का नाम पाकर नरेन्द्र बोला...—"आओ चलें। वह अकेली-सी बहुत दुःखी होगी। देखें, आज गाना होता है, या नहीं।"

❀ ❀ ❀

दूसरे दिन सुबह को जब नरेन्द्र ने अखबार लिया, तो ऊपर के पृष्ठ पर ही एक समाचार पढ़ा। जो मोटे अक्षरों में छपा था—"एक नकाबपोश द्वारा पिस्तौल दिखाकर बीस हजार रुपये लूट लिये गए।"

जरा से पिस्तौल के सहारे, किसी ने बीस हजार की रकम कमा ली, नरेन्द्र के दिमाग ने इसे एक बार फिर दोहराया। दिन के तीन बजे के लगभग वह अपने कमरे में बैठा हुआ पहल-पहल मोती को एक पत्र लिख रहा था। तभी नौकर ने एक लम्बा लिफाफा लाकर दिया। नरेन्द्र ने लिफाफा खोल कर देखा, तो छोटे-से परचे के अतिरिक्त सौ-सौ की संख्या में बीस हजार के नोट निकले।

आश्चर्य, और जिज्ञासा के साथ उसने साथ आये पर्चे को पढ़ा। जिसमें लिखा था—

"...मुझे आपका प्रोग्राम सुनकर हर्ष और सुख हुआ। विश्वास है, आपके दिल में जो एक पवित्र भावना उठी है, उससे यह बेचारी नारियां अवश्य अपना सुधार कर सकेंगी। मैं कल आपसे मिला था, इच्छा थी, आज फिर मिलूं, किन्तु मैं इस निश्चय पर नहीं आ पाया हूं।

"आप इन रुपयों को देखकर चौंकेंगे। जिसपर यह जानकर भी आश्चर्य करेंगे, यह कल ही कमाये गये हैं। मैं समझता हूं, यह रुपये जो बहुत उपयुक्त स्थान से कमाये गये हैं, इन नारियों के हित में हाथ बंटायेंगे...।

"एक बात और सुन लें। मैं आदमी रूप में एक साधारण स्त्री रूप हूं। आपको कमला की याद है ना। एक बार आपके साथ जेल गई थी। वही पूर्व परिचित कमला, मैं आपके सामने हूं। संभवतः मैं कल ही फिर अपने को पुलिस के हाथ सौंप दूंगी, क्योंकि परिस्थितियां मेरे विरुद्ध हैं।" आपकी—'कमला।'

नरेन्द्र ने उठते और बैठते मन के साथ नोटों को रख दिया। तभी प्रोफेसर और श्यामबाबू कमरे में आये।

श्याम ने बैठते हुए कहा—"नरेन्द्रबाबू शहर में इन दोनों के विवाहों पर बड़ी हलचल है। आज सुबह ही-सुबह पिताजी मेरे कमरे में आकर पूछने लगे, क्या तुम्हारा भी इस काम में हाथ था, श्याम? मैंने सोचा तो, कह दूं यह गलत है, लेकिन मुंह से निकल-ही-पड़ा, जी हां, था तो। यह सुन कर वह बहुत नाराज हुए। सुबह से बोले भी नहीं हैं। इधर इन दोनों के पास बधाइयां आ रही हैं, और खुले-मुंह फटकार भी पड़ रही हैं।"

प्रोफेसर ने कहा—"इस सनातनी-पत्र को तो देखो, कैसी सख्त टिप्पणी लिखी है। कहो तो बेइज्जती का दावा कर दूं?"

इसी समय रिपोर्टर कमरे में आया। हाथ से अखबार को मेज पर रख कर बोला—"लीजिये, आपकी दुअन्नीबाई का भी फोटो छप गया।"—बैठ कर कहने लगा—"एक बहुत ताजी खबर है। कल म्युनिसिपैलिटी में रायसाहब विक्रमसिंह इस बात का एक प्रस्ताव रखेंगे कि वेश्यायें शहर के बाहर बसायी जायें।"

यह सुन कर नरेन्द्र ने कहा—"रिपोर्टर, अब तुम्हें आगे बढ़ने के लिये रास्ता मिलेगा। हमारा काम है, अधिक-से-अधिक मेम्बरों को को इस प्रस्ताव के विरुद्ध तैयार करें।"

श्याम ने कहा—"यह किसलिये? क्या इससे उन्हें यह पता नहीं लगेगा कि यदि उन्हें समाज में, अपने लिए कोई स्थान लेना है, तो इस पेशे को छोड़ कर ही मिल सकेगा।"

यह सुन कर नरेन्द्र बोला—"उन्हें तुम्हारे समाज में स्थान नहीं लेना है, श्यामबाबू। स्थान दिया जायगा। उनसे विनय की जायेगी। क्या तुम समझते हो, ये वेश्याएं अपने पेशे को छोड़ ही देना चाहती हैं। मुंह से लगा हुआ खून आसानी से नहीं मिट जाया करता। इस प्रकार तिरस्कृत होकर उनकी आत्मा और उत्तेजित हो उठेगी। समाज के प्रति उनके हृदयमें भरा हुआ द्वेष, और निखर जायगा।

हमें तो उन्हें यह बता देना होगा कि जो समाज उनसे घृणा करता है, वह और कुछ नहीं है, उन्हीं के यहां आने वाला, कुछ धनपतियों का एक गिरोह है, जो उन्हें चूस कर फिर नष्ट कर देना चाहता है। देश के हृदय में उनके प्रति कोई दुर्भावना नहीं है। वे देश की बहिनें हैं। जिन्हें वह अपनाने के लिये अपनी बांह खोले बैठा है।"

"परन्तु समाज और रुपये की इतनी ममता क्यों है, नरेन्द्रबाबू ?" श्याम ने पूछा।

नरेन्द्र लाल होकर बोला—"समाज, पूंजीपतियों का एक खिलौना है। जिसे वह, जिधर चाहे मोड सकता है, और तोड़ सकता है। समाज पूंजीपति का गुलाम है! वह सदा उसका स्वार्थ पूरा करता है। ये नारियां इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।"

प्रोफेसर ने कहा—"जो आबाद करते हैं, और प्यार करते हैं, ये नारियां उन्हीं द्वारा ठुकरायी जाती हैं। हमारे समाज में मिले पूंजीवाद की यही नीति है!"......

## उन्नीसवां-परिच्छेद

मोती ने जिन अरमानों के साथ, हीरा और चमेली का विवाह कराने में प्रयत्न किया, अब अपने को निपट अकेली देखकर, उसकी दशा असहनीय हो उठी। जब एक दिन नरेन्द्र उसके पास आया, तो उसने स्पष्ट और खुले शब्दों में पूछा—"क्या अब मैं आपका निश्चय जान सकती हूं नरेन्द्रबाबू ?"

नरेन्द्र ने अज्ञान के भाव में पूछा—"किस बात में ?"

"विवाह के लिए।"—मोती ने कहा।

विवाह की बात आज उसने पहले-पहल मोती से सुनी। वह बोला—"तुमने आज स्पष्ट रूप से बात करने की प्रेरणा दी है मोती। मैं पूछूं, क्या वास्तव में तुम मेरे जीवन की संगनी बनना चाहती हो ? यह तुम जानो मोती, विवाह केवल विलास और इन्द्रिय-तृप्ति का विधान नहीं है। विवाह एक सामाजिक, और अध्यात्मिक-जीवन है। जो पुरुष और स्त्रीमय बन कर, विश्व-कल्याण के लिये, इस

संसार-क्षेत्र में अवतरित होता है।—मैं चाहता हूं, तुम यह समझ लो कि तुम जिस विवाह के लिए तैयार हो, और जिसके लिए मैं भी तुम्हारी ओर बढ़ रहा हूं, वह कितना महान है, कितना आदर्श-मय है। बोलो, तुम इसे समझने के लिए तैयार हो, मोती?...हमारा वैवाहिक-जगत, सत्यं शिवम् की आराधना में प्रवृत्त होगा, क्या उस सुख को तुम निश्चय-ही, भोगने के लिए तैयार हो? हमारा विश्व, इन नारियों के लिए अपने को अर्पित कर देगा, ऐसे अर्पण के लिए, तुम्हारे पास कितना, क्या है, तुम्हें उसे जान लेना चाहिए।"—तब नरेन्द्र मोती के हाथ को लेता हुआ कहने लगा—"मैं तुम्हारा हूं, मोती। तुम्हें इस जीवन पर अधिकार है। किन्तु विवाह के लिए, मेरे पास कोई उत्साह नहीं है। मुझे इसमें कोई जीवन नहीं देख पड़ता। मोती, सेवक के लिए, गृहस्थ-सुख शोभा नहीं दिया करता। पर, यह भी न समझ लो, मैं विवाह के प्रति सर्वथा उदासीन ही हूं। मैं तुम्हें टाल भी नहीं रहा। तुम जानो, मेरी एकान्त इच्छा है, मैं तुम्हें अपने सामने बैठा कर यह देखूं, वह नियति कैसी है, जिसका इतना विस्तृत साम्राज्य है। और तुम जो एक नारी-रूप में मेरे सामने हो, जिसके हृदय में मातृत्व है, स्नेह है, और भक्ति है, ऐसी नारी के चरणों में झुक कर मैं सच्चा जीवन देखना पसन्द करता हूं, मात।"

मोती मौन होकर नरेन्द्र की बातों में लगी थी।

वह आगे बोला—"मैंने तुमसे कहा था, वह पकड़ी हुई बेगम जेल से भाग गई है। वही, तुम्हारी हीरा और चमेली के विवाह के दिन पुरुष वेष में मुझसे समाज में मिली थी। फिर बाद में वह मेरे घर आयी। इसी वेश्या-सुधार पर मेरी उससे बातें हुईं। किन्तु जब उसने यह जाना, हमारा उद्देश्य पवित्र है, और हम कम-से-कम बीस-पच्चीस हजार रुपया पाकर, सुधार का सुन्दर रूप बना सकते हैं, तो उसके दूसरे-ही दिन, उसने बीस हजार रुपये मेरे पास भेज दिये। वह उसने डाका डाल कर प्राप्त किये थे। इसके बाद, उसने फिर अपने को पुलिस के हाथों सौंप दिया। कल उसे चौदह साल का कारावास मिला

है।"-- वह कहने लगा--"अब वह चौदह साल बाद जेल से आयेगी मोती! उसका मुझसे आते ही प्रश्न होगा, बोलो, तुमने मेरे रुपयों का क्या सदुपयोग किया? वे क्या हुए? और तुम्हारे विचारों का क्या हुआ? वह मेरे ऊपर अपना सब-कुछ सौंप कर चौदह साल की यात्रा पर गई है, मोती! उसका आवाहन मेरे सामने है। और वे बीस हजार रुपये। भला मैं उन सबको हजम करके शान्ति पा सकूंगा? जो संकल्प मैंने उसके सामने रखा था, उसे मैं लौटा किस प्रकार लूं! मुझे वह पूरा करना-ही होगा, मोती। इस पावन-क्षेत्र में, मैं अपने को होम कर दूंगा!..."

नरेन्द्र फिर बोला—"मैं कह रहा था मोती, मैं निर्बल भी अधिक हूं। विवाह करके, अगर मैं अपने को भूल गया, तब विवाह का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा। तुम सच जानो, मैं जिस प्रेरणा से प्रेरित होकर, तुमसे विवाह करने के लिये आगे आता हूं, कठोर, और भीषण संकल्प, मुझे बोध देता है कि मैं अपने को फिर देख लूं। मैं स्वयं विचारता हूं, मैं जो तुमसे विवाह करने के लिए प्रस्तुत हूं तुम्हारे चरणों में झुक किस प्रकार जाऊंगा!..."

अन्त में मोती सभी बातों से कुछ न पाकर, ऊबती हुई बोली--"नरेन्द्रबाबू, मैं कुछ नहीं समझ पा रही हूं।" कहते उसकी आंखें भर आईं।

नरेन्द्र बोला—"ना, मोती! तुम कुछ तो अवश्य समझ लो। इसमें मेरा अधिक कल्याण है।--विवाह मंडप के नीचे नहीं हुआ करता मोती! तुम जानो, हम-दोनों विवाहित हैं।"

"मैं·······मैं इस बुढ़िया से कह दूंगी, मुझे एक दिन यहां से चला जाना होगा।।"

नरेन्द्र, उसकी हथेली पर, अपना गरम हाथ फेरता हुआ बोला--"तुम्हें अधिकार है, मोती।"

## बीसवां-परिच्छेद

नरेन्द्र के जाने पर मोती बहुत देर तक उसी प्रकार बैठी रही।

उसकी आँखें अब तक भरी थीं। आश्चर्य, चतुर और लोगों के दिलों को भांपने वाली मोती, आज रो पड़ी। उसका हृदय जब नरेन्द्र की ओर झुका, तो उसने अपने से प्रश्न किया—"अगर नरेन्द्रबाबू ने न अपनायी तो ?···इस न अपनाने की बात का एक घूंट भी उसके लिए असह्य हो गया। अभी-अभी, जो नरेन्द्रबाबू, उसके सामने त्याग का रूप रख कर, उसे आदेश दे गया है, वह एक नर-पिण्ड की तरह उस पर झुकती हुई बोली—"तू इस झन्झट को मोल ही क्यों लेती है, मोती !···"

किन्तु इतना कहने से उसे सन्तोष नहीं मिल गया। वह कीचड़ से निकलने की चेष्टा के साथ, और उसमें फंस गयी।

और जैसे-ही, वह कमरे की वस्तुओं को इधर-उधर करने लगी, तो अपनी एक सोने की चूड़ी को उठा कर फैंकती हुई बोली—"मैं तो इस जिन्दगी से ऊब उठी हूं। आखिर, तू ही क्यों विवाह पर तुली है मोती !···"

जब वह कमरे के बाहर गई तो सामने खड़ी दुअली पूछ उठी—"अरी मुंह कैसे चढ़ा है, मोती ?"

तब मोती की आंखें रो पड़ीं। छूटते बोली—"मैं क्या कहूं अम्मा, मैं तो इस जिन्दगी से दुःखी हो रही हूं— न जीते-ही बनता है, न मरते ही !···"

दुअली बोली—"तो रोती क्यों है, बेटी !"

मोती से कोई उत्तर न पाकर, दुअली फिर कहने लगी—"मोती, तुमने इस घर आकर कमाई जरूर की, किन्तु, दुनिया को नहीं समझ पायी हो। बुरा न मानना बेटी, तुम्हारी तरह कभी मैं भी युवा थी। चल आ, मैं तुझे आज अपनी बात दिखाऊंगी।" कह कर वह मोती को लेकर अपने कमरे में गयी। अपने बक्स में रखे कागजों का एक बन्डल निकाल कर बोली—"इसमें से कोई भी कागज पढ़ो मोती, तुम्हें वह कागज बतायेगा, आदमी किस तरह अपनी इच्छा-तृप्ति के लिए कमसिन और नयी उम्र की लड़कियों के जीवन चा. लेता

चाहता है।" बण्डल के कागज फैला कर 'कहने लगी—"यह बड़े सुरक्षित पत्र हैं, मोती। मैं इन्हें जब कभी देखती हूं, तो याद करती हूं, मैं भी कभी तुम-सी नारी थी। —रूप और यौवन से भरी हुई नारी!" कहते, दुअन्नी गम्भीर हो गई। बोली—"और मैं इन्हें इसलिये भी तो देखती हूं मोती, मरने तक यह न भूल जाऊं, मैं नारी हूं, जीवन और ज्योति की साक्षात् नारी! किन्तु, मैं ऐसी नारी से पतित हो चुकी हूं। और मेरा वह जाति-गत जीवन, जो अलभ्य और अमोल बनकर मेरे साथ कभी आया था, वह मेरे बे-जाने-ही, इस मनुष्य-शिला पर पटक दिया गया। मैं कह रही हूं मेरा वह जीवन खण्ड-खण्ड हो गया है। मैं केवल एक खोखली नारी रह गयी हूं।—वह भी एक पुरुष द्वारा! मैंने जीवन में इसे केवल एक पुरुष से-ही जान लिया कि मैं पुरुष के भोग और विलास की नारी हूं। जिसे अव्यर्थ और अनादि समझ कर, उसके सामने नारी को झुक-ही जाना है!"·········

इस बीच में मोती ने दो-तीन पत्र पढ़ लिये थे। पर ध्यान उसका अम्मा की बात में था। पत्रों में प्रेम का पाठ था। जो युवा दुअन्नी को उसके प्रेमी द्वारा दिया गया था। जब उसने पत्र पढ़ने बन्द कर दिये तो दुअन्नी फिर बोली—"मोती, अब मैं केवल नारी का शेष पिंजर हूं। भला, तू ही देख, यह मनुष्य इतना भी नहीं लजाता, कि वह जिस द्वारा मनुष्य बना है, उसी के प्रति उसमें दुर्भावनायें हैं। यह बाजार मनुष्यों की प्रेरणा का फल है। जो उनकी दैहिक वासना को लेने के लिये बसी हुई हैं। थोड़ी देर के बाद दुअन्नी झटके-से बोली—"आह! यह कैसी मनुष्य की महानता है कि जो नारी उसकी माँ है, जो उसे नौ मास अपने गर्भ में रखती है, मेरी निरी बच्ची, ऐसी जाति के पुरुष, इस नारि-जाति में से अपनी भूख का पेट भरते हैं!······ये आदमी कहते हैं, हमने संसार को गंदला कर दिया है। पर क्या सच, हम ही ने गंदला किया है?"—दुअन्नी कहते रुक गई। और उसमें एक गहरी भावना आ गयी। जो इस पाली लड़की के

आगे, उसे नहीं कह देनी होगी। भला वह कैसे कहे—"तू जिस सौदे को प्रेम कहती है मोती, वह न सौदा है, न प्रेम-ही, एक क्षणिक-व्यापार है, जो मात्र होने के कुछ बाद ही मिट जायेगा!......

वह कहने लगी—"पर मनुष्यों को-ही क्यों दोष दिया जाय मोती! हम कोठों पर बैठी हुई नारियां भी तो, अपने रूप की पिटारी को मनुष्यों के सामने पेश करती हैं। और कहती हैं--"ऐ, बाबू लोगो, ऐ, सेठ लोगो, देखो हमारी पिटारियों में तुम्हारे लिये कैसा अच्छा रूप है। खरीदो, मोल करो, यह तुम्हारे ही लिये, सजा कर रखा गया है।"—कहते, उसने सामने के आकाश को देखा। फिर तुम भी तो सोचो, बाजार की चाट का चाटा हुआ पत्ता फेंका-ही जाता है, साथ में नहीं लिया जाता। भला हम आदमी को कितना पतित और नरा-धम बना डालती हैं! मेरे ये सफेद बाल गवाह हैं मोती, इनके रूप को देख कर, जो धनिक निर्धन हो गया, मेरे पास उसके लिये जरा भी सहानुभूति नहीं थी। जिसे भिखमंगा बना दिया, मेरा अभिमान उसे देख भी नहीं लेना चाहता था। उस व्यक्ति की दशा, जो गरीब और निरीह बनकर, द्वार से गुजरता, मैं उसी के धन से धनिक बनी हुई, उसकी दशा का उपहास करती। उसे देखना भी नहीं चाहती। जैसे मैं उसे जानती-ही नहीं। कितना अहमन्य और कृतघ्न दृश्य था वह! अब वह बातें मेरे लिये स्वप्नवत् हो गई हैं मोती! अब मैं उन्हें याद करके कांप उठती हूं। सोचती हूं ईश्वर ने मुझे ऐसी नारी बना-ही क्यों दी।—पतित और नराधम नारी!"......

मोती ने पूछा—"अम्मा, तुम्हें उन आदमियों पर कभी भी रहम नहीं आया?"

दुअन्नी होठों पर विषाद की रेखा खेंच कर बोली—"इस पेशे से दया और ममता का सम्बन्ध नहीं होता, मोती! यहां, आदमियों से प्रेम और सहानुभूति नहीं की जा सकती। तभी तो कहती हूं, ये नारियां जो जोंक बन कर, आदमियों का धन-रूपी खून पीने की लालसा से उनसे चिपकने के लिए तैयार होती हैं, ये देश की महान

व्याधियां हैं मोती ! मैं मनुष्य को तो कोसती हूं, पर मुझे पहले अपने को ही देखना चाहिये। क्या, हम नारियां कभी मा बनेंगी !—नर्क में सड़ती हुई, दुर्गन्ध युक्त नारियां ! पुरुष देवता है, हम उसके देवत्व को कैसे भुलायें बेटी !"...

मोती ने अभिमान से कहा—"सभी ऐसी स्त्रियां नहीं हैं। इस बाजार में भी महान्-हृदय मिलेंगे। जो अन्धा होकर चलेगा, वह गिरेगा भी, और मरेगा भी। रास्ते की खुदी हुई खाई में सभी तो नहीं गिर पड़ते अम्मा ?"

अब दुआबी इस विषय को यहीं बन्द कर चाहती थी। बोली—"खैर, जो है, ठीक है बेटी। कुछ और बाकी दिन हैं, इन्हें भी काट कर चल दूंगी। अब तुम्हारी बारी है, जो करो सोच-समझ कर करो। पुरुष देवता तो है, पर नर-पशु भी कम नहीं है।"

वहां से दुआबी छज्जे की ओर चली गयी। मोती अपने कमरे में जाती हुई बोली—"ओह, इस बुढ़िया के हृदय में भी प्रलय का कैसा भयानक गढ़ है।"

इतने में नौकर खाने को कहने के लिए मोती के पास आया।

मोती कोमल स्वर में बोली—"तुझे खाने की ही फिक्र रहती है, भीखू। आ, एक बात बता, अब तेरी बहुत दिन से कोई चिट्ठी नहीं आई।—लड़की तो अच्छी है न ?"

भीखू मोती की यह बात सुन कर बोला—"अब लड़की का व्याह करना है बाई। इस महीने के आखीर में अम्मा से छुट्टी लूंगा।"

मोती व्याह की बात सुन कर बोली—"तो व्याह में खूब खर्च करेगा, भीखू ?"

भीखू बोला—"खर्च कहां से करूंगा बाई, पन्द्रह रुपये मिलते हैं, जिसमें पूरे गृहस्थ का खर्च ! किसी तरह लड़की के हाथ पीले करने हैं।"

मोती इस सरल और साफ बात को सुन कर, भीखू के सफेद बालों को देखती हुई बोली—"अच्छा है भीखू ! लड़का तो देख लिया है ना ? ऐसे-से करियो, जो लड़की को सुखी रख सके।"

जब भीखू कमरे से चला गया, तो मोती सोचने लगी—"मुझसे तो इस भीख की लड़की-ही सुखी होगी। वह अपने जीवन में एक पति के मर्यादित प्रेम को तो भोग सकेगी। लेकिन, इस प्रेम की बात के आते-ही, मोती के हृदय में फिर ज्वार उठ आया। वह चीख कर बोली "कैसा प्रेम!"... मैं इस प्रेम से अपना कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहती। वासना की भट्टी में अपने को झोंकने के नाम को तू प्रेम कहती है मोती।" कहते उसकी आँखें भर आयीं। जिन्हें लेकर, वह मौन होती हुई पलंग पर गिर गयी।

## इक्कीसवां-परिच्छेद

इधर बहुत दिन से मोती और नरेन्द्र की भेंट नहीं हो सकी थी। म्युनिसिपैलिटी का प्रस्ताव पास हो गया। किन्तु, इस प्रस्ताव के बाद जब सभी वेश्याओं को नोटिस दिये गये, तो जो जायदाद वाली वेश्यायें थीं, उन्होंने अदालत में इसके लिये आवाज उठाई। सुधारवादियों ने इसमें दिलचस्पी ली। जिसमें नरेन्द्र प्रमुख था। जब अदालत में फैसला सुनाने का दिन आया, तो उसी दिन नरेन्द्र ने श्याम द्वारा यह सुना कि उसके प्रति मोतीबाई की भावनाएँ बदल गयी हैं। क्योंकि मोती विवाह के लिए उत्सुक है, और वह खिंच रहा है। श्याम ने स्पष्ट रूप से कहा, वह तुम्हें कायर समझने लगी है, नरेन्द्रबाबू। नरेन्द्र ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया था। जब वह फैसले के समय अदालत में पहुंचा तो अन्य वेश्याओं में दुलारीबाई के साथ मोती भी आयी थी। अदालत में नरेन्द्र और मोती ने एक-दूसरे को देखा, नमस्ते हुई और दोनों अपनी-अपनी जगह खड़े रहे।

जब अदालत ने वेश्याओं के पक्ष में फैसला दिया, और सगर्व सब वेश्यायें जाने लगीं, तो नरेन्द्र को लगा जैसे मोती किसी की प्रतीक्षा में है। तब वह मोती के पास पहुँच कर बोला—"मोतीबाई।"

आवाज सुन कर मोती ने नरेन्द्र की ओर देखा।

नरेन्द्र ने कहा—"यह दुनिया के लोग जहां शीघ्र ही, एक-दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, मैं देखता हूं, इन्हें दूर होते भी देर नहीं

लगती । सुना है, मेरी अकर्मण्यता पर तुम्हें कुछ असन्तोष है । क्यों मोतीबाई ?"

मोती ने नरेन्द्र की बात का उत्तर नहीं दिया । वह पैर के जूते से जमीन खोदने लगी । जैसे वह नरेन्द्र के सामने, न कुछ कह कर लजा रही हो ।

तब नरेन्द्र ने फिर कहा—"भले-ही, मैं तुम्हारे शब्दों में कायर-पुरुष हूं, किन्तु, किसी की कायरता से मुंह मोड़ लेना, क्या अच्छी बात है ? कायर की कायरता मिटानी तो होगी-ही, मोतीबाई !"

एकाएक मोती ने ऊपर को मुंह उठा कर कहा—"आप क्या कह रहे हैं, नरेन्द्रबाबू ! मेरे पास ऐसी कौनसी बात है, जिसमें आपको कायर कहा गया है।"

"ना, मोती ! वह अभी बात नहीं बन गयी है । केवल छोटी-सी भावना का रूप है । ऐसी भावना बुरी भी तो नहीं है, मैं तो चाहता हूं, कोई मिले तो, जो मुझे कायर, और कर्महीन कह कर उद्वेलित करे । ऐसे कान पकड़ने वाले प्राणी का मैं सर्वदा ऋणी रहूंगा मोती ।"

इतने में दुअन्नी ने मोती को तांगे में बैठने के लिए बुलाया । जब वह चलने लगी, तो बोली—"आप किसी दिन घर आयें, बाबू ।"

नरेन्द्र स्वीकृति में सिर हिला कर उस ओर चल दिया जहां पर उसी की प्रतीक्षा में खड़े श्याम, रिपोर्टर और प्रोफेसर एक वकील से बात कर रहे थे । उसके पास जाते-ही, श्याम ने चलती बात रोक कर नरेन्द्र से कहा—"वकील साहब भी हमारे मत में आ मिले हैं । आप भी आज मीटिंग में पधारेंगे । साथ-ही, एक प्रस्ताव रखेंगे ।"

नरेन्द्रने पूछा—"आपके प्रस्ताव का क्या रूप है, वकील साहब ?"

वकील साहब ने कहा—"जो युवक इस कार्य में प्रवृत्त हों, उनके सामने यह प्रतीज्ञा हो, कि यदि वे विवाहित हैं, तो इस बात की शुद्ध मन से चेष्टा करें कि उनकी जाति में वेश्या लड़कियों का प्रवेश हो । यदि वे अविवाहित हैं, तो स्वयं किसी उपयुक्त लड़की से विवाह करें ।"

प्रोफेसर ने पूछा—"वकील साहब, इस बात को एकदम रख देने से लोगों में असन्तोष तो नहीं फैलेगा?"

वकील महाशय बोले—"प्रोफेसर साहब, तर्क और असन्तोष के बाद ही स्थायित्व मिलता है। आप क्यों ऐसा चाहते हैं, आप जो करेंगे, उसके लिए असन्तोष न हो, तर्क न उठे। प्रतिपक्षी के यही शस्त्र, आपकी सत्यता का प्रचार करेंगे। झुका हुआ शत्रु, मित्र से अधिक लाभदायक बनता है। यह बात नैतिक-जीवन से सम्बन्ध रखती है। सामाजिकता इतनी खतरनाक वस्तु नहीं है। किन्तु नैतिकता को धोखा देकर मनुष्य का ह्रास हो जाता है। जिसके अर्थ होते हैं, सामाजिक-जीवन पहले-ही मिट गया। क्योंकि विचारात्मक बात के बाद-ही, हमारा ह्रास शुरू होता है। समाज पर पाप का कोई दायित्व नहीं है। क्योंकि वह स्वयं पराधीन है। जब केवल सत्य-ही मुख्य है, तो हम क्यों समाज की ओर देखें। पेड़ उखाड़ने के लिए जड़-ही खोदनी होगी। टहनी तोड़ने से स्थूल पेड़ नहीं उखड़ जायगा। यही इन नारियों के सुधार का रूप है। जब तक हमारा विवेक क्रियात्मक नहीं बन पायेगा, तब तक ऐसे सुधार के कोई अर्थ नहीं हो सकते। काम, अर्थ और मोक्ष को पाने के लिए, मनुष्य जिस सत्य को पकड़ कर धर्म की ओर जाता है, उसका समाज भले ही, अनुमति न दे, किन्तु वह अपने विवेक के तख्ते पर खड़ा होकर निडर बन जाता है, और धर्म-प्राप्ति के उपाय सोचने लगता है। आपके सामने आंधी की तरह बाधायें आयेंगी, किन्तु सत्य का महान् अस्त्र सब पर विजय प्राप्त कर लेगा। आपको अपने लक्ष्य पर डटे रहना चाहिए।"

नरेन्द्र बोला—"मैं आपकी बातों से पूरा सहमत हूं। आज अवश्य दर्शन दीजिये।"

जब ये चारों वकील साहब से विदा लेकर चले, तो रास्ते में रिपोर्टर ने श्याम की ओर देख कर कहा—"श्यामबाबू, वकील साहब की बातें सुनीं हमारी टोली में तुम और नरेन्द्र ही दो हो,

जिनके लिये, इस बात पर विचारना बाकी है। बोलो, इस कार्य का भार उठाने से पूर्व······

प्रोफेसर बीच में बोला—"श्याम के लिए अभी यह प्रश्न मत उठाओ रिपोर्टर। यह विवाह के लिए प्रस्तुत है। किन्तु इससे पूर्व, जो कार्य श्याम से लेना चाहते हो, वह ले लो तो अच्छा होगा। अभी श्याम को अपने घर वालों को असन्तुष्ट नहीं करना चाहिये।"

"हां, यह ठीक है।—नरेन्द्र ने कहा"—"श्याम के लिए यही हितकर होगा।"

इन तीनों की बात होने के साथ, श्याम कुछ और भी विचार रहा था। जब नरेन्द्र ने प्रोफेसर की बात का समर्थन किया, तो उसने ऊपर उड़ती चिड़िया के साथ यह देखा, मानो उसका किसी वेश्या से ब्याह हो रहा है, और उसके माता-पिता समूचा घर-भर एक स्वर में इस बात को कह उठा है—तुम्हारा इस घर से कोई सम्बन्ध नहीं है।—इस बात के आते-ही, श्याम गम्भीर हो गया। किन्तु, नरेन्द्र की बात के बाद उसने कहा—"आप लोग मेरे लिए जो निर्णय करेंगे, मैं उसका पालन करूंगा। श्याम साथ दिये जायेगा।"

प्रोफेसर बोला—"अब हमें नरेन्द्र बाबू के ही घर चलना होगा। सात बजने में एक घंटा शेष है।"—साथ-ही, वह अपने पास चलते श्याम के मनोभावों को देख कर मन में बोला—"समाज की जड़ क्या है?—धर्म! और धर्म किस शिखर पर आरूढ़ है?—इस व्यवहारवाद पर। मगर इन-सब का दृष्टिकोण क्या है?—नैतिक वाद!—वह जोर से कह उठा—"यह विवेक, जो हम सब को अदृश्य पथ पर धकेल रहा है, क्या इसके साथ धर्म, समाज और व्यवहार का सम्बन्ध नहीं है?" उसका अन्तः इसे स्वीकार कर रहा था।

इतने में यह लोग नरेन्द्र के घर आये, जहां देखा चार व्यक्ति पहिले-ही, मीटिंग के लिये, कमरे में बैठे हुए थे।

# बाईसवां-परिच्छेद

जब मीटिंग का कार्य आरम्भ हुआ तो श्याम ने मन्त्री-पद के लिये नरेन्द्र का नाम उपस्थित किया। प्रोफेसर ने समर्थन किया।

सर्व सम्मति से नरेन्द्र मन्त्री चुन लिया गया। प्रोफेसर उप सभापति। रिपोर्टर उप मन्त्री, और श्याम खजान्ची। इन सब से पूर्व सभापति का पद नगर के एक रायबहादुर साहब ने स्वीकार किया, जो इस समय बड़ी तन्मयता से प्रत्येक कार्य का निरीक्षण कर रहे थे। ऐसा मालूम पड़ता था, यह प्रौढ सभापति इन युवकों का संचालन करने के लिये उनके युवकत्व के भाव को भूल नहीं बैठा था। अपितु, जैसे वह स्वयं उनमें मिलकर अपनेको युवक सिद्ध कर देना चाहता हो।

सभासदों के निर्वाचन के बाद, वकील साहब का प्रस्ताव पेश हुआ। प्रस्ताव को सुन कर, कुछ देर के लिये परस्पर तर्क उठे, उसे न पेश करने की भी बातें आयीं। किन्तु वोट लेने पर, प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया।

इसके बाद आगे के कार्य-क्रम प्रश्न उठा। यह स्थिर हुआ, देशभर में सभा के केन्द्र स्थापित किये जायं, जो अपने यहां की पेशेवर स्त्रियों के नाम, पेशे का वर्तमान रूप, तथा उनके पूर्व-जीवन का परिचय आदि—मुख्य कार्यालय में भेजें। साथ-ही केन्द्र की चेष्टा होगी कि वह उन नारियों को विवाह के लिये उत्साहित करे। यह भी निश्चित हुआ, एक डेपुटेशन बाहर जाकर, इस बात का परिचय ले, कि कहां, कितनी वेश्यायें हैं। यह कार्य प्रोफेसर और रिपोर्टर के ऊपर सौंपा गया। वह अपनी सहायता के लिए, और 'आदमी ले सकेंगे। जिसका सब खर्चा मुख्य कार्यालय देगा।

इस निर्णय के बाद, यह भी तय हुआ, मुख्य-कार्यालय का सब से प्रथम कर्तव्य एक विशाल आश्रम की स्थापना का होगा। इसके लिए प्रथम पांच लाख रुपया निश्चित किया गया। रुपया एकत्र करने के लिए, पांच आदमियों की एक कमेटी बनायी गयी। तभी

नरेन्द्र ने घोषित किया—"हमारे सभापति जी ने दस हजार रुपये आश्रम की स्थापना के लिए प्रदान किये हैं। और बीस हजार रुपये एक और व्यक्ति ने प्रदान किये हैं, जो अपना नाम गुप्त रखना चाहते हैं।"—पाठक स्मरण रखें, यह रुपया कमला द्वारा प्राप्त था। नरेन्द्र के रुकते-ही श्याम ने उसके कान में कहा—"पांच हजार मेरे।" नरेन्द्र ने कहा—हमारे खजान्ची महोदय ने पांच हजार प्रदान किये हैं। दो हजार दुग्गो बाई और एक हजार प्रोफेसर और रिपोर्टर महाशय की ओर से प्राप्त हुए हैं। इसके उपरान्त, सभी सज्जनों ने, जो लगभग साठ-सत्तर की संख्या में उपस्थित थे, अपने-अपने दान लिखाये।

बाद में सभापति ने सज्जनों को धन्यवाद देने के साथ अपना भाषण दिया। वह कहने लगे—"मैं आपके उत्साह के प्रति, जितना विचारता था, वस्तुतः मैं उससे सौ-गुना अधिक आपमें पा रहा हूं। केवल मुझको छोड़ कर, आप सभी युवक हैं। मैं आज युवकों के बीच में हूं, इस गर्व को नहीं भुला सकता। हमने जिस कार्य का श्री गणेश किया है, वह आज से पचास वर्ष पहले प्रारम्भ हो जाना चाहिए था। किन्तु हम आज जागे हैं। हमें अपने पवित्र मन से इस कलंक को धोना-ही होगा। यह पाप न केवल, नारी-समाज के लिए है, अपितु, यह पुरुषों के लिए भी लागू है। और जिस देश के आंगन में ऐसा कलंक है, वस्तुतः उस देश के लिए भी यह लज्जा का प्रश्न है। भारत आर्यों की भूमि है। यह नारियों की सम्पदा है। भारत ने स्त्री-जाति का सर्वदा सम्मान किया है। हमें अपने पुरुषत्व को इन नारियों के चरणों में उडेलना-ही होगा। जो पाप, आज हमने भूल से कमा लिया है, उसका प्रतिकार तभी हो सकता है, जब हम इन नारियों में देखें, वह कितनी हैं, जिन्हें हम मां और बहन कह सकते हैं। तथा जिन्हें आदर के साथ, अपने घरों में प्रतिष्ठापित कर सकें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं, जो रुकावटें आपके सामने आयेंगी, वह आपके उन्नतिशील मार्ग पर अधिक नहीं टिक सकेंगी।

एक दिन आपके लिये साफ रास्ता मिलेगा। इसके बाद मीटिंग समाप्त हुई। जब सभी व्यक्ति चले गये, तो श्याम रुपयों का मीजान लगाता हुआ बोला—"आश्रम की नींव पड़ने के लिए रुपए इकट्ठे हो गये हैं।"

प्रोफेसर ने पूछा—"कितने हुए?"

"अस्सी हजार।"

इतने में नरेन्द्र ने नौकर को चाय लाने की आज्ञा दी। वह कुर्सी छोड़ कर घूमने लगा। जैसे अनायास उसके दिमाग में कोई बात आ गई हो। कुछ देर के बाद वह कुर्सी पर बैठता हुआ बोला—"मुझे इससे सन्तोष नहीं है श्याम!"

प्रोफेसर ने पूछा—"असन्तोष की क्या बात है?

"केवल सभासद बन जाना, और रुपया इकट्ठा हो जाने ही पर तो कार्य की सफलता नहीं आंकी जाती। रुपया मुख्य चीज नहीं है।"

"रुपया मुख्य न हो, किन्तु इसकी गुरुता भुलायी भी तो नहीं जाती।" श्याम ने छूटते कहा।

नरेन्द्र शांत होकर, श्याम की ओर देखकर यह जानने लगा—क्या सच, हम रुपये को गुरुता को नहीं भुला सकते!......इस प्रश्न के आते ही, उसकी सेवा, और मान खन्ड-खन्ड होकर टूट गये। वह बोला—"श्याम, रुपये पर क्यों टिक रहे हो, सेवा और आत्म-बलिदान विश्व में अभी ऊंचा ही रहा है। रुपया स्वयं उनके चरणों में आ गिरता है।"

बहुत देर से शान्त बैठा हुआ रिपोर्टर, कहने लगा—"आपने कुछ और भी सुना है? कल मोतीबाई मेरे घर आयीं थीं। मुझसे तो कुछ नहीं कहा-सुना, लेकिन श्रीमतीजी से उन्होंने कहा है, वह अब संन्यास ले लेना चाहती है! ववाहिक-जीवन वह शायद भविष्य में न बना सकेंगी।" कह कर वह अपने-आप हंस दिया। प्रोफेसर मुस्कराया। किन्तु, ठीक नरेन्द्र की तरह, श्याम इस बात को सुनकर गम्भीर बना रहा।

रिपोर्टर फिर बोला—"श्रीमतीजी कहती थीं, अम्मा के मरने पर मोतीबाई किसी ऐसे स्थान पर रहेंगी, जहां उन्हें कोई झन्झट, या किसी प्रकार का विचार न पैदा हो।"

श्याम ज़ोर से बोला—"छोड़ो भी रिपोर्टर, कौन सी बात लेकर बैठे हो। अब यह सोचो, कल से अपने ऊपर कौनसा कार्य लोगे।"

इस पर प्रोफेसर ने कहा—"हम चारों, ( दोनों की श्रीमती ) आपकी सेवा में प्रस्तुत हैं। आज्ञा कीजिये।"

श्याम मुसकरा कर कहने लगा—"तुम लोगों को स्वयं ही निश्चय करना होगा, प्रोफेसर साहब।"

प्रोफेसर मुसकरा कर बोला—"किन्तु इस काम के साथ, हमें अब एक यह भी काम करना है। श्यामबाबू, कि इन वेश्याओं में एक तुम्हारे अनुरूप लड़की मिले, जिसे तुम्हारी गांठ से बांध दिया जाये।"

श्याम चाय पीकर उठता हुआ बोला—"अच्छा, अच्छा।"

इसके बाद चारों मकान से निकल कर बाजार की ओर चल दिये।

## तेईसवां-परिच्छेद

अपने व्यवसाय की कमी आने पर, बहुत-सी स्त्रियों के साथ परिचित मेहरो और गज्जो भी अपने-अपने गांव में चली गई थीं। इस बीच में बहुत से परिवर्तन हो गये। जिसमें रूप और यौवन के साथ मधुर गला था, वह अपनी छोटी श्रेणी को छोड़कर, बड़ी श्रेणी में आयीं, अर्थात् जाने लगीं। बहुत-सी वैवाहिक-जीवन में पहुंच गयीं।

लेकिन जो गांव में चली गयीं थीं, उनमें से बहुत-सी फिर वापस आ गयीं। जिनमें मेहरो भी थी। मेहरो ने आकर देखा, कोठरियां तो बहुत खाली हैं, पर उसकी परिचिताओं में से कोई भी नहीं हैं। फलतः वह अपने शून्य जीवन को लेकर, एक कोठरी में बसी। अब कोठरी का किराया भी आधा था। किन्तु मेहरो ने पहले ही दिन देखा, जिस प्रकार स्त्रियां कम हो गई हैं, उसी प्रकार ग्राहक भी कम हो गये हैं। दो दिन तक मेहरो का एक भी सौदा नहीं पटा। उसे आठ दिन बाद ही कोठरी का किराया देना होगा। आर दूसरे दिन उसने पूरा फाका किया। उसे महे-से-महा भी ग्राहक नहीं मिला। ऐसी स्थिति में

मेहरो उसी खिन्न, और उदास मन को लेकर, शून्य कोठरी में पड़ी रही। उसके पुराने ग्राहकों में से उसे एक भी नहीं दीख पड़ा कोई स्त्री भी परिचित नहीं। गली उसके लिये परिचित है। किन्तु इसमें बसी हुई नारियों में, और आते हुये लोगों में से वह एक को भी नहीं जानती। उसे फिर नये सिरे से अपने विश्व का ताना पूरना पड़ा। जिसमें उसे प्रारम्भ में ही कठिनाइयां, और आपदायें देखनी पड़ीं। भूखी और बेकार रह कर मेहरो शिथिल हो गई।

तीसरे दिन के प्रातः में मेहरो ने अपनी कोठरी का ताला बन्द किया, और एक ओर चल पड़ी। अपने अनिश्चित लक्ष पर कुछ दूर जाते ही उसने एक मकान की चिनाई में कुछ पुरुषों के साथ स्त्रियों को भी काम करते देखा। वह वहां रुकी। अपनी मजदूरी के लिए मुन्शी से बातचीत की। सात आने प्रति दिन पर वह रख ली गयी। मेहरो उस दिन की शाम को अपनी कोठरी में नहीं गयी। रात उसने मकान के साये की नीचे काट दी।

एक दिन की बात है, मेहरो ईंट ढो रही थी, कि दूसरे मजदूर ने अपने लिए ईंट इकट्ठी करते पूछा—"क्यों मेहरो, तुम्हें देश छोड़े कितने दिन हो गये?"

मेहरो ने ऊपरी मन से कह दिया—"एक महीना।"

वह फिर पूछने लगा—"बच्चे कहाँ हैं?"

यह सुन कर मेहरो ने उसे देखते हुए उत्तर दिया—"मेरा बचपन में ब्याह हुआ था। यह चूरियां तो शौक में डाल रखी हैं।"

ईंट पहुँचा कर दोनों फिर बातें करने लगे। बहुत देर की बातों के बाद, मजदूर ने मेहरो पर प्रकट किया—"मेहरो, अगर तुम विवाह करो, तो मैं तैयार हूं।"

उस दिन मेहरो ने केवल 'हूं' भर की। पन्द्रह दिन वह दोनों एक साथ काम करते रहे। एक दिन मुन्शी ने देखा, मेहरो के साथ एक मजदूर कम है। उस चालाक मुन्शी ने स्त्री मजदूरनियों और मजदूरों के सामने कहा—"औरत जात थी, आदमी को भी ले

कर भाग गयी।"—जाने मुन्शी की बात में कितना तथ्य था, और कितना सत्य!···

परन्तु, पुरुष, स्त्री. को लेकर भागता है, यह कल्पना तो पुरानी हो गयी, स्त्री भी आदमी को लेकर भागती है हां, यह नयी बात थी।

* ❀ *

इधर कुछ समय से नरेन्द्र एक विचित्र परिस्थिति में पड़ गया था। मोती से उसका पन्द्रह-बीस दिन से साक्षात नहीं हुआ। हालांकि अदालत में मोती द्वारा उसे उसके यहां जाने का निमन्त्रण मिला था, परन्तु वह जा ही न पाया। उसे मोती से चिढ़ हो गयी हो, उसमें मोती के प्रति उदासीनता आ गयी हो, कदाचित ऐसा नरेन्द्र ने स्वप्न में भी नहीं विचार पाया। हां, श्यामबाबू इधर मोती के अधिक निकट लग गया है, इसे नरेन्द्र जानता है। श्याम नरेन्द्र से सट गया है, क्योंकि वेश्या-सुधार के काम को करने के कारण उसमें और उसके पिता में मतभेद खड़ा हो गया।

इस अवस्था में नरेन्द्र की दूसरी गति बनी। वह इस तरह चला, कि उसके सामने जो व्यवधान आये, वह उसी पर अपने को समर्पण कर देगा। किन्तु, वह जिस आत्म-विश्वास को लेकर लक्ष के प्रति झुका था, उसने देखा, वह कुछ ढीला पड़ गया है। पर, वह चल जो पड़ा है, राह पूरी हो, या न हो, उसे चले चलना होगा। अब उसके पास अपने विश्वास का यही रूप था।

और श्याम अब बड़ा हो गया है।—समझदार हो गया है। वह नहीं चाहता, उसके सिद्धान्त की ऐसी समालोचना हो। और, जब बात उठ-ही गयी, तो उसका वह गम्भीर बन कर आरोप भी रोकेगा।

नरेन्द्र और श्याम में, इस प्रकार पास रह कर भी, कोई अन्तर नहीं आ गया है। वह दोनों अब भी दो हैं। दोनों-ही पृथक हैं। एक बात के अन्दर जाता है, और दूसरा उसीके रूप तक। श्याम के लिये पिछली-ही बात लागू है।

इधर मोती के नाम पर नरेन्द्र और श्याम की चर्चा बन्द थी। जैसे जान बूझ कर बन्द हो। पर एक दिन श्याम ने फिर मोती का विषय उठाया। नरेन्द्र, मोती का नाम सुन कर, अनायास ही जैसे कुछ पी गया। कुछ देर मौन रहने के बाद बोला—"तुम्हारा तो अब वहां खूब आना-जाना है, श्याम?" मानो वह अपनी बहुत दिन की रुकी बात को फिर रोक लेना चाहता था।

श्याम साधारण ढङ्ग से मुसकरा कर बोला—"बनने वाले भावज को पहले अपना पूरा परिचय तो दे देना चाहिये।"

मानो नरेन्द्र का वार खाली चला गया। हँसोड़ श्याम खुल कर मुसकरा दिया। नरेन्द्र ने फिर कहा—"सो तो ठीक है।—लेकिन, अगर वह भावज की जगह दुलहन बने तो?"...

"यह अन्याय होगा"—कहते श्याम की मुसकराहट लोप हो गयी थी।

"अन्याय शब्द की मैं अधिक कद्र नहीं करता, श्याम। मैं वास्तविकता को मानता हूं।"—नरेन्द्र बोला—"इस अन्याय को इतने महे में मत आंको श्यामबाबू!"—मानो जो बात है, वह उसके गले तक आ गयी हो, बोला—"मैं समझता हूं, मोतीबाई तुम्हारे लिए उपयुक्त पत्नी होगी।"

यह सुनते ही श्याम उत्तेजित हो गया। उसे नहीं जान पड़ा, यह सामने बैठा नरेन्द्र कह क्या रहा है। और वह क्या उत्तर दे। क्षणिक स्तम्भित रह कर, वह उसी आवेश में कुर्सी से खड़ा होता हुआ बोला—"तुम्हारी बात का अर्थ क्या है नरेन्द्रबाबू! मैं समझता हूं, मेरे जाने-आने को तुम सन्देह की दृष्टि से देख रहे हो।"

नरेन्द्र कुर्सी पर बैठा हुआ ही बोला—"नहीं श्याम, बैठ जाओ। मैं तुम पर सन्देह नहीं कर रहा हूं। एक वेश्या के लिये, तुम्हें रुष्ट करना अहितकर-ही हो सकेगा ना! मगर मैंने तुमसे यह कहा है, तुम वहां जाते हो, और फिर वहां जाते हो, तो क्यों नहीं उससे विवाह कर लेते।"

"नरेन्द्रबाबू !"—श्याम चीखकर बोला—"मालूम होता है, तुम अवश्य पागल हो गये हो।"

अब नरेन्द्र को अपनी स्थिति स्पष्ट करनी पड़ी। जैसे वह अब तक आधा खाली हो चुका था। श्याम के रुकते ही, उसमें जोर का आवेश आया। कुर्सी से अलग खड़ा होकर कहने लगा—"श्याम, मैं पागल को महत्व नहीं देता। आदमी जागरूक हो, सचेत हो इससे बड़ी क्या बात। ना, तुम मोती से विवाह करलो, मेरे कहे से करलो।"

इस बार श्याम बोला नहीं। उसके नथुने फूल गये। एक बारगी सांस का प्रवाह वेग से बढ़ चला। अपने मजबूत हाथ से कुर्सी को पकड़े हुए, उसे इच्छा आयी, कुर्सी को उठा कर एक ओर फेंक दें। या यह जो नरेन्द्र, बिना संकोच के, बिना लज्जा के, औचित्यहीन बात कहकर बैठ गया है, इसके सिर पर दे मारे। किन्तु उसने कुछ नहीं किया। माथे पर आये पसीने को पोंछ कर, वह अपने सूखे गले को लिये हुये, उसी दशा में बाहर निकल गया

श्याम सीधा अपने घर पहुँचा। और चुपचाप अपनी बैठक में जाकर आराम कुर्सी पर लेट रहा। इतनी दूर में उसका मस्तिष्क स्वस्थ अवश्य हो गया था, किन्तु पहली स्थिति अभी नहीं आ गयी थी। अब वह केवल यह जान लेना चाहता था, ऐसी कौन सी बात है, जो मेरे और नरेन्द्र के बीच में आ गयी है। जब घर में मा को पता लगा, श्याम कमरे में आ गया है, तो वह उसके पास आती हुई बोली—"तू दो दिन से कहां था रे, श्याम ?'

इस अवस्था में मा का बोल सुन कर और उसे सामने देखकर, श्याम सब-कुछ भूल गया। मा को उतर दिया—"कहीं भी तो नहीं मा, नरेन्द्रबाबू के साथ एक काम में व्यस्त था।" उसका स्वर कुण्ठित और सुस्त अवश्य था।

मा ने कहा—"नरेन्द्र खुद तो पगला हो रहा है, क्या तेरे दिमाग में भी पागलपन भर दिया। वेश्याओं के सुधार में लगा होगा ?"

श्याम मां के मुंह से वेश्या का नाम सुनकर बोला—"तो क्या मा, तुम उनका सुधार पसन्द नहीं करतीं ?"

मा तपाक से बोली—"सुधार तो कोई बुरी चीज नहीं है बेटे, पर वह अपना सुधार चाहती भी हैं, यह भी तो सुधारकों को जानना चाहिये।"

श्याम कहने लगा—"मा, वेश्यायें अपना सुधार चाहती हैं। वह चाहती हैं, हम भी गृहस्थियों की तरह जिन्दगी बितायें। मा, क्या वह अपने कार्य से सन्तुष्ट हैं। यह तो उनसे पेट की रोटियां कराती हैं।"

मां दया के भाव में कहने लगी—"सो तो ठीक है। अच्छा है, बेचारियों का जीवन सुधर जाये। मगर तेरे बाबू जी तो यह कहते थे, तू किसी के साथ विवाह करेगा।"

"विवाह,—नहीं मा, अभी तो मैंने कोई ऐसा विचार नहीं किया। मगर यदि कर लूं, तो क्या तुम ऐसी बहू को पसन्द नहीं करोगी मा, जो नर्क से उठकर तुम्हारी शरण में आना चाहती हो।"

मां ने कहा—"बस, चुप रह ! तेरी तो ऐसी ही बातें रहेंगी। मैं देखती हूं, अभी तेरी लड़कपन की आदत नहीं छूटी।" कहती हुई वह जाने लगी।

श्याम बोला—"सुनो तो मा, तुम तो नाराज होकर जारही हो। क्या मेरे लड़कपन से नाराज हो ?"

"नहीं रे ! "—मा जाती जाती बोली—"तेरे लिये कुछ खाने को ला रही हूं।"

—और जब मा कमरे से बाहर हो गई, तो श्याम कोख से पैदा करने वाली मा के अध्यात्मिक-पहलू पर विचार करने लगा। वह इस समय प्रसन्न था।

दूसरे दिन सुबह को श्याम ने मा से सौ रुपये लिये। कुछ उसके पास थे वह कई सौ रुपये लेकर, बाहर जाने के लिये तैयार हुआ। उसने रात में ही तय किया, वह कुछ दिन के लिये बाहर घूम आयेगा। फिर यहां की परिस्थिति ज्यों-की-त्यों हो जायेगी।

ठीक समय पर नौकर ने मोटर में सामान रखा, और वह स्टेशन पर पहुंचा। किन्तु अभी तक उसका यह निश्चय नहीं हुआ कि जाना किधर अधिक उपयुक्त होगा। उसके सामने आध घण्टे के

अन्दर तीन ओर की गाड़ियां छूटने वाली थीं। वह यही सोच रहा था कि तभी उसने पीछे-से अपना नाम सुना।

श्याम ने मुड़ कर देखा, मोती उसके पास खड़ी है। वह बोला—"तुम कहां मोतीबाई?—कहां जाने की तैयारी की?"

मोती कहने लगी—"अम्मा हरिद्वार जा रही हैं। सोचती हूं, मैं भी एक-दो दिन घूम आऊं। अम्मा वहां लगभग एक मास बितायेंगी।—आप कहां चले?"

श्याम ने कहा—"घर से कहीं जाने के लिए निकल आया हूं। पर समस्या यह है, जाऊं कहां। कहावत बड़ा विचित्र आदमी है!"

मोती बोली—"तो हरिद्वार-ही चलिए न, मैं आपके साथ-ही लौट आऊंगी।"

"यह ठीक होगा।"—श्याम बोला—"तो हरिद्वार का टिकट ले आना चाहिये।"

"नहीं, आदमी ले आयेगा। चलिए उधर अम्मा हैं।"

श्याम को देखकर दुअन्नोबाई खुश हुई। तीनों सेकिंड क्लास के डिब्बे में जा बैठे। अपने समय पर गाड़ी छूटी, और देखते, उसने कई स्टेशन पार कर दिये। एक स्टेशन आया, वहां गाड़ी करीब बीस मिनट ठहरती थी। मोती और श्याम बातें करते हुये प्लेटफार्म पर घूम रहे थे। इसी बीच में मोती चौंक कर बोली—"अरे, तुम्हारे नरेन्द्रबाबू तो वह डिब्बे में बैठे।" श्याम ने उस ओर देखा, तो सच नरेन्द्रबाबू! उधर देखने में नरेन्द्र और श्याम की चार आंखें मिल गई। पर श्याम में इतनी शक्ति नहीं आयी, कि वह नरेन्द्र को पुकारे। वह यह सोच-ही रहा था कि एन्जिन ने सीटी दी, और वह मोती का हाथ पकड़ कर डिब्बे में जा बैठा।

अम्मा के पास बैठ कर मोती ने कहा—"नरेन्द्रबाबू भी पिछले डिब्बे में बैठे हैं।

यह सुन कर उसने कहा—"उन्हें यहां क्यों नहीं ले आयी?"

मोती बोली—"दूर से देखे थे इतने में रेल-ही चल दी। अगले स्टेशन पर बुला लेंगे।"

पर सच बात यह थी, इन दोनों की बात होते समय, श्याम अपनी कोई बहुत गहरी बात सोच रहा था। उसके सामने पहले दिन की नरेन्द्र द्वारा सुनी बातें प्रत्यक्ष हो आयीं। जो अब उसके लिये अधिक भयानक बन गयीं। और अन्त में वह विचारने लगा—"ओह, यह हो क्या गया, जो कल के पहले मैं और नरेन्द्र इतने समीप थे, आज अनायास इतनी दूर हो गये हैं—दोनों, एक, दूसरे के प्रति घृणा और आत्म-दाह की वस्तु बन गये हैं! उसे प्रबल वेग से रोने की इच्छा हो आई। पर वह रो नहीं पाया। वह अपने में खिन्नअवश्य हो गया।

परन्तु इतने बीच में मोती के हृदय में जो आश्चर्य पैदा हो गया था, वह तब अधिक बढ़ा, जब उसने दूसरे स्टेशन पर, अपने डिब्बे में बैठे ही यह देखा कि नरेन्द्रबाबू मुसाफिरखाने के बेंच पर बैठे हैं। जब उसका डिब्बा मुसाफिरखाने के सामने आया था, तो अनायास एक ने दूसरे को देख लिया था। पर जब उसने देखा, हंसोड़ और चञ्चल श्यामबाबाबू, जैसे किसी गहरे प्रश्न पर विचार कर रहे हैं तो वह श्याम को इस प्रकार गम्भीर और एकाग्र देख कर तनिक शान्त रहने के बाद बोली—"आप क्या सोच रहे हैं श्यामबाबू?" मोती को इच्छा आई, वह श्याम को बताये कि नरेन्द्रबाबू पिछले स्टेशन पर उतर गये हैं। किन्तु श्याम को गम्भीर देखकर उस बात को रोक लिया। परन्तु श्याम ने पहले-ही नरेन्द्र को उतरते देख लिया था।

मोती की बात सुनकर वह चौंकता हुआ बोला—"कुछ भी तो नहीं मोती।"

और कुछ क्षण रुक कर अपने आप कहने लगा—"नरेन्द्रबाबू उतर गये!"—लेकिन जैसे वह कोई बात कठिनता से दबा रहा हो। खिड़की के बाहर मुंह करके शान्त और निर्जन बन को देखने लगा। भला मोती श्याम की इस बात के उत्तर में कौनसा आश्चर्य दिखाती।

इसी समय इन सब के इस प्रकार जाते समय, नरेन्द्र मुसाफिर खाने में अज्ञात रूप में बैठ कर, यह देखने लगा कि दूसरी रेल आये, और वह फिर बैठ कर घर पहुंचे। इसी के साथ, जो भयंकर आत्म-

ग्लानि उसे तोड़ रही थी वह था, रेल से उतरने की बात। अब वह सोचता था मैं रेल मे उतरा-ही क्यों! सिर्फ इसलिए, मोती को श्याम के साथ देख लिया। वह अपनी इस दशा पर मुसकरा दिया। उसे नहीं जान पड़ा, उसने कौन से कर्म का पालन किया है। बोला—"तो यों कहो नरेंद्र, तुम मोती पर अपना जन्म-सिद्ध अधिकार कर बैठे हो। क्यों कि उसने कहा जो है, मैं तुमसे प्रेम करती हूं।—तुम्हारे साथ विवाह करना चाहती हूं। कहने के साथ वह अपने पर खीज उठा —धूर्त! तुम तो बड़े पक्के साम्यवादी हो न, शायद इसी लिये वेश्याओं का सुधार करने चले हो! उसका हृदय आत्म-ग्लानि से हंस पड़ा —मानो, तुम मोती को मोल ले चुके हो .. ...!

और जब वह घर की ओर चलने वाली गाड़ी में बैठा, तो उसके सामने केवल एक बात थी, कि उसे अवश्य इस कर्म का प्रायश्चित करना होगा। घर आकर, वह कुछ देर बाद ही अलमारी से पिछली मीटिंग के कागजात निकाल कर देखने लगा। जब नौकर चाय और फल रखने आया, तो उससे कहा—"जाकर प्रोफेसर साहब को देखो, कहना, आप और रिपोर्टर साहब आज शाम को अवश्य आयें। एक विशेष काम है।

नौकर के जाने पर जब वह चाय पाने बैठा, अपने-आप बोला—आज मुझे दो काम करने चाहियें, आश्रम की ओर से देश के नाम अपील, और दूसरा एक प्रस्ताव तैयार करना, जो धारा-सभा में, इस आशय से रखा जाय, कि देश से वेश्या वृत्ति उठा दी जायं। वह सोचने लगा--यह कार्य है तो दुसाध्य, किन्तु असम्भव नहीं है। इस प्रवाह को रोकने का किसी अंश में एक यह भी शस्त्र होगा। यह तो निश्चय-ही है, सरकार इस ओर से सर्वथा उदासीन है।

सँध्या के तीन बजने तक, उसने कई पेज की एक अपील लिखी। वह जैसे-ही, इस काम से निबट कर कुर्सी से उठ रहा था, कि प्रोफेसर और रिपोर्टर ने कमरे में पैर रखा।

नरेन्द्र इन्हें देख कर बोल पड़ा—"आप खूब आये। पहले इस

चीज का संशोधन करो। आप दोनों अपनी अलग अलग दृष्टि से देखियेगा। रिपोर्टर महाशय, आप राजनैतिक दृष्टि से, और प्रोफेसर तुम सामाजिक दृष्टि से।" कह कर वह स्वयं कुर्सी पर बैठ गया।

रिपोर्टर बोला—"तुम्हीं सुनाओ, तुम्हारा लिखा ठीक तो होगा ही।"

नरेन्द्र सुनाने लगा। जब सब पढ़ चुका तो प्रोफेसर बोला—"अपील जोरदार है। प्रेस को आज ही दोगे?"

नरेन्द्र ने कहा—"इस काम को तो मैं स्वयं कर लूंगा, तुम दोनों को इसलिये बुलाया है, आज धारा-सभा के मेम्बरों से मिलना है। जो उनमें से किसी एक के द्वारा, असेम्बली में यह प्रस्ताव पेश कराया जाय।"

रिपोर्टर कहने लगा—"श्यामबाबू को भी बुला लेना चाहिये। इस काम के लिये अपने सभापतिजी को भी साथ लेना होगा। चार-पांच आदमी अवश्य होने चाहिएँ।"

नरेन्द्र झट बोला—"श्याम आज यहां नहीं है। शायद वह हरिद्वार गया है। जब उसने 'शायद' को कुछ छिपा कर कहा, तो जैसे वह झूठ बोल रहा है, फिर बोला—हां, श्याम हरिद्वार गया है।—देहरादून, या मंसूरी।"

रिपोर्टर—"उसका रहना आवश्यक था। लेकिन खैर, आप विचारर का दिन रखिये,।"

"मगर मैं चाहता हूं, आज हमें कुछ और काम भी कर लेना चाहिये। आश्रम के लिए जमीन या कोई किराये मकान देखा जाय।"

किन्तु उसका प्रबन्ध किसके हाथ में होगा?—प्रोफेसर ने पूछा—"यह पहली बात है। अच्छा हो, कोई शिक्षित गृहस्थ की स्त्री इस काम को ले।"

नरेन्द्र ने जवाब दिया—"क्या इस प्रकार की स्त्री मिलना सम्भव है?"

प्रोफेसर बोला—"यह सुधार भी तो सम्भव नहीं कहा जा सकता। ढूंढिये, काम तो करने से होगा।"

रिपोर्टर ने कहा—"मेरे खयाल में श्याम को आने दो। इतने में आप स्थान के लिए अखबारों में सूचना दे दीजिये।"

प्रोफेसर बोला—"श्याम इस काम में अधिक चतुर है। वह ऐसी किसी महिला को ढूंढ ला सकता है। पर, आपको इसके लिये पत्रों में भी लिखना चाहिये।"

"यह ठीक होगा।" नरेन्द्र ने कहा—"मैं आज सब पत्रों में इसकी सूचना दिये देता हूं।"

सब तीनों बाहर आये, नरेन्द्र बोला—"प्रोफेसर, हमें पांच मिनट के लिए चवन्नी के कोठे पर चलना चाहिये। सुना है, वह हमारे इस काम से सहमत है।"

किन्तु, जब यह लोग चवन्नी के कोठे पर पहुंचे तो एक विचित्र बात हुई। शायद लड़कियों ने इन्हें ग्राहक समझा जो बड़े अदब के साथ, सब-की-सब इनके सामने आकर बैठ गयीं। रिपोर्टर ने एक से पूछा—"तुम्हारी अम्मा कहां है, बाई?"—तो भीतर से चवन्नी की लड़की दुर्गा ने कमरे में आकर नरेन्द्र को देख कर कहा—कहिए नरेन्द्रबाबू, क्या आज हम पर भी रंग चढ़ाने आये हो?"

नरेन्द्र इस लड़की को जानता था। मोती के यहां एक दिन यह लड़की उससे मज़ाक कर चुकी थी। इतने में चवन्नी भी कमरे में आ गयी। इन लोगों को बैठे देख कर, वह मुसकराती हुई पास बैठ कर बोली—"कहिये, आज आप लोगों ने कैसे दर्शन दिये?"

नरेन्द्र बोला—"आपको कष्ट देने आये हैं, बाईजी।"

चवन्नी ने तपाक से पूछा—"इर्शाद?"

नरेन्द्र कहने लगा—"मैंने उस दिन 'कचहरी में जिस काम के लिए आपसे कहा था, उसे अब हम शुरू करना सोच रहे हैं आपकी उसमें क्या सहायता होगी?"

चवन्नी ठोढ़ी पर हाथ रखकर जरा देर के बाद बोली—"जो आप हुक्म करेंगे, मैं तैयार हूं।"—कुछ सोच कर फिर कहने लगी—"मैं आपकी दोनों तरह से मदद करूंगी। जो बन सकेगा, पैसे से भी, और

लड़कियां देकर भी। आप मुझे भी अपने आश्रम में एक कोठरी दे देना, अब यह जलालत का पेशा हो गया है, नरेन्द्र बाबू!"......

नरेन्द्र बोला—"हम इसी सप्ताह के अन्दर आश्रम खोल देना चाहते हैं। आपको बाजार की लड़कियां भी भिजवानी होंगी, बाईजी।"

चवन्नी बोली—"मैं आपके साथ हूं, बाबू। आश्रम का नाम क्या रखा?"

नरेन्द्र कहने लगा—"आश्रम का नाम रखा है, 'सेवा आश्रम' जिसकी नियमावली छप गई है। वह अपनी जेब से नियमावली की एक प्रति निकाल कर बोला—"देखिये।"

चवन्नी ने दुर्गा को देकर कहा—"जरा सुना तो दुर्गा।" दुर्गा ने शुरू के नियम सुनाये—

१–जो वेश्या आश्रम में प्रवेश करेगी, उसे पहले ही यह निश्चय कर लेना होगा, कि उसे किस रूप में आश्रम में प्रविष्ठ होना है।

२— वेश्या लड़कियों को स्वावलम्बी बनाने की शिक्षा दीक्षा देकर, उनका किसी सभ्य से विवाह संस्कार कराना होगा। उन्हें आजन्म के लिये आश्रम की सेवा में अपने को सौंप देना होगा। दोनों स्थिति में उन्हें अपना धन आश्रम को सौंप देना होगा।

३–आश्रम के अन्दर कोई पुरुष नहीं जा सकेगा। वहां की निरीक्षका स्त्री होगी।

४–आश्रम में बसने वाली प्रत्येक स्त्री को, अपनी दूसरी स्त्रियों से प्रेम करना होगा।

५–जो आजन्म के लिये, अपने को आश्रम की भेंट देंगी, उन्हें बाहरी संसार से कोई सम्पर्क नहीं रखना होगा। उन्हें किसी पुरुष से सहयोग भी नहीं रखना होगा।

नियम सुनकर चवन्नी बोली—"नियम ठीक हैं नरेन्द्र बाबू। मगर शायद है, बाहर की आजाद स्त्रियों को पहल-पहल नापसन्द हों।"

नरेन्द्र बोला—"वह तो स्वभाविक है। किन्तु, इसके बगैर सुधार की कोई आशा नहीं है।"

कुछ देर बाद, यह सब चलने के लिये उठे। चवन्नी बोली—"मेरी बात पक्की समझिये। मैं तैयार हूं।"

नरेन्द्र बोला—"आज हम केवल स्मरण कराने आये थे, बाईजी! फिर किसी दिन आयेंगे।"

सड़क पर आकर, वह रिपोर्टर को अपील देता हुआ बोला—"तुम इसे प्रेस में दे दो रिपोर्टर। मैं आज सोऊंगा, थका बहुत हूं।"

घर आकर जब वह खाना खाने के बाद पलंग पर लेटा, तो थोड़ी देर में उसे आशा और प्रसन्नता के बीच गहरी नींद ने आ घेरा।

## चौबीसवां-परिच्छेद

मोती और श्याम के हृदय में जो बात थी, उसका एक ही लक्ष्य था। किन्तु विचार दो थे। एक को नरेन्द्रबाबू के इस प्रकार उतारने से घृणा थी और दूसरे को दुःख। मोती के लिये पहली ही बात लागू थी।

हरिद्वार पहुंच कर, सबने गंगा में गोते लगाये। किन्तु मोती और श्याम के पास श्रद्धा और भक्ति का कोई भाव नहीं रह गया था। उसी दिन श्याम को श्याम ने मोती से कहा—"मैं घर जाऊंगा मोती!"

मोती बोली—"आज नहीं श्यामबाबू। दो दिन बाद चलना, मैं भी साथ चलूंगी।"—वह श्याम से पहले हरिद्वार छोड़ देना चाहती थी।

दो दिन के बाद वह मोती के साथ फिर घर की ओर चला। अपने शहर में आकर, घर की ओर जाती हुई मोती ने कहा—"संध्या समय आना श्यामबाबू, मुझे कुछ बातें करनी हैं।"

वह स्वीकार करके अपने घर पहुंचा। जब मा के सामने आया तो उसके प्रणाम को आशीष देकर मा बोली—"तू हरिद्वार गया था श्याम? नरेन्द्रबाबू आये थे। चल, कुछ खा ले। तब नरेन्द्रबाबू से मिल आना। कहते थे, मुझे श्याम से जरूरी काम है। आज बहुत देर तक वह वेश्या सुधार की बातें करते रहे।"

मां की बात समाप्त होते-होते, श्याम ने उल्लास के साथ पूछा—"नरेन्द्रबाबू क्या कहते थे मा?"

मिठाई की तश्तरी आगे रखती हुई मा बोली—"कहते थे, मैं आज श्याम को आने के लिये तार दूंगा। वह तेरा पता पूछने आये थे। मगर तू मुझसे हरिद्वार का नाम लेकर कब गया था। फिर या भी कहते थे, शायद श्याम आज-ही आ जाये।"

श्याम ने मुश्किल से आधा लड्डू खाया, और एक-आध पेड़ा। वह गिलास भरे पानी के लम्बे घूंट पीकर उठता हुआ बोला—"मैं नरेन्द्रबाबू से मिल आऊं मा।" मा कहती रही, अरे कुछ तो खा ले। किन्तु श्याम उसी तरह नरेन्द्र के घर की ओर चल पड़ा। उसके सामने पिछली कोई बात नहीं थी। वह जैसे-ही नरेन्द्र के कमरे में घुसा, देखा नरेन्द्रबाबू अपने सामने तमाम कागज फैलाये चिट्ठियों के ढेर लगाये बैठे हैं। उसे देखकर नरेन्द्र छूटते-ही बोले—"ओ" तुम आ गये। मैं जानता था, तुम आज-ही आ जाओगे। अब के रविवार के दिन की मीटिंग के लिये मेम्बरों को सूचना लिखो। कुछ मैंने लिख दी हैं। और आज-ही, तुम्हें मुझे बीस हजार रुपया देना होगा। जगह ठीक कर ली है। मकान बनाने के लिये नक्शा तैयार हो रहा है।"

श्याम सब बातें सुन कर बोला—"रुपया तो तुम्हारे-ही पास है। ले क्यों नहीं लिया।"

नरेन्द्र कहने लगा—"इसी शहर से सौ लड़कियां एक ही साथ मिल रही हैं। तुम्हारे आने की देर थी। रुपया तुम्हें अपने-ही पास रखना चाहिये। मुझ में रुपया रखने की तमीज नहीं है। आखिर, तुम्हारा मुख्य काम वही है। एक भी पैसा घटने पर, वह तुम्हें-ही देना होगा। रिपोर्टर और प्रोफेसर के साथ तीन व्यक्ति, बाहर दौरे पर गये हैं। जिन्हें दो-तीन मास से अधिक लगेंगे। मेरा विश्वास है, आश्रम खुलते-ही पांच सौ वेश्या और उनकी लड़कियां भर्ती हो सकेंगी।"

श्याम मन-ही-मन केवल चार दिन में नयी दुनिया की कल्पना करता हुआ, लिखी चिट्ठियों के मुंह बन्द करने लगा।

कुछ देर बाद नरेन्द्र बोला—"आज रायसाहब से मिल कर उन्हें

इस बात के लिए तैयार करो कि रविवार के दिन प्रातः काल दस बजे, डेपुटेशन के साथ वह धारा सभा के मेम्बरों से मिलने चलें।"

श्याम के पास उत्तर देने के लिए कोई बात नहीं थी। वह सब सुन कर 'हां, हूं' करता हुवा, केवल अपने में दो बात सोच रहा था—एक बात यह कि मोती को शीघ्र बताया जाय, हमारे पीछे नरेन्द्रबाबू ने कितना भारी काम कर लिया है। दूसरी यह कि वह नरेन्द्र से पूछ ले, तुम रेल से चुपचाप क्यों उतर आये। किन्तु, मोती से तो वह जरूर ही कहेगा, पर सामने बैठे नरेन्द्र से उसमें यह बात पूछने की शक्ति नहीं आ पायी। फिर सोचने लगा, क्या यह न कह दूं, कि मोतीबाई भी लौट आई है। परन्तु वह इतना भी नहीं कह पाया।

तब उसने नरेन्द्र से हिसाब लिया। जब जाने के लिए उठा, तो नरेन्द्र ने पूछा--"अब आओगे?"

"अब नहीं। मैं रायसाहब से मिलने के बाद, मोतीबाई से भी मिलूंगा, वह भी साथ आ गई हैं।"

"समय मिले तो आना।— शायद मैं भी मोतीबाई से मिलूं।"

किन्तु, तुम्हें मोती से मिल-ही लेना चाहिए। मेरे आने की बाट भी मत देखना।"

जब सन्ध्या को श्याम अकेला-ही मोती से मिलने गया, तो उसने बैठते-ही पूछा—"नरेन्द्रबाबू आये थे, क्या?"

मोती बोली—"नहीं तो।"

श्याम बोला—"हरिद्वार से लौट कर, मैं नरेन्द्रबाबू के ऊपर पहिले से अधिक श्रद्धा करने लगा हूं, मोती। क्या तुमने लौट आकर कुछ नहीं सुना है?"

मोती—"सुना है, वेश्याओं के सुधार के लिए आश्रम खुल रहा है।"

"वह अब शीघ्र खुल जायगा मोती। इतने समय में तुम नरेन्द्र-बाबू का यह कम परिश्रम समझती हो।" —फिर कुछ देर रुक कर कहने लगा—"नरेन्द्रबाबू के दिल में कुछ नहीं है। यदि कभी होता भी है, वह अधिक समय तक नहीं टिक सकता। और······इतने में

नरेन्द्र ऊपर आया। उसने कमरे में आते-ही पूछा—"तुम कितनी देर के आ गये हो श्याम?"

श्याम ने कहा—"अभी, बीस मिनट हुए होंगे।"

"हरिद्वार की गंगा का स्नान कर आयीं मोतीबाई!"—नरेन्द्र ने बैठ कर कहा—"मैं हरिद्वार की मिठाई खाने आया हूं। श्याम तो कुछ भी नहीं लाया।"

मोती बोली—"हरिद्वार से मैं भी कुछ नहीं ला पायी हूं। मिठाई अभी मंगाती हूं। क्या खाइयेगा?"

"यह श्याम बताइयेगा।"

श्याम बोला—"वही, गरम-गरम रसगुल्ले।"

मोती ने मुसकरा कर नौकर की तरफ रुपया फेंक दिया।

श्याम ने कहा—"मोतीबाई को आश्रम की सूचना दे दी है।"

"मगर स्वयं क्या करना है, मोतीबाई ने यह भी सोचा?"—नरेन्द्र बोला—"पन्द्रह दिन बाद तुम्हें आश्रम में रहना चाहिये मोतीबाई।"

श्याम ने मुसकरा कर पूछा—"बोलो बाई, योगिनी बनने की इच्छा है या नहीं?"

नरेन्द्र बोला—"यह मेरा अनुरोध है, तुम-सी समझदार स्त्रियों को आश्रम में अवश्य पहुंचना चाहिये।"

मोती को अनुरोध की बात सुनकर नहीं लगी। कदाचित उसे हुक्म में आनन्द मिला। जब नरेन्द्र ने अनुरोध की बात कही, उसका उल्लास गिर गया। इतने में मिठाई आयी, और तीनों खाने लगे।

खाते हुए श्याम ने पूछा—"हां, क्या निश्चय किया मोतीबाई। आज की रात में सोच लेना। कुछ दिन के लिये तुम्हें अवश्य आना चाहिये। फिर तो मैं तुम्हें भाभी कह ही लूंगा।"

बहुत दिन के बाद, आज फिर 'भाभी' के नाम पर मोती के गालों पर लाली दौड़ आयी। वह उत्तर में केवल मुसकरा भर दी।

# पच्चीसवाँ-परिच्छेद

धारा सभा में देश से वेश्या वृत्ति को हटाने का प्रस्ताव रक्खा गया। जिस दिन प्रस्ताव पर वोट लिये जाते थे, अपने मित्रों के साथ नरेन्द्र भी दर्शक-गैलरी में बैठा था। जिस समय प्रस्ताव के विरुद्ध और समर्थन में लोग बोल रहे थे, नरेन्द्र की इच्छा होती थी, वह उठ कर चला आये। किन्तु, उसके लिए सब-कुछ सुन लेना आवश्यक था। इतने में एक महाशय ने उठ कर कहा—"वेश्या-वृत्ति, जहाँ देश के लिए एक श्राप है, वह देश की वर्त्तमान स्थिति को देखते हुये उठायी भी नहीं जा सकती!...यह वृत्ति जिस दिन देश से समूल नष्ट हो जायगी, उस दिन देश के घरों में चकले नजर आयेंगे। व्यभिचार बढ़ेगा। और देश में फिर एक ऐसा वातावरण पैदा होगा, जिसकी देश अभी कल्पना भी नहीं कर सकता!"...

उनके बैठते-ही प्रस्तावक महोदय बोले—"हम इसे पुरुष-जाति की मनोवृत्ति की कमजोरी के अतिरिक्त और कुछ नहीं कह सकते। केवल अपने स्वार्थ को लक्ष करके ही, हम वेश्या-वृत्ति के विरुद्ध होते हैं। यदि देश में इस वृत्ति का सूत्रपात न होता, तो न तो यह शंका ही उठती, और न, इतना पाप और व्यभिचार ही फैलता। हमारे सामने जब बनी बनायी स्त्रियाँ आती है, तभी हम उसकी ओर झुकते हैं। तभी कल्पनाओं का भी विस्तार बढ़ता है। हम, इस वृत्ति को केवल श्राप कह कर ही नहीं छोड़ सकते, हमें स्मरण रखना चाहिये, वह देश के नारी-समाज के लिए भारी कलंक है। जिसका उत्तर-दायित्व पुरुषों पर है। जो नारी बाजार में बैठ कर अपनी जीविका चलाती है, वह न केवल अपने जीवन से च्युत होती है, अपितु, एक वेश्या के द्वारा अनेकों व्यक्ति कामुक बन कर, कर्महीन और जीवनहीन बन जाते हैं। इस वृत्ति ने समाज की जड़ में ऐसे कीड़े छोड़ दिये हैं, जो दिन-पर-दिन समाज खोखला करता आ रहा है!"...

इसके बाद वोट लिए गये। और एक वोट से प्रस्ताव गिर गया।

प्रस्तावक महोदय ने फिर कहा—"आज धारा सभा में एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हो पाया, यह देश के लिये दुर्भाग्य की बात है। यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत होता, तो निःसन्देह, हम एक महान् पुण्य के भागी बनते।"

इस घटना के एक सप्ताह बाद-ही, नरेन्द्र ने लम्बे प्रवास के लिये तैयारी की। आश्रम के मन्त्री का भार प्रोफेसर को सौंपा। तब एक दिन सब मित्रों से बिदा लेकर वह बाहर के लिये चल पड़ा। लगभग चार मास तक वह देश के बड़े बड़े स्थानों में घूमता रहा। अन्त में नैनीताल पहुंचा।

नैनीताल में आये नरेन्द्र को दो-तीन मास से ऊपर हो चले। इतने समय में उसे लगा, जैसे उसकी मानसिक स्थिति बहुत-कुछ बदल गयी है। वह एक अध्ययनशील व्यक्ति था। प्रकृति सौंदर्य का वह प्यासा था। किन्तु नैनीताल में उसे जीवन में पहल-पहल अध्यात्मिक-खुराक मिली। पर्वत के एक सूने खन्ड में उसे एक योगीराज मिले, जहां उसने न केवल अपने मानसिक-क्रम को ही बदल दिया, अपितु, उसका शारीरिक और अध्यात्मिक-जीवन भी एक नये सांचे में ढल गया। इस प्रकार उसने प्रवास का साल भर निकाल दिया।

आश्चर्य की बात थी, जो व्यक्ति नित्य अपने प्रवास का विवरण मित्रों को देता, माता-पिता को पत्र लिखता, अब उसने इधर सब बन्द कर दिया। मानो उसने अपनी नयी·दुनिया का निर्माण कर लिया। जो मोह और ममता से दूर की दुनिया थी। अपने इस नये जीवन को लेकर नरेन्द्र, दुनिया से दूर हो, कदाचित ऐसी भावना उसमें एक दिन भी नहीं व्यापी।

नैनीताल में एक दिन नरेन्द्र कहीं से चल आकर जैसे-ही अपने स्थान की ओर जा रहा था तभी उसने एक ओर से दर्द भरा स्वर सुना। आह सुनी, और उसी के साथ उठती हुई तड़पन। स्वर सुन कर उसने देखा, पास ही एक आदमी पत्थर पर पड़ा, उसी की तरफ देख रहा है। नरेन्द्र वहां पहुंचा। पास जाकर उसने सुना—"बाबू, मैं मर रहा हूं!"...

यह सुन कर नरेन्द्र एक बारगी उसकी ओर झुका।

वह आदमी मुश्किल से मुंह खोल कर बोला—"मैं भूखा हूं।"

नरेन्द्र ने देखा यह सूखा डेढ़ हड्डी का कंकाल व्यक्ति!... तब जेब से पांच रुपये का नोट निकाल कर उसकी ओर बढ़ा दिया। और वह आगे बढ़ा ही था, कि उस व्यक्ति ने फिर पुकारा—"बाबू!"...

यह सुन कर नरेन्द्र ने उसको देखा। वह व्यक्ति बोला—"काश, यह तुम जान पाते!"...वह बात पूरी करने से पहले ही रो पड़ा। और क्षणिक रुकने के बाद ही उसने सामने की ओर इशारा करके कहा—उसकी ओट में जाकर मेरा पाप भी देखते जाओ, बाबू!"...कहते उसने अपने सिर को पत्थर के ऊपर डाल दिया।

नरेन्द्र जब उस ओर गया, तो वह एक बारगी कांप गया। उसने देखा, वह एक युवती की देह थी।—प्राणहीन देह! जिसके कई स्थान से रुधिर फूट गया था। जो अब सूख कर, मक्खियों को चाटने के लिये शेष था। उस मृत-विक्षिप्त देह को देख कर, उसे तुरन्त स्मरण हो आया—"ओ', यह लड़की! मैंने यह चवन्नी के यहां देखी थी—महा चंचल और हंसोड़ लड़की!......"

वह यह सब जानने के लिए फिर उस आदमी के पास लौटा। किन्तु देखा, उसने अपना सिर फोड़ लिया है, और अपने अन्तिम सांस को तोड़ चुका है। नरेन्द्र का दिया पांच रुपये का नोट, शिला पर एक ओर पड़ा था। कुछ देर खड़े-खड़े नरेन्द्र ने विचारा, इस पुरुष के साथ कौनसा पाप सम्बद्ध था। तभी उसकी बांह पर पढ़ा—"सोहन।"

हां, यह सोहन था। वही सोहन। हमारा प्रारम्भ का पूर्व परिचित सोहन। जो अगाध कमाई करके भी इस शून्य खंड पर बिखर गया है। आज विश्व में उसका कोई अस्तित्व नहीं रह गया था। वह कुछ समय हुआ चवन्नी के यहां से इस लड़की को भगा लाया था। बेचारा सोहन!......

नरेन्द्र ने पुलिस में इन दोनों की सूचना दी, और अपने स्थान पर जाकर उसने अखबार के ऊपर ही समाचार पढ़ा—"सेवा-आश्रम की

दो सौ लड़कियों ने देश-सेवा के लिए, अपने नाम सेवार्थियों की सूची में लिखा दिये हैं।"

जो नरेन्द्र अभी कुछ समय पूर्व खिन्न और दुःखी हो गया था, इस समाचार को पा वह हर्षसे खिल उठा। और उसी दिन उसने नोकर को सामान बांधने की आज्ञा दी। दूसरे दिन प्रातः ही वह अपने साल भर से ऊपर के प्रवास को समाप्त करके घर की ओर लौटा। घर आकर जो उसे पहली खबर मिली, वह थी उसकी मा की मृत्यु और मोती के कहे पर एक वेश्या लड़की से श्याम के विवाह की बात। मानो इतने दिन बाद जहां उसका घर बदल गया था, बाहर भी वैसा ही हो गया था।

# छब्बीसवां-परिच्छेद

अपने लम्बे प्रवास के बाद, नरेन्द्र को लगा जैसे सृष्टि-क्रम बहुत कुछ बदल गया है। यह तो उसे स्पष्ट जान पड़ा, वह जिस सृष्टि को छोड़ कर चला गया था, वह घट नहीं गयी है, अपितु उसमें और विशेषतायें आ लगी हैं। उसी दिन श्यामबाबू को नरेन्द्र के आने की खबर मिली।

एकाएक श्याम को अपने सामने देखकर नरेन्द्र श्याम की ओर बढ़ा क्षण-भर के लिए दोनों एक दूसरे के गले से मिल गये। कुर्सी पर बैठ कर श्याम बोला—"कब आये?"

"रात।—और तो कुशल है ना?"

श्याम ने लापरवाही से कहा—"हां, सब ठीक है। घर से अलग हो ही चुका हूं, यह शायद तुमने सुना होगा। एक दफ्तर में साठ रुपये की नौकरी कर ली है। हम-दोनों के लिए पर्याप्त है। माता-पिता के प्रति मैं स्वयं अपने कर्तव्य को नहीं भूल जाऊंगा, इसका मुझे विश्वास है। मैं उनका पुत्र हूं। मुझे उनका स्नेह चाहिए। धन तो उनका भी सहायक नहीं कहा जा सकता। उनका स्नेह भी मुझ पर से नहीं मिट जायगा, इसका मुझे भरोसा है। नित्य मा के चरण छू आता हूं।"

नरेन्द्र ने श्याम की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। आज उसने

जीवन में पहले-पहल यह जाना, वह मेरे सामने बैठा हुआ श्याम, कितना महान कार्य कर चुका है। पूछने लगा--"मोतीबाई का क्या हाल है ?"

श्याम ने कहा—"दुखनीबाई का स्वर्गवास हो चुका है। जिसके धन की उत्तराधिकारिणी मोतीबाई है। जायदाद और नकद धन साढ़े तीन लाख आंका गया है। मोतीबाई की इच्छा है, वह अपनी तमाम सम्पत्ति, और अपने को आजीवन आश्रम की भेंट कर दें। परसों उन्होंने मुझे अपना भरा हुआ फार्म दिखलाया था। किन्तु, मेरी इच्छा थी, इस कार्य के सम्पादित होते समय तुम भी हो। वैसे तो इस प्रकार के कई फार्म भरे जा चुके हैं। जो कि अब आश्रम के पास एक करोड़ से अधिक धन हो गया है।"

"किन्तु इसमें मेरे रहने की क्या आवश्यकता थी ?"

यह सुन कर श्याम ने नरेन्द्र की ओर देखा। वह बहुत दिन के बिछुड़े मित्र से बातें कर रहा था। अभी पहले की तरह नहीं खुल गया था। वैसे तो इधर स्वयं उसमें भी परिवर्त्तन आ गया है। बोला—"तुम मोतीबाई के हृदय से अभी परिचित नहीं हुये हो नरेन्द्रबाबू ! उस नारी का बड़ा विशाल हृदय है। वह तुम्हारी तरह इतनी कठोर नहीं बन सकती, कि अपने लम्बे प्रवास में जाकर किसी को खबर तक भी न दे। ओह, तुमने न केवल मोती के साथ, बल्कि हम लोगों के साथ भी बुरा किया है, नरेन्द्रबाबू ! खैर, मोती ने बहुत चाहा, तुम आओ और वह तुमसे विवाह करके गृहस्थिन बने। मैं तुम्हें बताऊं, अब आश्रम में देश के अनाथ-शिशु पलने के लिए आते हैं। उनके दूध का प्रबंध भी आश्रम से ही होता है। मोती ने एक शिशु को पालने का काम ले लिया है। उसका अब दिन भर का काम है, उस बच्चे को खिलाती है, और उससे स्वयं खेलती है। एक दिन उसने स्पष्ट कहा था, मुझे जीवन में जो पाना था, वह मैं पा चुकी हूं। यह बच्चा मेरे हाथों से पले, इससे अधिक मुझे जीवन में और कोई सुख नहीं मिलेगा।"

इतने में प्रोफेसर और रिपोर्टर के यहां भेजा हुआ नौकर लौट आया

जो श्याम के आने से पहले भेजा गया था। उसने आकर कहा--"वे घर नहीं हैं, पत्र दे आया हूं। दोनों के घर से आपको नमस्ते कहा है।"

नरेन्द्र ने कहा—"आज मैं तुम्हारे साथ आश्रम चलूंगा श्याम-बाबू।" उसमें उल्लास फूटा पड़ रहा था, जिस आश्रम को छोड़ कर वह चला गया था, वह देखे, आज कितना बड़ा हो गया है।

श्याम बोला-"मैं दो घंटे बाद आऊंगा। आज संध्या का भोजन तुम्हें मेरे यहां करना होगा।"

नरेन्द्र ने कुर्सी से उठ कर कहा—"अच्छा।"

श्याम के जाने पर, जब नरेन्द्र कमरे में अकेला रह गया, तो अपने-आप बोला—"क्या सचमुच ही मोती अपने को आजीवन के लिये आश्रम को दे देगी। उसे नहीं सूझ पड़ा, जो मोती उसके निकट थी, वह आज दूर कितनी हो गयी है। क्या, मोती जान-बूझ कर, अपने को आश्रम के हाथों में सौंप रही है? नहीं, वह इस ओर से उदासीन होकर, अन्तिम लक्ष को पा रही है। —मेरी अक-र्मण्यता पर रोकर-ही, उसने इस मार्ग का अवलम्बन किया है! उस क्षण एकाएक नरेन्द्र खिन्न और उदास हो गया।

सन्ध्या को श्याम ने आकर कहा—"आओ चलो, रिपोर्टर और प्रोफेसर, मेरे-ही घर आ रहे हैं। शायद दोनों की श्रीमतीजी भी आयें। अब दोनों की सूनी गोदें भर गयी हैं। रिपोर्टर एक लड़के का पिता है। और प्रोफेसर की श्रीमती एक कन्या की माता बन गयी हैं।"

जब श्याम, नरेन्द्र को लेकर अपने घर पहुंचा, तो उसने देखा, प्रोफेसर और रिपोर्टर पहले-ही आ बैठे हैं। नरेन्द्र दोनों से मिला। भीतर घर में दोनों की श्रीमती, भोजन बनाती हुई श्याम की स्त्री का हाथ बंटा रही थीं। नरेन्द्र के आने की खबर पाकर प्रोफेसर की पत्नि बाहर आयीं, और आते-ही नरेन्द्र को नमस्ते करके बोली—"आप तो हमें भूल ही गये, नरेन्द्र बाबू।"

नरेन्द्र ने यह सुन कर केवल मुसकरा भर दिया।

फार्म पर हस्ताक्षर किये और आश्रम के बाहर हो रहा। उसी रात को नरेन्द्र ने अपने मित्रों को पत्र लिखे और दूसरे दिन के प्रातः में ही घर का ताला बन्द करके चला। रिपोर्टर, प्रोफेसर और श्याम अपनी स्त्रियों के साथ पहिले ही स्टेशन पहुँच गये थे। उस समय श्याम की आँखों में आँसू आ गये थे। नरेन्द्र ने श्याम को थपथपाते हुये कहा—"मैं शीघ्र ही आऊंगा, श्यामबाबू।" इसके बाद उसकी रेल चल पड़ी।

इसके दूसरे दिन ही आश्रम की मासिक मीटिंग होने को थी। प्रोफेसर ने प्रस्ताव रखा, चूंकि इस आश्रम की स्थापना में नरेन्द्रबाबू का प्रमुख हाथ था, जो यह उन्हीं की प्रेरणा का फल है। अब वह हम से दूर हो गये हैं। वह संन्यासी हो गये हैं। इसलिये स्मारक रूप में उनकी आश्रम के आंगन में पत्थर की मूर्ति स्थापित की जाय।

जब लगभग दो-तीन मास बाद मूर्ति का प्रतिष्ठापन हुआ तो उस दिन नगर के प्रमुख व्यक्ति सम्मिलित हुए थे। श्याम के पिता भी आये थे। जब वह चलने लगे, तो वह श्याम को बुला कर बोले—"गाड़ी में बहू को बैठाओ श्याम, घर चलो।"

श्याम कैसे आपत्ति करता। वह बहू को लेकर मा के सामने पहुंचा। श्याम के पिता ने कहा—"मैं तुम्हारे बहू-बेटे को ले आया हूं, श्याम की मा।"

मा बहू को अपने पास बैठा कर बोली—"आखिर मा से बहू-बेटे कब तक दूर रहते। एक दिन तो आना ही था।"

किन्तु आश्रम में स्थापित नरेन्द्र की मूर्ति के पास मोती प्रायः आकर बैठती। और वहीं अपने बच्चे को खिलाती हुई प्रायः तस्वीर की ओर उंगली उठा कर बच्चे से कहती—"अरे यह ऐसे हैं, ऐसे!"……

एक दिन एक लड़की ने उससे पूछा—"तुम इन्हें बहुत देखती और मानती हो, मोती।" तो मोती ने उसी समय कहा—"यह मेरे पति हैं। जो अब हमसे दूर हो गये हैं!"……

फिर ये जीवन में एक-दूसरे से नहीं मिल सके।—

❀ शुभम् ❀